॥ श्रीः ॥

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

९४

नगरीय समाजशास्त्र

लेखक

कौशलकुमार राय

चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी-१

॥ श्रीः ॥

विद्याभवन राष्ट्रभाषा ग्रन्थमाला

९४

नगरीय समाजशास्त्र

लेखक

कौशलकुमार राय एम. ए.

चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी-१

१९६६

THE
VIDYABHAWAN RASTRABHASHA GRANTHAMALA
94
*****

NAGARĪYA SAMĀJAŚĀSTRA

(Urban Sociology)

by
KAUSHAL KUMAR RAI, M. A.

THE
CHOWKHAMBA VIDYA BHAWAN
VARANASI-1
1966

प्राक्कथन

प्रो० राजाराम शास्त्री

आचार्य

समाज विज्ञान विद्यालय, काशी विद्यापीठ, वाराणसी

ग्राम सभ्यता की अवस्था से नगरों का विकास सभ्यता की अगली मंजिल की ओर संकेत करता है। प्रश्न यह है कि नगर समाज का आधारभूत तत्त्व क्या है—आर्थिक केन्द्रीकरण अर्थात् व्यापार एवं उद्योग अथवा राजनीतिक एवं सैनिक केन्द्र स्थापन ? हर अवस्था में गमनागमन की सुविधा और यातायात के मार्गों का संगम एक आवश्यक भौगोलिक आधार होता है जिस पर विभिन्न स्थानों के मनुष्यों का एकत्रीकरण होता है चाहे वह आरम्भ में किसी भी कारण से हो। राजनीतिक केन्द्रों में तो व्यापार एवं कला-कौशल का केन्द्रीकरण होता ही है और व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्रों में भी राजनीतिक अथवा प्रशासनिक केन्द्रों का विकास आवश्यक रूप से हो जाता है। मुख्य बात यह है कि किसी एक क्षेत्र में स्थित ग्राम में जिस प्रकार की समरसता होती है, नगरों में उससे सर्वथा भिन्न चित्र दिखाई देता है। अनेक भौगोलिक परिस्थितियों के निवासी जब नगर में एकत्रित होते हैं तो उनकी एकरूपता को एक बड़ी चुनौती मिलती है, साथ ही साथ दीर्घकाल से चली आ रही उनकी जीवन विधि की स्थिरता भी संकट में पड़ जाती है।

नगर विविधता और प्रगति के केन्द्र होते हैं। अनेक प्रकार की प्रतिभाओं के मेल से जीवन की गति में जो तेजी आती है और सुरक्षा तथा सुख-समृद्धि का जो विकास होता है, उसकी कीमत मनुष्य को इस रूप में चुकानी पड़ती है कि उसे अपने अभ्यासों और रूढ़ियों को जल्दी-जल्दी बदलते रहना होता है तथा दूसरों के साथ अपने दृष्टिकोण की बराबर संगति बैठाते रहना पड़ता है। संक्षेप में, नगर अधिक बहिर्मुख और परिवर्तनशील एवं कम आत्म-केन्द्रित तथा स्थिर होते हैं।

नागरिक चित्त अधिक द्वन्द्वात्मक होता है क्योंकि उसे बराबर 'स्व' और 'पर' तथा 'भूत' और 'वर्तमान' के अन्तर्विरोध का सामना करते रहना पड़ता है। इन विरोधों का समाधान वह नये-नये समन्वयों के द्वारा करता है, इसलिए वह अधिक समन्वयी भी होता है। द्वन्द्व और समन्वय तथा फिर द्वन्द्व और नया समन्वय यह नागरिक चित्त एवं जीवन विधि की विशेषता है और यही उसका

महत्व है। जो व्यक्ति दूसरों के दृष्टिकोणों का अनुमान करके अपने व्यवहार को उसके अनुकूल नहीं बनाता, वह नागरिक कहलाने का अधिकारी नहीं है। सूक्ष्मतापूर्वक दूसरों का लिहाज करना ही शील की परिभाषा है। यही कारण है कि जिसका व्यवहार ऐसा होता है जो दूसरों के लिए असुविधा उत्पन्न करे, उसे प्राकृतजन और जो दूसरों के साथ अर्थात् सभा में बैठने योग्य होता है, उसे सभ्य एवं सुसंस्कृत कहते हैं।

कहा जाता है कि गाँव में पारिवारिक भावना, अपनापन और पड़ोसियों के साथ भी निजत्व की भावना और व्यवहार में अधिक घनिष्ठता होती है। यह ठीक है किन्तु नगर का सौजन्य इस ग्रामीण ममता से उत्कृष्ट स्थान रखता है क्योंकि ग्रामीण समूह प्रत्यक्ष एवं निकट संपर्कों पर आधृत होने के कारण स्वभावतः अधिक आत्मीय होता है। आरंभ के गाँव तो एक ही नस्ल के लोगों से बसे थे। आगे चल कर यह बात नहीं रही। फिर भी पड़ोस का संबंध और एक बहुत ही बन्द दायरे में श्रम-विभाजन की अन्योन्याश्रितता परिवार की सी ही घनिष्ठता उत्पन्न करती है। इसकी अपेक्षा बिल्कुल नये लोगों से जिनसे कभी भी जान-पहचान न हो और आत्मीयता की भावना विकसित होने के लिए कोई स्वाभाविक अवसर न मिला हो, सौजन्य का व्यवहार करना मानव चरित्र को एक कदम आगे ले जाना है। परिवार और पड़ोसियों के बिना तो हमारा काम ही नहीं चल सकता। इनके साथ आत्मीयता हुई तो कोई विशेष बात नहीं हुई। भद्र पुरुषोचित व्यवहार तो वहाँ आरंभ होता है जहाँ इस प्रकार की एकता का आधार नहीं है। ग्रामीण चित्त तो ऐसी स्थिति में सशंक और विरोधात्मक व्यवहार ही करता है जैसा कि आदिम समाज में जन-जातियाँ एक-दूसरे के साथ करती थीं। नागरिक चित्त की यह विशेषता है कि वह इस जन-जातीय विरोध से ऊपर उठ कर अपरिचितों एवं असंबद्धों से भी अविरोधी एवं मैत्रीपूर्ण व्यवहार करता है और इस प्रकार मानव मात्र में मैत्री-भाव की स्थापना करता है। नगर की यही विशेषता उसे गाँव से ऊपर उठाती है और इसलिए 'नागरिक' शब्द सुसंस्कार एवं 'ग्रामीण' शब्द असंस्कार का बोधक हो जाता है। नगर की जीवन-विधि एवं मनोवृत्ति की इस विशेषता से परिष्कृत होने की क्रिया का नाम ही नागरीकरण (Urbanism) है जिसके मुकाबले में ग्रामों से आने-वाले लोगों के नगरों में एकत्र होने मात्र की क्रिया को नगरीकरण (Urbanisation) कहते हैं।

स्पष्ट है कि नगरीकरण उन्हीं कारणों से बढ़ता है जिनसे नगरों का निर्माण हुआ था। राजधानियों और उद्योग-केन्द्रों में चारो तरफ से आकर लोगों का एकत्र होना स्वाभाविक है जहाँ उन्हें जीविकोपार्जन की सुविधाएँ मिलती हैं

और साथ ही साथ उनकी शिक्षा, कला, मनोरंजन, प्रगति आदि की आकांक्षाएँ भी तृप्त होती हैं। इस अर्थ में नगरीकरण और औद्योगीकरण का आज के युग में बड़ा घनिष्ठ साहचर्य है। किन्तु क्या नागरीकरण भी औद्योगीकरण के साथ-साथ चलता है? नियमानुसार तो होना यही चाहिए। जब मानवीय विभिन्नताएँ बढ़ेंगी तो उनका समन्वय भी पहले से बड़ा समन्वय होगा और मनुष्य की प्रगतिशीलता को कई कदम आगे बढ़ायेगा, साथ ही साथ मनुष्यता के क्षेत्र को भी विस्तृत करेगा। हमने शील, सौजन्य, भद्रता और संस्कृति की यही परिभाषा की है। इस अर्थ में औद्योगीकरण के साथ नगरीकरण और नगरीकरण के साथ नागरीकरण को भी बढ़ना ही चाहिए। किन्तु वस्तु-स्थिति में विरुद्ध गति भी दिखलाई पड़ती है। आजकल के बड़े-बड़े शहरों में जो औद्योगीकरण के कारण बढ़े हैं, मानव गुणों का ह्रास ही अधिक दिखाई देता है और वहाँ चारित्रिक विकृतियों का ही बोलबाला है। यह विरोध कैसे उत्पन्न होता है? इसका कारण यही प्रतीत होता है कि नगरीकरण और नागरीकरण में काल का गति-वैषम्य होता है। जितनी तेज़ी से आज के यंत्र-युग में औद्योगीकरण के साथ-साथ भौतिक स्तर पर नगरीकरण हो रहा है, उतनी तेज़ी से मानसिक स्तर पर लोकचित्त का विकास स्वभावतः नहीं हो सकता। संस्कार परिभाषा से ही काल-साध्य होते हैं। चित्त और चरित्र का परिमार्जन एक दिन में नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त, जहाँ गाँव में मानव संबंध घनिष्ठता के आधारों पर प्रतिष्ठित थे, वहाँ नागरिक मानव संबंध सामाजिक व्यवस्था के आधारों पर प्रतिष्ठित होते हैं। आरंभ में जब नगरों का निर्माण हुआ होगा तो एकत्र संपत्ति की रक्षा के लिए प्रशासनिक एवं सामाजिक व्यवस्था नितान्त आवश्यक रही होगी। इस व्यवस्था द्वारा प्रदत्त सुरक्षा के अन्तर्गत ही नागर संस्कृति एवं जीवन-विधि का विकास हुआ होगा।

आधुनिक युग में औद्योगीकरण की एवं उसका अनुसरण करते हुए नगरीकरण की अत्यन्त तीव्र गति के कारण जनमानस का सामंजस्य उसके साथ होने में ही कठिनाई उपस्थित नहीं होती है अपितु प्रशासनिक एवं सामाजिक व्यवस्था भी इतनी शीघ्रता से नहीं हो पाती। प्रशासनिक एवं सामाजिक अव्यवस्था की स्थिति में सुरक्षा, असुरक्षा के रूप में परिवर्तित हो जाती है और असुरक्षा की स्थिति में मानव गुणों का विकास असंभव है। यही कारण है कि आज के शहरों में अपराध, शारीरिक और मानसिक रोग, पतन एवं निराश्रितता की समस्या बड़े उत्कट रूप में प्रकट होती है क्योंकि नगरों के विकास में जिन तत्त्वों ने योग दिया था, उन तत्त्वों का ही अभाव होने से आज का नगरीकरण नागरीकरण को उत्पन्न न करके प्राकृतीकरण को

उत्पन्न करता है और मात्स्य न्याय के निकट पहुँच जाता है। यह विरोध औद्योगीकरण और नागरीकरण के गति-वैषम्य के कारण ही उत्पन्न होता है और यदि यह निदान सही है तो फिर इस रोग के उपचार की दिशा भी स्पष्ट हो जाती है।

औद्योगिक केन्द्रीकरण को विकेन्द्रित करना एक उपाय हो सकता है। इसके अतिरिक्त, नगरों में एकत्र होने वाली जनसंख्या को वहाँ पर सीमित करना होगा जहाँ तक उसके निवास, जीवन एवं सुरक्षा की समुचित व्यवस्था हो सके। सुरक्षा भी केवल जीवन एवं संपत्ति की रक्षा तक ही सीमित नहीं है। सुरक्षा का सबसे आवश्यक रूप तो यह है कि मनुष्य भविष्य की विपत्ति एवं असहायता की आशंका से मुक्त हो और उसे संकट की स्थिति में सामाजिक सहायता का आश्वासन प्राप्त हो। साथ ही साथ, उसे अपने नये पड़ोस और समाज में कम से कम उतनी आत्मीयता प्राप्त हो जिसे हमने नागरिक सौजन्य का नाम दिया है और जिसके घनिष्ठ रूप को वह अपने पुराने निवास स्थान में छोड़ आता है। इस प्रकार का आत्मीय संबंध विकसित हुए बिना चरित्र का निर्माण नहीं हो सकता और न उसे वह पारस्परिकता का आधार प्राप्त हो सकता है जिस पर मानव संबंधों का विकास होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि ग्राम समुदाय के स्थान पर नगर में उसे एक नया समुदाय प्राप्त होना चाहिए। वही उसे भावात्मक सुरक्षा प्रदान कर सकता है जिससे वह निश्शंक और आश्वस्त होकर पारस्परिक विश्वास के आधार पर अपने जीवन को उत्साहपूर्वक अग्रसर कर सकता है। यह भावात्मक सुरक्षा ही सुरक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप है और इसके अभाव से ही चारित्रिक पतन की उपर्युक्त घटनाएँ नागरिक जीवन को कलंकित करती हैं। सारांश यह कि नागरीकरण के साथ नगरीकरण के विकास के लिए नागरिक सामुदायिक विकास योजना आवश्यक है।

इस विषय से संबद्ध अनेक समस्याओं का निदान और उपचार पाठकों को प्रस्तुत पुस्तक में मिलेगा जिसे श्री कौशलकुमार राय ने हिन्दी में पाठकों के सम्मुख पहली बार उपस्थित किया है। विषय की नवीनता और आज के राष्ट्रीय जीवन की इस प्रमुख समस्या के महत्व को देखते हुए हमें लेखक के प्रति आभारी होना चाहिए कि उसने इस संक्रमणकाल में यह अध्ययन प्रस्तुत करके एक प्रशंसनीय सेवा प्रदान की है। मुझे विश्वास है कि हिन्दी के पाठकों और राष्ट्रीय समस्याओं से उलझने वाले जिज्ञासुओं एवं समाज-सेवकों के लिए यह पुस्तक एक आवश्यक सहायता के रूप में गृहीत होगी।

आमुख

औद्योगीकरण और नागरीकरण की निरन्तर बढ़ती हुई प्रक्रिया ने स्थिर समाज को गतिशील बना दिया है जिससे नगरीय प्रतिमानों में परिवर्तन आ गया है। नित्य नूतन प्रतिमानों की प्रस्थापना होती जा रही है जिसके फलस्वरूप नगर विद्वानों के अध्ययन क्षेत्र का केन्द्र-बिन्दु बन गया है। आज प्रायः सभी विश्वविद्यालयों में नगरीय समाजशास्त्र का, जो अभी शैशवावस्था में है, पठन-पाठन आरंभ हो गया है। लेकिन इस विषय पर अभी हिन्दी में स्नातकोत्तर स्तर पर कोई प्रामाणिक पुस्तक प्रकाश में न आने से उसके मूलभूत सिद्धान्तों और नगरीय समस्याओं के अध्ययन में कठिनाई हो रही है। आंग्ल भाषा में इस विषय पर अनेक पुस्तकें हैं। हिन्दी में अभी तक जो दो-एक पुस्तकें सामने आई हैं उनमें नगर का सुव्यवस्थित और यथेष्ट वर्णन नहीं है, अतः विद्यार्थियों की आवश्यकता पूर्ति नहीं हो पाती। इसी अभावपूर्ति के हेतु प्रस्तुत पुस्तक की रचना प्रायः सभी विश्वविद्यालयों, विशेषतया काशी विद्यापीठ, के पाठ्यक्रमानुसार की गयी है।

हमारी वर्तमान सभ्यता, संस्कृति और विचारों पर पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट है। हम कोई भी तर्क या सिद्धान्त उस समय तक प्रामाणिक नहीं मानते जब तक उस पर पाश्चात्य विद्वानों की मुहर नहीं लग जाती। अतः प्रायः सर्वत्र ही प्रमुख पाश्चात्य विद्वानों के मान्य उद्धरणों और विचारों का प्रतिपादन करके पुस्तक को उपयोगी और बोधगम्य बनाने की चेष्टा की गयी है। लेखक ने पुस्तक की रचना प्रायः भारतीय पृष्ठभूमि में ही करने का प्रयत्न किया है और इसीलिए उसने नवीनतम उपलब्ध सामग्रियों, आत्म-निरीक्षणात्मक अनुभवों और अन्वेषणों का प्रयोग तथा निजी विचारधारा का भी प्रतिपादन किया है।

पुस्तक लेखन में मुझे अनेक पाश्चात्य विद्वानों की कृतियों से मदद मिली है। अंतिम अध्याय लिखने में मुझे अपने गुरु श्री जोगेन्द्रसहाय, और अन्य सामग्री संग्रहण में अपने अभिन्न मित्र श्री धीरेन्द्रकुमार श्रीवास्तव से पर्याप्त सहायता मिली है जिसके लिए मैं इन सबका आभारी हूँ।

पुस्तक के प्रकाशन और मार्गदर्शन में मुझे सर्वाधिक सहायता अपने अग्रज और मनोविज्ञान तथा संस्कृत पुस्तकों के प्रणेता डा० रामकुमार राय से मिली है। उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन मात्र धृष्टता होगी।

इसके अतिरिक्त, मेरे गुरू और समाजशास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर राजाराम शास्त्री ने अपनी व्यस्तता के बावजूद पुस्तक की भूमिका लिख कर मेरा जो उत्साहवर्द्धन किया है, उसके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

अन्त में, मैं अपने प्रकाशक—चौखम्बा विद्या भवन, के प्रति भी आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ क्योंकि उन्हीं की तत्परता के कारण पुस्तक शीघ्र ही प्रकाश में आ सकी है।

पुस्तक की त्रुटियों की तरफ ध्यानाकर्षित करने वाली सर्वसम्मतियों का लेखक सहर्ष स्वागत करेगा।

१-१-६६
जगतगंज, वाराणसी

कौशलकुमार राय

विषय सूची

नगरीय समाजशास्त्र

अध्याय १

नगरों की उत्पत्ति एवं विकास

(Origin and Development of Cities)

नगरों की उत्पत्ति कब हुई, कहाँ हुई, और कैसे हुई, इसका ठीक-ठीक पता नहीं लग सका है। इसकी उत्पत्ति का इतिहास भूतकाल के गर्भ में छिपा हुआ है। उत्पत्ति के संबंध में कोई एक निश्चित तिथि नहीं बतायी जा सकती। इसकी अनिश्चितता के संबंध में गिस्ट और हालबर्ट (Gist & Halbert) ने लिखा है : "सभ्यता की उत्पत्ति के समान ही नगर की उत्पत्ति भी भूतकाल के अंधकार में खो गयी है।"[1]

चूंकि ५००० वर्ष पूर्व तक मनुष्य खानाबदोशों की भाँति इधर से उधर घूमता था इसलिए लोग यह अनुमान लगाते हैं कि उस वक्त मनुष्य का कोई एक निश्चित एवं स्थायी निवास स्थान न था। वे लोग भोजन-वस्त्रादि की खोज में एक स्थान से दूसरे स्थान को भ्रमण किया करते थे। इन लोगों को हम आदि मानव के नाम से संबोधित कर सकते हैं। इन लोगों के घुमक्कड़ होने के संबंध में यह तर्क दिया जाता है कि चूंकि स्थान और क्षेत्र सीमित थे इसलिए वे कहीं एक जगह स्थायी निवास नहीं बना पाते थे। इसके अतिरिक्त, एक तर्क और दिया जाता है कि जो अतिरिक्त जनसंख्या होती थी, वही भोजन की खोज में एक-दूसरे स्थान को जाती थी। लेकिन इन दोनों तर्कों के मानने का कोई निश्चित आधार नहीं मिलता।

इन प्रारम्भिक दिनों में मनुष्य सिर्फ भोजन की ही खोज करता था। चूंकि एक ही स्थान पर काफी मात्रा में खाद्य-सामग्री नहीं मिल पाती थी, इसलिए लोग एक स्थान से दूसरे स्थान को भ्रमण करते थे और यह आव-

---

1. "Like the origin of civilization itself, the origin of the city is lost in the obscurity of the past" Gist and Halbert : Urban Society, p. 16

श्यक भी था। इसके अतिरिक्त, पशु भी जलवायु के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान को चले जाते थे जिससे शिकारियों को भी अपने शिकार की खोज में जगह-जगह भटकना पड़ता था।

जब मनुष्य ने पेड़-पौधों की रक्षा करने की विधि का पता लगा लिया अर्थात् कृषि-युग का प्रारम्भ हुआ, तभी हम देखते हैं कि मनुष्य ने एक स्थान पर रहना सीखा। पाषाण युग (Stone Age) की समाप्ति पर ही व्यक्ति ने पौधों की खोज की। इसे गारडन चाइल्ड (Gor dan Childe) ने पाषाणयुगीन क्रांति (Thc Neolithic Revolution) कहा है। जब मनुष्य ने एक बार कृषि को अपना लिया तो वे अपने खेतों के निकट रहने लगे। हम लोग वास्तव में सर्वप्रथम स्थायी मनुष्यों का निवास पाषाण-युग में ही पाते हैं। ग्रामीण सभ्यता का अभ्युदय नवीन पाषाण युग में हो गया था। गाँव एक कृषि समुदाय था जिसकी आबादी बहुत थोड़ी थी।

नगर की उत्पत्ति

(The Origin of the City)

जिस तरह ग्रामीण सभ्यता का प्रारम्भ कृषि-युग से माना गया उसी प्रकार नगरीय सभ्यता के प्रारम्भ की व्याख्या कुछ विद्वानों ने धातु-युग (Metal Age) से की है। मार्गरेट ए० मरे[1] (Margaret A. Murray) के अनुसार धातु के अस्त्र पत्थर के अस्त्र से अच्छे होते थे। इसलिए धातु के अस्त्र का प्रयोग करने वालों का पत्थर के अस्त्रों का प्रयोग करने वालों पर सैनिक शासन था। पाषाण-युग के कृषक जो यह नहीं जानते थे कि किस प्रकार ताँबा, पीतल, लोहे आदि से अस्त्र-शस्त्र बनाये जाते है, बड़ी आसानी से उन आक्रमणकारियों के शिकार हो जाते थे जो धातु के शस्त्रों से सुसज्जित होते थे। आक्रमणकारी अपने इस विचित्र शस्त्र से विरोधियों को डरा देते थे और उनसे अपनी अधीनता स्वीकार करवा कर उनके ऊपर अपना आधिपत्य जमा लेते थे। आगे चल कर ये कृषक उनके दास हो जाते थे। आक्रमणकारी पहाड़ की चट्टानों अथवा अन्य सुरक्षित स्थानों में अपना निवास स्थान बनाते थे जहाँ से सरलतापूर्वक आक्रमण और शत्रुओं से अपनी सुरक्षा किया जा सके। इस प्रकार हम देखते हैं कि पहले नगर स्थायी सैनिक शिविर के रूप में विकसित हुए जिनकी स्थापना शून्य जनसंख्या वाले क्षेत्रों में होती थी।

---

1. Margaret A. Murray : The Splendour that was Egypt, (1949)

दूसरी तरफ, कुछ विद्वान यह मानते हैं कि पहले नगर प्राचीन ग्राम थे। पहले के जो गाँव थे वे ही धीरे-धीरे विकसित होकर नगर के रूप में बदल गए। इस संबंध में क्वीन और टॉमस (Queen, S. A. & Thomas, L. F.) का मत उल्लेखनीय है। उन्होंने लिखा है—"निःसंदेह वे पहले गाँव के रूप में प्रारंभ हुए जो एक या अन्य प्रकार से दीवारदार नगर के रूप में विकसित हो गए जिसमें से कुछ विशाल साम्राज्यों की राजधानियाँ बनीं।"[1] लेकिन इसका कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता कि सिर्फ जनसंख्या के द्वारा पाषाण-युग के कोई गाँव नगर के रूप में विकसित हो गए। अनेक प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि पहले नगर बहुत बड़े नहीं थे बल्कि वर्तमान गाँवों से भी बहुत छोटे थे। लुटेशिया (Lutetia) और विन्डोबोना (Vindobona) जैसे स्थानों की भूमि इतनी छोटी थी कि सिर्फ पुरोहित, गृहपति, अधिकारी और अभिजात्य वर्ग के रक्षकों को छोड़ कर सैनिक नेता बड़ी कठिनाई से ही घर बसा पाते थे।

मरे (Murray)महोदया विश्वास दिलाती हैं कि प्राचीन इजिप्ट नगर में परिवर्तन का कारण शत्रुओं का आक्रमण था। इसी प्रकार प्राचीन मेसोपोटामिया में सुमेरियनों (Sumerians) ने जो पूर्व दिशा से आए थे, वहाँ रहने वाले पाषाण-युग के कृषकों को जीता और 'उर' (Ur), (संभवतः सब नगरों में सबसे प्राचीन नगर), 'उरूक' (Uruk) और अन्य नगरों का पता लगाया।

यूनानियों (Greeks) ने जो बालकन पेनिनशुला और एशिया माइनर से आए थे, एथेन्स, मिलेटस, (Milatus) और अनेक अन्य प्रसिद्ध नगरों का पता लगाया। रोम देशवासियों ने रोम का पता लगाया। टायर (Tyre), सीडॉन (Sidon) और बिब्लास (Byblos) की स्थापना फोएनिशियन्स के पहुँचने के बाद हुई जो दक्षिणी अरब से आए थे। ये सब उदाहरण यह दर्शाते हैं कि प्रारंभिक नगरों की उत्पत्ति सैनिक आक्रमण के द्वारा हुई न कि प्राचीन ग्रामों के मन्द एवं क्रमिक विकास के कारण।

लेकिन ममफोर्ड (Mumford) महोदय का भी मत है कि नगरों का विकास ग्रामों से ही हुआ है। उन्होंने लिखा है कि आजकल वास्तव में जो नगर दिखलाई पड़ रहे हैं, उनमें से अधिकांश गाँवों में ही निहित थे।[2]

---

1. "No doubt they started as neolithic villages which developed in one way or another into walled citites, some of which became the capitals of great empires." S. A. Queen & L.F. Thomas : The City (1939)

2. "Much of the city was latent, indeed vlsibly present,

इसके अतिरिक्त, नगरों की उत्पत्ति के संबंध में कारपेन्टर[1] (Carpenter, N.) और टर्नर[2] (Turner, R) के विचार भी महत्वपूर्ण हैं।

कुछ विद्वानों ने व्यापार की वृद्धि को भी नगरों की उत्पत्ति के कारणों में से एकमात्र कारक बतलाया है लेकिन यह बात युक्तिसंगत नहीं प्रतीत होती क्योंकि हम देखते हैं कि नगरों की उत्पत्ति के पूर्व भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार किसी न किसी रूप में विद्यमान थे। इसलिए व्यापार को एकमात्र कारक न मान कर नगरों के विकास का एक महत्वपूर्ण कारक माना जा सकता है।

कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि नगरों की उत्पत्ति धार्मिक क्रिया-कलापों के फलस्वरूप हुई। उनका मत है कि पहले कहीं-कहीं वार्षिक मेले लगा करते थे। ये मेले उसी स्थान पर लगते थे जहाँ आसानी से माल लाया और ले जाया जा सकता था। समय के परिवर्तन के साथ इन मेलों की आवृत्तियों की माँग बढ़ी और इस प्रकार वर्ष में सिर्फ एक बार मेला लगने के स्थान पर कई बार लगने लगे। उसका परिणाम यह हुआ कि वह स्थान वस्तु-व्यापार का प्रमुख केन्द्र हो गया और कुछ लोग अपना निवास स्थान बना कर वहाँ रहने लगे। इस प्रकार नगर की उत्पत्ति हो गई।

राजनैतिक सत्ता को भी हम नगर की उत्पत्ति का कारण मानते हैं। प्रारम्भिक नगरों में एक बार राजनैतिक अधिसत्ता स्थापित हो जाने के पश्चात् शासक वर्ग स्थायी रूप से अपना निवास बना कर वहाँ रहने लगे और सैनिक शिविर ही शानदार आवास गृह बन गए। इन लोगों ने अपने पूज्य देवता की याद में मन्दिरों का निर्माण कराया। महलों, मंदिरों, रक्षक-गृहों और कर्मचारियों तथा भंडार के लिए अतिरिक्त भवनों का निर्माण कराया गया। राजा, पादरी या पुरोहित और उनके कर्मचारियों के निकट ही बस्तियों का निर्माण हुआ और इस प्रकार नगरों की उत्पत्ति हुई।

---

in the village : but the latter existed as the unfertilised ovum rather than as the developing embryo; for It needed a whole set of complementary chromosomes from a male parent to bring about the further processes of differentiation and complex cultural development." L. Mumford : The City in History (1961), p. 20.

1. Niles Carpenter : The Sociology of City Life, ch. 1,

2. Ralph Turner : The Great Cultural Traditions, vol. I, ch. III, IV.

नगरों की उत्पत्ति के संबंध में कूले (Cooley) महोदय के 'परिवहन के सिद्धांत' (Theory of Transportation) का भी उल्लेख किया जा सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार नगरों का जन्म यातायात के साधनों के विकास के आधार पर हुआ। जिस स्थान पर इन साधनों के विकास की स्थिति अधिक अनुकूल है वहीं बड़े-बड़े नगर अधिक बसे हुए हैं। इसलिए पहले और आज भी समुद्र के किनारे बड़े-बड़े शहर दिखलाई पड़ते हैं। परिवहन के साधनों के द्वारा ही वस्तुओं का स्थानान्तरण किया जाता है और इस प्रकार के स्थानान्तरण ने नगर स्थापना की धारणा का विकास किया।[1] लेकिन जरा सूक्ष्मतापूर्वक देखने पर हम पाते हैं कि इस सिद्धान्त में व्यापार और यातायात के साधनों पर बहुत अधिक बल दिया गया है जिसकी वजह से यह अत्यधिक मान्य नहीं है। लेकिन यातायात के साधनों की नगरों के विकास में, उपेक्षा भी नहीं की जा सकती।

मध्यकालीन नगर
(The Medieval City)

मध्य-युग को इतिहास में अंधकार युग के नाम से संबोधित किया गया है। इस युग के संबंध मे कोई भी बात प्रामाणिक रूप से नहीं कही जा सकती। उपलब्ध सामग्रियों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इस युग में नगर चिरनिद्रा में विलीन हो गए थे। सिर्फ कुस्तुन्तुनिया (Constantinople) को अपवादस्वरूप छोड़ कर समस्त नगरों का लोप हो गया था और राजनैतिक सत्ताहीन नागरिक कभी भी नागरिक (Burgher) न रहे। वे जनता के सेवक, श्रमिक, कारीगर, दुकानदार और गरीबी के मारे भिखमंगे हो गए।

इस्लाम धर्म की उत्पत्ति ने भूमध्यसागरीय क्षेत्रों में रहने वालों के मध्य दरार उत्पन्न कर दिया। प्राचीन विश्व (Oriental World) का लोप हो गया जिससे प्राचीन नगरों की महत्ता भी समाप्त हो गई। दूसरे शब्दों में, यह कह सकते हैं कि प्राचीन नगर समाप्त हो गए और फिर से नगर प्रारम्भ हुए। इनमें रोम भी था। पश्चिमी दुनियाँ ने रोम की अनैक्यता और सामन्तवाद के जन्म का स्वागत किया। लेकिन जो पूर्वनागरीय संस्कृतियों से आए, उन लोगों ने रोमन प्रतिमानो (Patterns) का अनुसरण नहीं किया और उन्हें तोड़ कर उनके स्थान पर सामन्तवाद की स्थापना की।

मध्य-युग के आक्रामकों ने नगर राज्यों (City States) का पता नहीं

---

१. 'ग्रामीण और नागरिक समाजशास्त्र' ले०—स्नेहकुमार चौधरी।

लगाया । अतः नगरों को और उन्नत करने के स्थान पर उन्होंने उसे तोड़-फोड़ दिया और एक भारी संख्या में गाँव के चारों तरफ बस गए और कृषि पर अपना कब्जा कर लिया । प्राचीन नगर जो पूर्ण रूप से नष्ट नहीं किए गए थे, महत्वहीन हो गए । कैरोलिगियन (Carolingian) के समय के रोम का जहाँ एक समय एक लाख लोगों ने शरण पायी थी, पतन हो गया और जनसंख्या मे भी वीस हजार लोगों की कमी ही गई । विएना (Vienna) जैसे कुछ नगरों का लोप तो इतिहास के पन्नों से हो गया ।

लेकिन आगे चल कर हम देखते हैं कि अन्धकार युग की समाप्ति के साथ ही नगर पुनः विकसित हो गए । लेकिन इनमें भी कुछ प्राचीन प्रसिद्ध नगरों में का लोप हो गया और अन्य नगर अपनी खोई हुई महत्ता पुनः प्राप्त करने में असफल रहे । इसके साथ ही हम देखते हैं कि केन्द्रीय और पूर्वीय यूरोप में अनेक नगरों की उत्पत्ति हुई । दस्तकारी और व्यापार—ये दोनों अधिकाधिक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध होते गए ।

नागरीकरण की प्रवृत्ति ने महत्वपूर्ण क्षेत्रीय भिन्नता (Variation) का दिग्दर्शन कराया । बाल्टिक और काला सागर के जरिए जाने वाले प्राचीन वाणिज्य सम्बन्धी मार्ग के ऊपर, व्यापार केन्द्र के रूप में नया शहर (Novgorod) स्थापित हो गया । रूस के अन्य नगरों के उपनिवेशों का जन्म व्लाडीमीर (Vladimir), रोस्टोव (Rostov) और सुजदल (Suzdal) में हुआ ।

पूर्वीय यूरोप के शेष नगरों में नागरीकरण के लिए परिस्थितियाँ बहुत कम अनुकूल थीं । आवार्स (Avars), माग्यार्स (Magyars), मंगोलों (Mongols) और बाद में तुर्कों के आक्रमण ने व्यापार को अनिश्चित एवं संकटमय बना दिया । ग्रामीण दासों ने व्यापार के प्रति इतनी कम रुचि दिखलाई कि सामन्तशाही शासकों ने व्यापार करने के लिए विदेशियों को आमंत्रित किया । जो लोग पश्चिमी यूरोप से भाग कर आए थे उनके द्वारा कुछ व्यापारीय शहरों की स्थापना हुई और द्वितीय विश्व युद्ध तक हम पूर्व के नगरों में पश्चिमी यूरोप से आए हुए यहूदियों और जर्मनियों को भारी संख्या में पाते हैं । लेकिन इसके बाद भी पूर्व नगरीय उपनिवेशों की वृद्धि धीरे-धीरे हुई । इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यापार के कारण नगर विकसित होने लगे ।

मध्य-युग के इतिहास की एक आश्चर्यजनक बात यह थी कि इटली में दृढ़ राष्ट्रीय शक्ति का अभाव हो गया जिसके फलस्वरूप नगर राज्यों (City-Stats) में पुनर्जीवन आ गया । फ्रान्स, स्पेन आदि अनेक देशों ने इटली पर विजय प्राप्त करने के लिए आक्रमण किया लेकिन असफल रहे । देश में

किसी एक केन्द्रीय शक्ति का अभाव हो गया था जिससे अनेक नगरों में स्वयं ही उसके मालिक उत्पन्न हो गए। उनमें से एक नगर वेनिस, विश्व-शक्ति के रूप में आविर्भूत हुआ जिसका शासन ११०० वर्षों तक चलता रहा।

जर्मनी में एक भी केन्द्रीय शक्ति का विकास न हो सका लेकिन छोटे शासक छोटे-मोटे प्रदेशों को स्थापित करने में सफल रहे। कुछ नगर स्वतन्त्र हो गए और कम से कम अर्द्ध-प्रमुसत्ताधारी नगरों ने राज्य का स्तर प्राप्त कर लिया।

इसके अतिरिक्त, यूरोप के शेष भागों में नगरों की वृद्धि या विकास संख्या, जनसंख्या और महत्ता के आधार पर हुआ। लेकिन लन्दन को अपवादस्वरूप छोड़ कर उनका राजनैतिक प्रभ;व सीमित था।

इस प्रकार हमने देखा कि मध्ययुगीन पश्चिमीय नगरों का एक सामान्य व विशेष गुण यह था कि नागरिक स्वतन्त्र थे। वे अर्द्ध-दास या दास न थे। दूसरी तरफ हम यह भी पाते हैं कि लोगों के राजनैनिक अधिकार बहुत कम प्राप्त थे। व्यापार की महत्ता धीरे धीरे बढ़ी।

आधुनिक युग में नगर
(The City in Modern Times)

नगरों का विकास होता रहा और उनकी रचना तथा संगठन में उपयुक्त परिवर्तन भी होता गया। व्यवसाय और कारीगरी—दोनों में इतनी विषमता आती गई कि वे एक स्थान पर न रह सके। नौकरशाही समूहों की उत्पत्ति हुई। मठों और मठाधीशों का लोप हो गया तथा अशिक्षित, मूर्ख और दरिद्रों से नगर भर गया जो सत्ताधारियों द्वारा प्रताड़ित किए गए थे। समस्त राजनैतिक दफ्तर आदि तानाशाहों के अधीन थे। लेकिन १८ वीं सदी की समाप्ति के पश्चात क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। फ्रांस की राज्य-क्रांति ने राजाओं और तानाशाहों के राजनैतिक एकाधिकार को छिन्न-भिन्न कर दिया और हजारों वर्ष से पद्दलित और सुप्त बुर्जुआ पूर्ण रूप से सत्ताधारी और प्रभावशाली हो गए।

१५ वीं-१६ वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगरों की वृद्धि और स्थिति में एक महान परिवर्तन हुआ। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगर उद्योग और व्यापार के केन्द्र बन गए। इसी क्रांति के प्रभावस्वरूप ही कलाकार, साहित्यकार, कारीगर, श्रमिक और शिल्पी नगरों की तरफ आकर्षित हुए जिससे नगरों की आबादी में वृद्धि हुई। जनसंख्या वृद्धि के साथ ही साथ नगरों के क्षेत्र व घनत्व में भी अद्भुत वृद्धि हुई।

१९ वीं सदी में नगरों का आधुनिक रूप में विकास हुआ। १० लाख से भी अधिक जनसंख्या के महानगरी के क्षेत्र इसी समय परिलक्षित होते हैं। अनेक चीजों के आविष्कारों (जैसे रेलवे, तार डाक, टेलीफोन आदि) ने भी नगरों के विकास में काफी मदद किया। सर्वप्रथम नगर मैनचेस्टर में पहले सिर्फ ५ हजार लोग रहते थे लेकिन १८५० के करीब हम वहाँ की आबादी ४० लाख पाते हैं। इस प्रकार, अनेक उद्योग-धन्धों ने नगरों की उत्पत्ति और विकास में सहायता पहुँचाया।

औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ही हम सर्वप्रथम नगरों के रहन-सहन के स्तर में भी परिवर्तन पाते है। अनेक ऐसी महानगरियों की भी उत्पत्ति हुई जहाँ आज बड़े-बड़े उद्योग-धंधे एवं कारखाने वर्तमान हैं और वह एक बहुत बड़ा शहर माना जाता है। आज इसी प्रकार के नगरों के बढ़ने की प्रवृत्ति अधिक दिखलाई पड़ रही है। छोटा नागपुर के आदिवासी क्षेत्र राँची को उदाहरण स्वरूप लिया जा सकता है। राँची से ७ मील दूर आदिवासियों के पुराने गाँव धुरूवा–हटिया–सतरंजी में राष्ट्र का महान आधुनिकतम तीर्थ-स्थान बन गया है। इस धुरूवा हटिया को पास-पड़ोस के लोगों के अतिरिक्त कौन जानता था लेकिन भाग्य ने पलटा खाया और ये गाँव विश्वविख्यात हो गये। यहाँ ३१ दिसम्बर १९५८ को वृहत अभियंत्रण निगम (Heavy Engineering Corporation) की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य मशीनों और अन्य साज-सामानों का निर्माण करना है।

वृहत् अभियंत्रण निगम के अंतर्गत चार प्लांट हैं—राँची के धुरूवा-हटिया में फाउन्ड्री फोर्ज प्रोजेक्ट, हेवी मशीन बिल्डिंग प्रोजेक्ट, हेवी मशीन टूल्स प्रोजेक्ट और पश्चिम बंगाल स्थित दुर्गापुर में कोल-माइनिंग वाशरीज़ प्रोजेक्ट।

उपर्युक्त परियोजना पर जिसमें नगर निर्माण भी सम्मिलित है, कुल अनुमानित व्यय २॥ अरब रूपये का हैं। राँची के कारखानों तथा नगर निर्माण के लिए ७ हजार ८०० एकड़ भूमि अर्जित की गयी थी जिसमें २४०० एकड़ भूमि में कारखाने स्थापित हुए हैं। शेष नगर निर्माण के लिए हैं। कार्यक्रम के अनुसार जगन्नाथ नगर में १८ हजार मकानों का निर्माण होगा जिस पर ४५ करोड़ रुपये व्यय होंगे। अब तक ३००० स्थायी तथा ४८०० मकान अस्थायी बस्ती में बनाये जा चुके हैं।

वहां दैनिक उपयोग की चीजें उचित मूल्य पर सुलभ हैं। विभिन्न स्थलों पर कैन्टीन की सुविधा है। कर्मचारियों के लिए सहकारी समिति का गठन किया गया है। १०० से अधिक शैय्या वाला एक आधुनिक अस्पताल धुरूवा में

चलाया जा रहा है। निगम में लगभग १२ हजार कर्मचारी हैं।[1] उसमें काम पाने के लिए श्रमिकों में होड़ लगी है। लोग गाँव छोड़ कर वहाँ भागे जा रहे हैं और संभवतः वह दिन दूर नहीं जब कि घुरूवा-हटिया पूर्ण नगर के रूप में न विकसित हो जाय।

इस प्रकार हम देखते हैं कि औद्योगिक क्रांति ने नगरों की उत्पत्ति एवं विकास में काफी मदद की है।

---

[1] २३ मार्च १९६५ को दैनिक 'नवभारत टाइम्स' में प्रकाशित 'राँची में औद्योगिक क्रांति' शीर्षक लेख।

अध्याय २

नगरों की स्थिति
(Location of the Cities)

किसी भी नगर की स्थिति एवं वृद्धि समझने के लिए उसके राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक इतिहास को, जिस क्षेत्र में वह स्थित है उसके भौगोलिक दशाओं को तथा आवागमन एवं संचार-साधनों के प्रकारों के संबंध में थोड़ी बहुत जानकारी होनी आवश्यक है। प्रत्येक नगर की अलग-अलग परिस्थिति होती है जो कि वहाँ के निवासियों पर अपना प्रभाव डालती है। यदि स्थिति अच्छी होती है तो वहाँ रहने वालों को अधिक सुख-सुविधायें मिलती हैं और इसके विपरीत स्थिति होने पर लोगों के अन्दर आत्मनिर्भरता नहीं रह जाती। प्राय: यह देखा गया है कि नगर वहीं पाए जाते हैं जहाँ सामाजिक और प्राकृतिक दशाएँ अनुकूल होती हैं और जनसंख्या की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ होती हैं। हाँलाकि यह कोई निश्चित नियम नहीं है कि सभी नगरों की स्थिति अच्छी ही हो लेकिन विकास क्रम में पड़ कर वह आदर्श हो जाती हैं।

यह मानना न्यायोचित नहीं है कि नगरों की उत्पत्ति एक आकस्मिक घटना है। इसकी उत्पत्ति के संबंध में कई कारक मुख्य हैं और इस संबंध में कई सिद्धांतों का प्रतिपादिन किया गया है। विभिन्न समाजशास्त्रियों, पुरातत्ववेत्ताओं और भूगोलवेत्ताओं ने अपने-अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। समाजशास्त्रियों ने यातायात के साधनों एवं व्यावसायिक संबंध की ओर बल दिया है। अर्थशास्त्रियों ने उद्योगों एवं आर्थिक दशाओं के कारण ही नगर की उत्पत्ति एवं स्थिति बताई है एवं भूगोलवेत्ताओं ने प्राकृतिक स्थिति को मुख्य कारक माना है।

इस संबंध में कूले (Cooley, C. H.) और मैकेन्जी (Makenzie) ने भी अपने मतों का उल्लेख किया है। कूले ने नगरों की स्थिति के संबंध में जिस सिद्धांत का प्रतिपादन किया उसे 'परिवहन में अवरोध

का सिद्धांत' (The Break in Transportation Theory) कहते हैं। उनका कहना है कि नगर की स्थिति वहीं होती है जहाँ परिवहन में अवरोध हो जाता है अर्थात् जहाँ से यातायात-व्यवस्था में परिवर्तन करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई सड़क किसी पहाड़ी के पास जाकर समाप्त हो जाती है तो वहाँ से माल ले जाने का साधन बदल देना पड़ता है और फलस्वरूप वहां नगरों की स्थिति हो जाती है। बन्दरगाह, संगम पर बसे शहर, सड़कों एवं राजपथों की समाप्ति पर नगरों की स्थिति हो जाती है। लेकिन कूले महोदय का सिद्धांत उपयुक्त नहीं जान पड़ता है। पुराने जमाने में जब औद्योगिक अवस्था का इतना विकास नहीं हुआ था, उस समय तो यह बात ठीक थी क्योंकि रास्ते ज्यादा सुरक्षित नहीं थे। लोगों को मजबूरन किसी न किसी कारणवश रुकना पड़ता था लेकिन आधुनिक युग में यह सिद्धांत उचित नहीं प्रतीत होता। फिर भी किसी हद तक कूले का यह सिद्धांत सही है। प्रायः सभी बन्दरगाह शहर होते हैं। किन्तु अब देश के भीतरी भाग में जल-यातायात बहुत कम होता है, इसलिए इस सिद्धांत के द्वारा नगरों की स्थिति का पाया जाना अनिवार्य नहीं है।

मैकेन्जी (Mackenzie) ने बताया कि दिन-प्रतिदिन जनसंख्या में वृद्धि होने से लोगों के पास भूमि का अभाव होने लगा जिसके फलस्वरूप भूमि के मूल्य और उसकी उययोगिता में भी वृद्धि होने लगी। इसलिए नगरों की उत्पत्ति स्वाभाविक थी।

बर्जेल [1](Bergel, E.E.) महोदय ने बताया कि नगरों की स्थिति के लिए कोई एक ही कारक मुख्य रूप से उत्तरदायी नहीं है। इसके लिए मुख्य रूप से तीन कारक महत्वपूर्ण हैं—

१. प्रकृति (Nature)—किसी स्थान का भौगोलिक महत्व।

२. संस्कृति (Culture)—सांस्कृतिक कारक।

३. प्रकार्य (Function)—किसी उद्योग का पाया जाना।

अभी हमने कूले, मैकेन्जी, बर्जेल आदि विद्वानों के मतों का (नगर की स्थिति के सबंध में) अध्ययन किया। अब यहां सामान्य रूप से उन सभी कारकों का अध्ययन किया जायेगा जो नगरों की स्थिति में महत्वपूर्ण हैं।

(१) आवागमन (Transportation) :—

आवागमन के अन्तर्गत जल, रेल और मोटर यातायात आता है। जहां इन यातायात के साधनों की सुविधाएँ रहती हैं वहां भी नगरों की

---

1. E.E. Bergel : Urban Sociology, Mc-Graw Hill Series (1955).

का सिद्धांत' (The Break in Transportation Theory) कहते हैं। उनका कहना है कि नगर की स्थिति वहीं होती है जहाँ परिवहन में अवरोध हो जाता है अर्थात् जहाँ से यातायात-व्यवस्था में परिवर्तन करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई सड़क किसी पहाड़ी के पास जाकर समाप्त हो जाती है तो वहाँ से माल ले जाने का साधन बदल देना पड़ता है और फलस्वरूप वहां नगरों की स्थिति हो जाती है। बन्दरगाह, संगम पर बसे शहर, सड़कों एवं राजपथों की समाप्ति पर नगरों की स्थिति हो जाती है। लेकिन कूले महोदय का सिद्धांत उपयुक्त नहीं जान पड़ता है। पुराने जमाने में जब औद्योगिक अवस्था का इतना विकास नहीं हुआ था, उस समय तो यह बात ठीक थी क्योंकि रास्ते ज्यादा सुरक्षित नहीं थे। लोगों को मजबूरन किसी न किसी कारणवश रुकना पड़ता था लेकिन आधुनिक युग में यह सिद्धांत उचित नहीं प्रतीत होता। फिर भी किसी हद तक कूले का यह सिद्धांत सही है। प्राय: सभी बन्दरगाह शहर होते हैं। किन्तु अब देश के भीतरी भाग में जल-यातायात बहुत कम होता है, इसलिए इस सिद्धांत के द्वारा नगरों की स्थिति का पाया जाना अनिवार्य नहीं है।

मैकेन्जी (Mackenzie) ने बताया कि दिन-प्रतिदिन जनसंख्या में वृद्धि होने से लोगों के पास भूमि का अभाव होने लगा जिसके फलस्वरूप भूमि के मूल्य और उसकी उययोगिता में भी वृद्धि होने लगी। इसलिए नगरों की उत्पत्ति स्वाभाविक थी।

बर्जेल [1](Bergel, E.E.) महोदय ने बताया कि नगरों की स्थिति के लिए कोई एक ही कारक मुख्य रूप से उत्तरदायी नहीं है। इसके लिए मुख्य रूप से तीन कारक महत्वपूर्ण हैं—

१. प्रकृति (Nature)—किसी स्थान का भौगोलिक महत्व।

२. संस्कृति (Culture)—सांस्कृतिक कारक।

३. प्रकार्य (Function)—किसी उद्योग का पाया जाना।

अभी हमने कूले, मैकेन्जी, बर्जेल आदि विद्वानों के मतों का (नगर की स्थिति के सबंध में) अध्ययन किया। अब यहां सामान्य रूप से उन सभी कारकों का अध्ययन किया जायेगा जो नगरों की स्थिति में महत्वपूर्ण हैं।

(१) आवागमन (Transportation) :—

आवागमन के अन्तर्गत जल, रेल और मोटर यातायात आता है। जहां इन यातायात के साधनों की सुविधाएँ रहती हैं वहां भी नगरों की

---

1. E.E. Bergel : Urban Sociology, Mc-Graw Hill Series (1955).

अध्याय २

नगरों की स्थिति

(Location of the Cities)

किसी भी नगर की स्थिति एवं वृद्धि समझने के लिए उसके राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक इतिहास को, जिस क्षेत्र में वह स्थित है उसके भौगोलिक दशाओं को तथा आवागमन एवं संचार-साधनों के प्रकारों के संबंध में थोड़ी बहुत जानकारी होनी आवश्यक है। प्रत्येक नगर की अलग-अलग परिस्थिति होती है जो कि वहाँ के निवासियों पर अपना प्रभाव डालती है। यदि स्थिति अच्छी होती है तो वहाँ रहने वालों को अधिक सुख-सुविधायें मिलती हैं और इसके विपरीत स्थिति होने पर लोगों के अन्दर आत्मनिर्भरता नहीं रह जाती। प्राय: यह देखा गया है कि नगर वहीं पाए जाते हैं जहाँ सामाजिक और प्राकृतिक दशाएँ अनुकूल होती हैं और जनसंख्या की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ होती हैं। हाँलाकि यह कोई निश्चित नियम नहीं है कि सभी नगरों की स्थिति अच्छी ही हो लेकिन विकास क्रम में पड़ कर वह आदर्श हो जाती हैं।

यह मानना न्यायोचित नहीं है कि नगरों की उत्पत्ति एक आकस्मिक घटना है। इसकी उत्पत्ति के संबंध में कई कारक मुख्य हैं और इस संबंध में कई सिद्धांतों का प्रतिपादिन किया गया है। विभिन्न समाजशास्त्रियों, पुरातत्ववेत्ताओं और भूगोलवेत्ताओं ने अपने-अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। समाजशास्त्रियों ने यातायात के साधनों एवं व्यावसायिक संबंध की ओर बल दिया है। अर्थशास्त्रियों ने उद्योगों एवं आर्थिक दशाओं के कारण ही नगर की उत्पत्ति एवं स्थिति बताई है एवं भूगोलवेत्ताओं ने प्राकृतिक स्थिति को मुख्य कारक माना है।

इस संबंध में कूले (Cooley, C. H.) और मैकेन्जी (Makenzie) ने भी अपने मतों का उल्लेख किया है। कूले ने नगरों की स्थिति के संबंध में जिस सिद्धांत का प्रतिपादन किया उसे 'परिवहन में अवरोध

स्वास्थ्यलाभ तथा हवाखोरी के लिए इन स्थानों को जाते हैं जिसकी वजह से इन सब स्थानों का महत्व बढ़ गया है और आज धीरे-धीरे ये सब बड़े-बड़े नगर के रूप में विकसित हो गए हैं। चूंकि इन सब स्थानों की जलवायु स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक है, अतः यहां नगरों का बस जाना स्वाभाविक है। इस प्रकार, आधुनिक युग के नगर उन स्थानों पर स्थित हैं जिनकी मिट्टी, जलवायु और प्राकृतिक विभाग स्वास्थ्य के अनुकूल है।

(३) सांस्कृतिक कारक (Cultural Factor) :—

किसी स्थान विशेष को नगर का रूप देने में संस्कृति भी एक महत्वपूर्ण कारक है। कुछ ऐसे नगर हैं जो अपने धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्य के लिए प्रसिद्ध हैं। फलस्वरूप ये नगर काफी विकसित हो गए हैं। जैसे रोम, ल्हासा, मक्का, बगदाद, जरूशलम, बद्रीनाथ, उज्जैन, अयोध्या, इन्दौर, अजमेर, प्रयाग, वाराणसी, आदि। ये सब नगर अपने तीर्थस्थान के लिए प्रसिद्ध हैं। इन स्थानों पर सदैव दूर-दूर से यात्रियों का आना-जाना लगा रहता है।

संस्कृति का दूसरा मुख्य महत्वपूर्ण अंग शिक्षा है। इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कुछ नगर प्रारंभ से ही शिक्षा के केन्द्र रहे हैं जहां शिक्षा ग्रहण करने के लिए विश्व के कोने-कोने से शिक्षार्थी आया करते थे जिससे इनका महत्व काफी था और आज भी है। उदाहरण के लिए, आक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज, न्यूयार्क, न्यूजर्सी, शिकागो, तथा भारतवर्ष में नालन्दा, तक्षशिला, शान्ति-निकेतन, वाराणसी, इलाहाबाद, दिल्ली, जयपुर, जोधपुर, लखनऊ आदि। इन सब नगरों में आज विश्वविद्यालय बन गए हैं जिससे यह नगर बस गए हैं।

आजकल धीरे-धीरे सांस्कृतिक उपादानों के आर्थिक केन्द्र खुल रहे हैं; जैसे बनारस की साड़ी और लखनऊ का चिकन आदि। ऐसी वस्तुएँ देश-विदेश में काफी महत्वपूर्ण हो जाती हैं। इसलिए ऐसे स्थान बहुत शीघ्र ही उन्नति कर जाते हैं।

कुछ जगहों पर नगर इसलिए भी बस जाते हैं कि वहाँ अजायबघर जैसे दर्शनीय स्थान रहते हैं। ऐसे जगहों में दर्शकों का ताँता लगा रहता है। सारनाथ, मथुरा, कलकत्ता, फ्लोरेन्स, रोम, बर्गेस, लखनऊ आदि अपने अजायबघर या कौतुक भंडार के लिए प्रसिद्ध हैं।

कुछ जगहों की महत्ता उनकी ऐतिहासिकता के लिए होती है जिसके फलस्वरूप वहां शीघ्र ही नगर बस जाते हैं और उन्नति के शिखर पर

स्थिति अनिवार्य हो जाती है। उदाहरण के लिए, बड़े बड़े बन्दरगाह (Sea-Ports) और अन्तर्देशीय यातायात केन्द्र (Inland Centre)। हम देखते हैं कि बन्दरगाहों अथवा अन्तर्देशीय यातायात केन्द्रों पर विदेशों से माल आते-जाते रहते हैं और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति नगरों द्वारा ही संभव है। बन्दरगाहों के माध्यम से एक देश में बनी सामग्री को दूसरे देश में भेजा और मँगवाया जाता है। अतः ऐसे स्थानों पर नगरों का बसना स्वाभाविक है। आज भी विश्व के जितने बड़े बड़े बन्दरगाह हैं, वहाँ हम बड़े-बड़े नगर पाते हैं। उदाहरण के लिए, न्यूयार्क, बोस्टन, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, कोचीन, सेन फ्रांसिस्को आदि। इन सबके अतिरिक्त आजकल भारतवर्ष में कुछ नवीन बन्दरगाहों का भी निर्माण किया जा रहा है। प्राचीन बन्दरगाहों कलकत्ता, सूरत के साथ कोचीन, विजयापट्टम एवं कांडला में नवीन बन्दरगाह बनाए जा रहे हैं।

रेल-मार्गों तथा हवाई सेवा का प्रादुर्भाव हो जाने से अन्तर्देशीय व्यापार को प्रोत्साहन मिला है। ऐसे नगर आयात और निर्यात्, दोनों के केन्द्र होते हैं; जैसे, दिल्ली और सेंटलुई। अजमेर रेलवे वर्कशाप के लिए प्रसिद्ध है। दमदम, पालम और नागपुर हवाई-अड्डे हैं जहां कि अच्छा खासा नगर बस गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जल, रेल, और हवाई यातायात, तीनों एक दूसरे के पूरक हैं। आज हम बड़े बड़े नगरों को विभिन्न यातायात के मार्गों पर ही पाते हैं।

(२) प्राकृतिक कारक (Natural Factor) :—

बर्जेल (Bergel, E. E.) महोदय का कथन है कि मनुष्य हमेशा से प्रकृति के हाथ का खिलौना रहा है। लेकिन अब वह नवीन सभ्यता के विकास के साथ-साथ प्रकृति के इन बंधनों को ढीला करता चला जा रहा है। आज मनुष्य चन्द्रमा पर जाने की बात सोचने लगा है। आज का मनुष्य बर्फीले स्थानों पर भी रह सकता है।

किसी भी नगर की स्थिति के लिए प्रकृति बहुत कुछ उत्तरदायी होती है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे सामने है। हम देखते हैं कि जिस स्थान का जलवायु अनुकूल नहीं होता वहां की जनसंख्या कम होती है, वहां बहुत कम लोग रहते हैं। इसके विपरीत, जहां का जलवायु अनुकूल और स्वास्थ्यवर्द्धक होता है वहां बड़े-बड़े नगर पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए, नैनीताल, शिमला, मसूरी, ऊटकमंड आदि। ग्रीष्म ऋतु में प्रायः लोग

जो स्थान अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार केन्द्र होते हैं वहाँ भी नगर विकसित हो जाते हैं। इन नगरों से विश्व के समस्त भागों में व्यापार होना प्रारंभ हो जाता हैं। आगे चल कर ऐसे नगर काफी उन्नति कर जाते हैं। इनमें शिकागो, मैनचेस्टर, टोकियो, न्यूयार्क, लन्दन, एम्सटर्डम, बम्बई और कलकत्ता जैसे विशाल नगर आते हैं। इनके अतिरिक्त, राष्ट्रीय और स्थानीय व्यापार केन्द्र के निकट भी नगर बस जाते हैं। राष्ट्रीय व्यापार केन्द्र के अन्तर्गत देश के समस्त बड़े-बड़े नगर आते हैं। जो स्थान आर्थिक सेवा केन्द्र (Economic Social Centres) होते हैं जिनमें एक्सचेंज बीमा शेयर मार्केटस आदि पाये जाते हैं, वे भी नगर के रूप में विकसित हो जाते हैं। उदाहरणतः कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, न्यूयार्क, लन्दन आदि।

(५) राजनैतिक कारक (Political Factor) :—

ऊपर जितने भी नगरों का वर्णन किया गया है वे सब उद्योग, व्यापार और उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हैं। अब मैं राजनीतिक नगरों की विशेषताओं के सम्बन्ध में चर्चा करूँगा। कहने का तात्पर्य यह है कि ये सब नगर राजधानियाँ (Capitals) हैं। राजनैतिक केन्द्रों के अन्तर्गत ही सैनिक राजनैतिक केन्द्र (Military Centres) भी आ जाते हैं। इन सब राजधानियों में देश-विदेश से लोग सदैव आते-जाते रहते हैं जिसकी वजह से इनका काफी महत्व होता है और इसके फलस्वरूप वहाँ नगरों का विकास हो जाता है। उदाहरण के लिए, हम पंजाब की राजधानी चण्डीगढ़ ले सकते हैं। कुछ ही दिन हुए यह स्थान एक सभ्य और सुरम्य नगर के रूप में परिणित हो गया है। हम राजनैतिक कैन्द्रों को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(i) **नागरिक राजनीतिक केन्द्र** (Civil Political Centres):—इसके अन्तर्गत विश्व के वे बड़े-बड़े नगर आते हैं जहाँ केन्द्रीय सरकारों का मंत्रिमंडल रहता है। उदाहरण के लिये, न्यूयार्क, जेनेवा, वाशिंगटन, लन्दन, पेरिस, मास्को, नई दिल्ली।

(ii) **क्षेत्रीय राजनीतिक केन्द्र** (Regional Political Centres) :— इसके अन्तर्गत राज्य की राजधानियाँ आती हैं। उदाहरण के लिए, लखनऊ, भोपाल पटना, जयपुर, कलकत्ता, चण्डीगढ़ आदि।

(iii) **सैनिक राजनीतिक केन्द्र** (Military Centres) :—प्रायः यह देखा जाता है कि किसी भी स्थान का चयन सुरक्षा को ध्यान में रख कर किया जाता है। इसीलिए हमें प्राचीन काल में नगरों के आस-पास ऊँचे-ऊँचे परकोटे देखने को मिलते हैं। यद्यपि आज हमें परकोटे वाले नगर नहीं दिखलाई पड़ते फिर भी अदन और जिब्राल्टर जैसे कुछ नगरों में अभी भी परकोटे देखने को मिलते हैं। इन नगरों में सुरक्षा हेतु सैनिक छावनियां बनाई जाती थीं। ऐसे नगरों में मेरठ, कानपुर, सीतापुर, फैजाबाद, वाराणसी, देहरादून, फिल्लौर, मूह, ख़रकवासला आदि प्रमुख हैं।

पहुँच जाते हैं। ऐसे जगहों में सारनाथ, उज्जैन, अजन्ता, एलोरा, एलिफैन्टा, मदुराई, झाँसी आदि प्रमुख हैं।

(४) आर्थिक कारक (Economic Factor) :—

नगरों की स्थिति में आर्थिक कारक का भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। अनेक नगरों की स्थिति बहुत कुछ उस स्थान के विशिष्ट प्रकार के क्रिया-कलापों पर निर्भर करती है। आर्थिक केन्द्र के अन्तंगत उत्पादन केन्द्र, औद्योगिक केन्द्र, व्यापार केन्द्र तथा आर्थिक सेवा केन्द्र आदि आते हैं। उत्पादन केन्द्र के अन्तंगत वे नगर आते हैं जिनमें खान (Mines) खोद कर उपयोगी वस्तुओं को निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त, मत्स्य-उद्योग भी इसमें सम्मिलित है।

हम अनेक औद्योगिक नगरों को खनिज या कोयले के खानों के निकट स्थित पाते हैं क्योंकि श्रमिक वर्ग श्रम करने के लिए इन कारखानों की तरफ आकर्षित होते हैं और धीरे-धीरे वहीं बसने लगते हैं। इसी प्रकार प्राय: यह देखा जाता है कि अनेक ऐसे नगर हैं जहाँ कोई नहीं रहता। वह परित्यक्त नगर कहलाता है। लेकिन उन नगरों में तेल के कुएँ पाये जाते हैं जिसके फलस्वरूप वहाँ धीरे-धीरे नगर विकसित होने लगता है। श्रमिक आकर्षित होने लगते हैं और परिवहन के मार्ग बनाए जाने लगते हैं ताकि उस स्थान से प्राप्त उत्पादन को जहाज तक पहुँचाया जा सके और मशीनों तथा अन्य चीजों की पूर्ति की जा सके। यदि तेल की पूर्ति स्थायी रूप से होती रहती है तो नगर बसने लगते हैं। खानों से सम्बन्धित औद्योगिक नगरों में स्क्रैंटन, पेन्सिलवेनिया, झरिया, कोलार, ट्रावनकोर आदि का नाम उल्लेखनीय है। जहाँ तेल निकलता है उनमें तुलसा, ओक्लोहोम, और डिब्रूगढ़, तथा मत्स्योद्योग से सम्बन्धित नगरों में ग्लौसेस्तर, मेसाचुसेट्स, बम्बई, मद्रास आदि प्रमुख हैं। इन स्थानों पर मछलियाँ छोटे-छोटे नगरों से निर्यात करने के लिए लाई जाती है।

औद्योगिक केन्द्र के अन्तंगत वे नगर आते हैं जहाँ लघु एवं भारी उद्योग पाए जाते हैं। लघु उद्योग से सम्बन्धित नगरों में ग्वालियर, जयपुर, मुरादाबाद, मेसाचुसेट्स, बेडफोर्ड, अलीगढ़ और मेरठ आदि प्रमुख हैं। इन स्थानों पर वृहत स्तरीय उद्योग (Large Scale Industry) नहीं स्थापित किए जा सकते। अत: यहाँ चीनी, पीतल के छोटे-छोटे बर्तन, खिलौने आदि से सम्बन्धित अनेक लघु उद्योग स्थापित हो जाते हैं और नगरों का विकास होने लगता है।

वृहत उद्योग के अन्तंगत जमशेदपुर, चितरंजन, बंगलोर, भोपाल, बेथलेम पेन्सिलवेनिया, अहमदाबाद, कानपुर आदि नगर आते हैं। इन नगरों में इस्पात, रेलों के इंजन, हवाई जहाज, कपड़े की मिलें आदि आती हैं।

(६) मनोरंजन के केन्द्र (Recreation Centres) :—

मनोरंजन संस्कृति का बहुत महत्वपूर्ण अंग है। अनेक नगरों की स्थिति में इसका भी बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। प्रायः पश्चिमी देशों में इस तरह के सांस्कृतिक नगर बहुत देखने को मिलते हैं। उदाहरण के लिए, फिल्म-उद्योग का मुख्य नगर हालीवुड। इसी तरह भारतवर्ष में मद्रास और बम्बई का भी नाम लिया जा सकता है।

(७) विविध कारक (Multiple Factor) :—

इसके अन्तर्गत हम मुख्य रूप से उपनगर और विश्राम केन्द्रों को ले सकते हैं। उपनगर का तात्पर्य उन छोटे-छोटे नगरों से हैं जो बड़े-बड़े नगरों के निकट ही बस जाते है। इन उपनगरों में रहने वाले प्रतिदिन बड़े नगरों में काम करने के लिए जाते हैं और शाम को वापस चले आते हैं और यहीं सोते हैं। ऐसे उपनगरों में शाहदरा (दिल्ली), खार (बम्बई), बिपलपुर (इन्दौर) आदि उल्लेखनीय हैं।

विश्राम केन्द्र से मेरा तात्पर्य उन स्थलों से है जहाँ लोग भौतिकवादी संसार से ऊब कर आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए जाकर बस जाते हैं। दूसरे शब्दों में, हम इन्हें वन की संज्ञा दे सकते हैं। साँसारिकता से ऊब जाने के पश्चात् ही लोग इन स्थलों पर जाते हैं। हाँलाँकि प्राचीन ग्रन्थों में हमें ऐसे स्थानों के संबंध में अनेक वर्णन मिलते हैं लेकिन आजकल भारतवर्ष में ऐसा कोइ विशेष नगर नहीं है जहाँ कि लोग विश्राम करने के लिए जायँ जबकि विदेशों में ऐसे नगर हैं। वहाँ लोग सेवा-मुक्त होने के पश्चात जाकर आराम से जीवन व्यतीत करते हैं। उन्हें दीन-दुनियाँ, भोग-विलास अथवा साँसारिकता से कोई मतलब नहीं होता।

अन्त में, उपरोक्त अध्ययन के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नगरों की स्थिति और विकास के लिए किसी एक कारक को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इसमें अनेक कारक सन्निहित हैं। बर्जेल (Bergel, E. E.) महोदय का भी कथन है कि नगरीय बस्तियों के विकास में कोई एक सामान्य कारण नहीं है।[1] प्रकृति कुछ लाभों को भी प्रदत्त करती है जिसका उपभोग व्यक्ति स्वयं कर सकता है। वह प्राकतिक दृश्यों को पसन्द करेगा, यह उसके फैसले तथा एक विशिष्ट समाज के सांस्कृतिक दशाओं पर निर्भर करता है।

---

1. "There is no general rule which determines the location of urban settlements." E. E. Bergel, : Urban Sociology, Mc Graw Hill, New York (1955) p. 74.

अध्याय ३

ग्रामीण और नागरिक भेद

(Rural & Urban Differences)

विश्व में जितने भी देश हैं, उन सबका सर्वेक्षण करने पर पता चलता है कि प्रत्येक देश में दो प्रकार के सामाजिक पर्यावरण (Environment) मिलते हैं—ग्रामीण और नागरिक। ग्रामीण एवं नागरिक जीवन परस्पर संबंधित हैं। बिना एक दूसरे का आपस में अध्ययन किए हम किसी एक निश्चित मत पर नहीं पहुँच सकते और हमारा अध्ययन भी बेकार हो जायेगा। इस प्रकार हम ग्राम एवं नगर को एक ही मानव समुदाय के दो भाग अथवा एक ही वस्तु के दो पहलू मान सकते हैं। अन्तर सिर्फ इतना है कि एक का दायरा काफी सीमित है तो दूसरे का अत्यन्त विकसित। गाँव को हम सीमित इसलिए कहते हैं कि वहाँ प्राथमिक संबंध पाया जाता है। लोगों में आमने-सामने (Face to Face) का संबंध होता है। करीब-करीब हर ग्रामवासी एक दूसरे को जानता रहता है। यही नहीं, कुछ लोग तो अपने गाँव के आस-पास के चार-छः गाँवों के लोगों को भी जानते रहते हैं। इसके विपरीत, नगरों में द्वैतीयक संबंध (Secondary Relation) पाया जाता है। द्वैतीयक संबंध का तात्पर्य यह है कि गाँव की तरह नगरों में लोग एक दूसरे को आसानी से और सरलतापूर्वक नहीं जानते। कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली जैसे महानगरियों में तो लोग अपने बगल के लोगों को ही नहीं जानते हैं। एक ही मकान में रह रहे कई किरायेदार अपने बगल के कमरे में रह रहे किरायेदार को नहीं जानते। इसका कारण यह है कि नगरों का क्षेत्र इतना व्यापक रहता है तथा लोगों के पास कार्य इतना अधिक होता है कि सुबह होते ही वे अपने-अपने काम पर चल देते हैं और काफी रात गए घर लौटते हैं। उस वक्त थके-माँदे होने के कारण वे सीधे चारपाई पर जा पड़ते हैं। इस तरह उनको अपने बगल वाले व्यक्तियों के संबंध में कुछ जानकारी रखने का मौका ही नहीं मिलता। इतना ही नहीं, इन महानगरियों में तो ऐसी अनोखी बातें देखने-सुनने को मिलती हैं कि बड़ा

आश्चर्य होता है। बगल के किसी किरायेदार अथवा किसी पड़ोसी की मृत्यु हो जाती है परन्तु दूसरे को मालूम नहीं रहता। इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्राम एवं नगर में काफी महत्वपूर्ण अन्तर होता है। लेकिन इतना वैभिन्न्य (Difference) होने के बावजूद जब हम इनको परिभाषित करना चाहते हैं तो हमारे सामने काफी कठिनाइयाँ उपस्थित हो जाती हैं। स्मिथ (Smith, T. L.) ने इन कठिनाइयों की तरफ संकेत करते हुए लिखा है—"पहली दृष्टि में नगर और ग्राम के अन्तर से स्पष्ट और कुछ भी उतना स्पष्ट नहीं प्रतीत होता। दोनों में अत्यधिक भेद है लेकिन जब कोई नगर व ग्राम में अन्तर दिखलाने का प्रयत्न करता है, ग्रामीण और नागरिक के बीच स्पष्ट भेद करने का प्रयत्न करता है तो कठिनाइयाँ तुरन्त प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ने लगती हैं।"[१] कहने का तात्पर्य यह है कि ग्राम और नगर एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न नहीं हैं। हमारे पास ऐसा कोई आधार नहीं है जिसके माध्यम से किसी बस्ती को गाँव और नगर की श्रेणी में सम्मिलित किया जा सके।

वेबर, ऐण्डरसन, मैकाइवर तथा पेज प्रभृति विद्वानों ने यह स्वीकार किया है कि गाँव तथा नगर के मध्य कोई स्पष्ट विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती। मैकाइवर तथा पेज ने लिखा है ग्रामीण तथा नागरिक जीवन विधि यद्यपि, दो प्रकार की दशाओं को दर्शाती है तथापि इन दोनों के मध्य कोई विभाजन रेखा खींचना कठिन है। इसका मुख्य कारण यह है कि इनके बीच अन्तर इतना स्पष्ट नहीं है कि यह बताया जा सके कि कहाँ नगर समाप्त होता है और कहाँ गाँव आरम्भ होता है।[2]

गाँव और नगर के मध्य अन्तर न बता सकने का एक कारण यह भी है कि दोनों की कोई एक या सार्वभौमिक परिभाषा नहीं है।

---

1. "At first thought nothing seems more apparent than the difference between the city and the country. The contrasts between the two are so sharp! But one who attempts to setforth the specific differences between the city and the country, to distinguish accurately between rural and urban, is immediately perceptible" T. Lynn Smith : The Sociology of Rural Life, p 15.

2. "But between the two there is no sharp demarcation to tell where city ends and country begins." Mac Iver and Page : Society, p. 311.

भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी गई हैं। फ्रांस में २०००, बेल्जियम में ५०००, मिस्र में ११०००, अमेरिका में २५०० और जापान में ३०००० से भी अधिक जनसंख्या वाली बस्तियों को नगर की और इससे कम जनसंख्या वाली बस्ती को ग्राम की संज्ञा दी गई है। इसी प्रकार कहीं प्राथमिक एवं द्वैतीयक सम्बन्धों के आधार पर और कहीं-कहीं व्यवसाय की बहुलता के आधार पर नगर एवं गाँव को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। लेकिन इन सब प्रयत्नों के बाद भी कोई एक स्पष्ट परिभाषा नहीं बन पाई है। गाँव और नगर की परिभाषाओं के सम्बन्ध में बर्जेल ने ठीक ही कहा है—"ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि नगर क्या है परन्तु किसी ने भी सन्तोषप्रद परिभाषा नहीं दी है।"[1]

यही नहीं, नगर एवं ग्राम की परिवर्तनशील प्रकृति और नगर में विभिन्न पर्यावरण (Heterogenous Environment) के कारण भी ग्राम और नगर के मध्य कोई अन्तर नहीं स्पष्ट किया जा सकता।

अत: दोनों के मध्य कोई एक विभाजन रेखा खींचना असम्भव सा प्रतीत होता है। गिस्ट और हालबर्ट ने इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है—"अत: ग्रामीण और नागरिक जीवन का सुपरिचित विभाजन सामुदायिक जीवन के तथ्यों पर आधारित होने की अपेक्षा अधिकांश रूप से एक सैद्धांतिक प्रत्यय या धारणा है।"[2]

ग्रामीण और नागरिक जीवन में तुलना

(Contrast Between Rural-Urban Life)

प्रमुख समाजशास्त्रियों ने अनेक महत्वपूर्ण मापदण्डों (Criteria) को बताया है जिसके आधार पर ग्रामीण जीवन और नागरिक सामाजिक जीवन के मध्य अन्तर स्पष्ट किया जा सकता है। जैसे, सामाजिक संगठन, सामाजिक सम्बन्ध, सामाजिक संस्तरण, सामाजिक संरचना की जटिलता आदि।

---

1. "Everybody seems to know what a city is, but no one has given a satisfactory definition. "E. E' Bergel : Urban Sociology, Mc Graw Hill Book Series (1955) p. 5.

2. "Thus the familiar dichotomy between 'rural' and 'urban' is more of a theoretical concept than a division based upon the facts of community life." Gist & Halbert : Urban Society (1954) p. 3.

ए० आर० देसाई ने निम्नलिखित मापदण्डों को बताया है जो ग्रामीण और नागरिक जीवन के मध्य अन्तर स्पष्ट करने के लिए सर्वाधिक महत्व-पूर्ण हैं[1]—

(i) व्यावसायिक भिन्नताएँ।
(ii) पर्यावरण सम्बन्धी भिन्नताएँ।
(iii) समुदाय के आकार में भिन्नताएँ।
(iv) जनसंख्या के घनत्व में भिन्नता।
(v) जनसंख्या की सजातीयता और विजातीयता में भिन्नता।
(vi) सामाजिक गतिशीलता में भिन्नता।
(vli) विस्थापन की दिशा में भिन्नता।
(viii) सामाजिक विभेदीकरण और संस्तरण में भिन्नता।
(ix) सामाजिक अन्त:क्रियात्मक व्यवस्था में भिन्नता।

इसी के समानान्तर सोरोकिन और ज़िमरमैन[2] ने भी कुछ मापदण्ड निश्चित किए हैं :—

(i) व्यवसाय (Occupation)
(ii) पर्यावरण (Environment)
(iii) समुदाय का आकार (Size of Community)
(iv) जनसंख्या का घनत्व (Density of Population)
(v) जनसंख्या की सजातीयता और विजातीयता (Homogeneity and Heterogeneity of Population)
(vi) सामाजिक विभेदीकरण और संस्तरण (Social Differentiation and Stratification)
(vii) गतिशीलता (Mobility)
(viii) सामाजिक अन्त:क्रियात्मक पद्धति (System of Social System)

उपर्युक्त मापदण्डों तथा इनसे सम्बन्धित अन्य पहलुओं का उल्लेख करते हुए ग्रामीण और नागरिक जीवन-विधि के अन्तर को निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है :—

---

1. A. R. Desai : Rurl Sociology in India, The Indian Society of Agricultural Economics. (1961) p. 14–15.

2. P. A. Sorokin & C. C. Zimmerman : Principle of Rural-Urban Sociology, pp. 56–57.

(१) सामाजिक संगठन (Social Organisation) :—

ग्रामीण और नागरिक जीवन के अन्तर को स्पष्ट करने के लिए सर्वप्रथम इसके सामाजिक संगठन की व्याख्या जरूरी है। सामाजिक संगठन के अन्तर्गत परिवार, विवाह, पड़ोस, समुदाय, स्त्रियों की स्थिति और सामाजिक स्तरण आदि आते हैं।

(क) परिवार (Family) :—परिवार मानव समाज की एक इकाई है। इसका अस्तित्व आरम्भ से रहा है। प्रत्येक व्यक्ति परिवार में ही जन्म लेता है और उसी में उसका पालन-पोषण होता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व पर परिवार की अमिट छाप रहती है। यद्यपि प्रत्येक समाज में हम परिवार पाते हैं लेकिन इसका प्रभाव समाज के ऊपर भिन्न-भिन्न रहा है। यही बात ग्रामीण और नगरीय समाज के ऊपर भी लागू होता है। ग्रामीण परिवार काफी शक्तिशाली होता है। ग्रामीण समुदाय ही परिवार पर आधृत होता है। चूँकि हमारे गाँवों में संयुक्त परिवार पाया जाता है और उसका मुख्य व्यवसाय कृषि है इसलिए हम गाँवों में पितृसत्ताक परिवार (Patriarchal Family) पाते हैं। परिवार का बड़ा-बुजुर्ग ही उसका मुखिया होता है। उसी के हाथ में गृहस्थी की बागडोर रहती है। संयुक्त परिवार में सदस्यों का आपस में काफी प्रेम रहता है और उनके संबंध भी काफी घनिष्ठ होते हैं। सब लोगों को मुखिया की आज्ञाओं का पालन करना पड़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि गाँव में व्यक्ति की महत्ता के स्थान पर परिवार को अधिक महत्व दिया जाता है।

इसके विपरीत, हम नगरीय परिवारों पर जब दृष्टिपात करते हैं तो देखते हैं कि वहाँ संयुक्त परिवार के स्थान पर एकाकी परिवार (Nuclear Family) पाए जाते हैं। नगरीय परिवार उतना शक्तिशाली भी नहीं होता। यहाँ परिवार को अधिक महत्व नहीं दिया जाता बल्कि व्यक्ति की महत्ता अधिक होती है। यहाँ के परिवार का व्यवसाय कृषि नहीं होता बल्कि उद्योग-धन्धे होते हैं। जिस तरह ग्रामीण परिवार में कृषि व्यवसाय होने से पिता-पुत्र तथा परिवार के समस्त सदस्य कृषि-कार्य ही करते हैं, उस प्रकार नगर में यह जरूरी नहीं है कि जिस उद्योग में पिता कार्य करता है उसी में पुत्र भी या परिवार के अन्य सदस्य भी कार्य करते हों। यहाँ के परिवार के सदस्यों के सम्बन्ध भी अधिक घनिष्ट नहीं होते हैं। गाँवों के संयुक्त परिवार में माता की कोई स्थिति ही नहीं होती लेकिन नगरीय परिवार में माता-पिता, दोनों की समान स्थिति होती हैं।

(ख) विवाह (Marriage)—परिवार की ही भांति गाँवों में विवाह

का भी काफी महत्व है। गाँवों में विवाह व्यक्तिवाद पर आधृत न होकर परिवार पर निर्भर होता है। गाँवों में विवाह पारिवारिक महत्व का होता है। यहाँ दो व्यक्तियों (स्त्री-पुरुष) में विवाह नहीं होता अपितु दो परिवारों में विवाह होता है और दोनों परिवार एकता के सूत्र में आबद्ध हो जाते हैं। विवाह में व्यक्ति के विचारों अथवा उसकी स्वीकृति-अस्वीकृति नहीं ली जाती बल्कि परिवार जहाँ विवाह तय कर देता है उसे वहीं करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, चूँकि गाँव परम्परागत मूल्यों और रूढ़ियों पर आधारित होता है, इसलिए वहाँ परम्परागत विवाह ही होते हैं। प्यार, रोमांस आदि को लोग घृणा से देखते हैं। गाँवों में बाल-विवाह और अन्तर्जातीय विवाह को भी प्राथमिकता दी जाती है।

इसके विपरीत, जब हम नगरीय विवाह पर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि यहाँ गाँवों के ठीक उल्टा विवाह होता है। नगरों में विवाह करने के पहले लड़के के व्यक्तिगत विचारों, उसकी स्वीकृति-अस्वीकृति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। परिवार यदि जबरदस्ती उसकी शादी करना चाहे तो यह संभव नहीं हो सकता (यद्यपि कुछ रूढ़िवादी परिवारों में अभी भी अपवाद मिल सकते है)। नगरों में प्यार, रोमांस आदि तो बहुत साधारण चीज है और आज कल तो 'लव-मैरिज' को प्रश्रय भी दिया जा रहा है। यहाँ प्रायः वयस्क होने पर ही विवाह होता है।

(ग) सामुदायिक जीवन (Community Life) :—नगरों की अपेक्षा गाँवों में समुदायों का सङ्गठन अधिक दृढ़ होता है। यहाँ लोगों में 'हम' की भावना ('We' feeling) होती है जब कि नगरों में 'मैं' की भावना ('I' feeling) की प्रधानता होती है। गाँवों में समुदाय में बहुत कठोर अनुशासन होता है जब कि नगरों में लचीला होता है।

(घ) स्त्रियों की स्थिति (Status of Women) :—गाँवों में संयुक्त परिवार मिलता है और संयुक्त परिवार का मुखिया कोई वृद्ध पुरुष ही होता है इसलिए स्त्रियों की महत्ता अधिक नहीं होती। स्त्रियाँ पराश्रित होती हैं। उन्हें हर कार्य के लिए पुरुषों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है। उन्हें किसी भी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं रहती। वे घर की चहारदीवारी के बाहर तक नहीं निकल सकतीं। भारतीय ग्रामों की स्त्रियों की दशा तो और भी शोचनीय है। उनका कार्य सिर्फ चूल्हा-चक्की तक ही सीमित है। पर्दा-प्रथा का अत्यधिक सीमा तक पालन किया जाता है। स्त्रियाँ दासियों के समान रहती हैं।

नगरों में स्त्रियों की स्थिति काफी उच्च होती है। उन्हें हर

प्रकार की स्वतन्त्रता रहती है। वे पुरुषों के साथ कदम से कदम और कन्धा से कन्धा मिला कर चलती हैं। उन्हें भारतीय संविधान द्वारा भी समानता का अधिकार प्राप्त है। उनका कार्य चूल्हा फूँकना ही नहीं है बल्कि वे पुरुषों की ही भाँति दफ्तरों में भी काम करती हैं। राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक—सभी क्षेत्रों में उनका सहयोग रहता है। पुरुषों के समान ही उनका जीवन भी काफी व्यापक होता है। यहाँ पर्दा-प्रथा नहीं होता। उनका जीवन भी दासियों का न होकर गृहिणी एवं स्वामिनी का होता है। शिक्षा ग्रहण करने की भी उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है। इस तरह हम देखते हैं कि ग्रामीण जीवन की अपेक्षा नगरीय जीवन में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी होती है; उन्हें हर कार्य करने की स्वतन्त्रता रहती है। पुरुषों पर सदैव आश्रित नहीं रहना पड़ता।

(२) सामाजिक नियन्त्रण (Social Control) :—

सामाजिक नियन्त्रण के दृष्टिकोण से भी हम नगरीय और ग्रामीण जीवन में भिन्नता पाते हैं। गाँवों में प्राथमिक सम्बन्ध पाये जाते हैं और वे सम्बन्ध ही उनके जीवन को नियन्त्रित करते हैं। पग-पग पर व्यक्ति को परिवार, गोत्र आदि के नियन्त्रण में रहना पड़ता है। वहाँ परम्परागत मूल्यों, प्रथाओं, रूढ़ियों आदि का अनौपचारिक (Informal) नियन्त्रण होता है। ये सांस्कृतिक मूल्य व्यक्ति के व्यवहारों को नियन्त्रित करते हैं, उन्हें बुरा कर्म करने से रोकते हैं। इस प्रकार इन प्रथाओं, रूढ़ियों आदि का ग्रामीण जीवन में काफी महत्त्व होता है। बीसेन्ज और बीसेन्ज ने लिखा है—"ग्रामीण समुदाय में प्रथा शासक होती है और जनरीतियाँ तथा रूढ़ियाँ अधिकांश व्यवहारों को नियन्त्रित करती हैं।"[1] चूँकि ग्रामों में कुटुम्ब का काफी महत्त्व रहता है इसलिए वह भी सदस्यों को प्रथाओं, रूढ़ियों आदि को मानने के लिए मजबूर करता है।

नगरों में सामाजिक नियन्त्रण एक समस्या का विषय है। जनसंख्या की अधिकता, परिवार और समुदाय की शक्ति की न्यूनता के कारण नगरों में काफी पढ़े-लिखे लोग रहते हैं। इसलिए वे ईश्वर, प्रथाओं, रूढ़ियों आदि पर विश्वास नहीं रखते जिससे इन अनौपचारिक संस्थाओं द्वारा भी इनके ऊपर नियन्त्रण नहीं रखा जा सकता। इसीलिए उनके ऊपर नियन्त्रण रखने के लिए पुलिस, कानून, आदि औपचारिक साधन होते हैं जो उनके व्यवहारों

---

1. "In the small community, custom is king, the folk-ways and mores control most of behaviour." Biesanz & Biesanz : Modern Society, p. 114.

को नियन्त्रित और निश्चित करते हैं। प्राथमिक सम्बन्धों के अभाव में व्यक्ति जब चाहे तब इनसे मुक्त हो सकता है। किंग्सले डेविस ने लिखा है—"वह जब भी चाहे, अपरिचितों के सागर में विलीन होकर किसी भी प्राथमिक समूह के कठोर नियन्त्रण से बच सकता है।"[१]

(३) आर्थिक जीवन (Economic Life) :—

नगर और ग्राम के आर्थिक जीवन में भी काफी वैषम्य पाया जाता है। कृषि गाँव की आर्थिक व्यवस्था का मूलाधार है। यही उनका प्रमुख व्यवसाय होता है। सोरोकिन और जिमरमैन तथा ए० आर० देसाई प्रभृत विद्वानों ने तो कृषि को, ग्रामीण और नागरिक जीवन के अन्तर को स्पष्ट करने के हेतु, एक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली कारक माना है। सिम्स महोदय ने भी इस विचार-धारा की पुष्टि करते हुए लिखा है कि "जीविकोपार्जन की दो मौलिक रूप से भिन्न रीतियों ने ग्रामीण और नगरीय विश्व को पृथक कर दिया है।"[२] कृषि के माध्यम से ही प्रत्येक निवासी अपना जीविकोपार्जन करता है। ऐसी बात नहीं है कि कृषि के अतिरिक्त गाँव में कोई अन्य व्यवसाय पाया ही नहीं जाता लेकिन उन व्यवसायों की संख्या कम होती है।

नगरों में हम देखते हैं कि व्यक्तियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि न होकर उद्योग-धन्धे होते हैं। यहाँ आर्थिक जीवन के तीन प्रमुख रूप मिलते हैं—श्रम-विभाजन, विशेषीकरण एवं प्रतिस्पर्धा। नगरीय जनता का सम्बन्ध यन्त्रों और मशीनों से अधिक होता है जिनके माध्यम से वह अपनी जीविका का उपार्जन करता है। गाँवों में कृषि बारहो महीने नहीं बल्कि एक निश्चित समय तक होती है और तदुपरान्त कृषक बेकार बैठा रहता है। जब कि हम नगरों में देखते है कि व्यक्ति के पास कार्य इतना अधिक होता है कि उसे एक मिनट का भी अवकाश नहीं मिलता। वह बारहो मास कार्यरत रहता है।

इसी तरह, हम देखते हैं कि नगरों की अपेक्षा गाँवों का जीवन-स्तर भी काफी गिरा हुआ रहता है। वे नगर के लोगों की अपेक्षा कम खर्चीले भी

---

1. "He can escape the oppressive control of any primary group when he wishes, simply by disappearing into the sea of strangers." Kingsley Davis : Human Society, p. 331.

2. "Two fundamentally different modes of getting a living set the rural and urban world apart". N. L. Sims : op. cit., p. 641.

होते हैं और उनका खान-पान, रहन-सहन, सभी कुछ नगरों से निम्न होता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि अर्थोपार्जन के साधन सीमित होते हैं। इसके अतिरिक्त, समय-समय पर उत्पन्न होने वाले प्राकृतिक प्रकोपों के कारण भी वे जीवन-स्तर को नहीं उठा पाते। वे सदैव बचत करने में ही लगे रहते हैं जबकि नगर वाले बचत कर ही नहीं पाते। चूँकि नगर में मनोरंजन आदि की चीजें भी होती हैं, इसलिए व्यक्ति वहाँ बचत कर ही नहीं पाता। रॉस महोदय ने ठीक ही लिखा है—"ग्रामीण जीवन बचत करने का सुझाव देता है और नागरिक जीवन खर्च करने का।"[1] नगर में फजूलखर्च अधिक है।

दोनों के जीवन-स्तर में भी विभेद होता है। गाँवों में तो सबका समान जीवन-स्तर होता है जब कि नगरों में हम देखते हैं कि किसी का जीवन-स्तर बहुत ही ऊँचा होता है और किसी का अत्यन्त निम्न।

(४) सामाजिक दृष्टिकोण (Social Attitude) :—

हम देखते हैं कि नगर और गाँव के पर्यावरण (Environment) में भिन्नता होती है जिसके फलस्वरूप दोनों के दृष्टिकोणों में भी काफी अन्तर रहता है। गाँव वालों का दृष्टिकोण काफी रूढ़िवादी होता है। वे परम्परात्मक मूल्यों को मानने में ही अपना कल्याण समझते हैं। वे सामाजिक परिवर्तन नहीं चाहते हैं। वर्तमान व्यवस्था के प्रति उनके दृष्टिकोण में काफी कट्टरता पाई जाती है। न्यूमेयर ने इसका बड़ा अच्छा चित्रण किया है—"ग्रामीण संस्कृति रूढ़िवादिता की ओर झुकी हुई है।"[2]

नगरों में शिक्षा का काफी प्रसार और प्रचार होने के कारण लोगों का दृष्टिकोण सीमित न होकर व्यापक हो जाता है जिसके कारण उनमें रूढ़िवादिता नहीं पाई जाती। वे लोग पग-पग पर सामाजिक परिवर्तन के समर्थक होते हैं और परिवर्तन का विरोध करने के स्थान पर स्वागत करते हैं। नगरों में हम नित्य-प्रति परिवर्तन देख सकते हैं। नगरवासी प्रगतिशील विचारधारा के होते हैं और यह स्वाभाविक है कि जो प्रगतिशील विचारधारा का समर्थक होगा, वह सामाजिक परिवर्तन भी चाहेगा। रॉस महोदय ने लिखा है कि—

---

1. "Country life then suggests 'save'. City life suggests 'spend'. E. A. Ross : op. Cit. p. 76.

2. Rural culture tends te be conservation" M. H. Newmeyer : Social Problems and the Changing Society, New York. p. 63.

"नगर जगन्मित्र होता है जब कि ग्राम राष्ट्रवादी और स्वदेशाभिमानी होता है।"[1]

ग्रामीण जनता राजनीति के प्रति एकदम उदासीन रहती है जब कि नगरीय जनता राजनीति में बहुत ही सक्रिय रूप से भाग लेती है। ग्रामवासी चूंकि रूढ़िवादी होते हैं इसलिए धर्म के प्रति उनकी काफी निष्ठा रहती है। ईश्वर में भी उनका पूर्ण विश्वास रहता है। वे आँख बन्द करके धर्म और ईश्वर की आराधना करते हैं। धर्म और ईश्वर के विरुद्ध कोई भी कार्य करना वे पाप समझते हैं। लेकिन हम देखते हैं कि नगरीय जीवन पर विज्ञान का काफी प्रभाव रहता है जिसके फलस्वरूप लोगों में धर्म एवं ईश्वर पर पूर्ण विश्वास नहीं रहता। विज्ञान हर चीज को सत्य की कसौटी पर कसता है। उस पर वाद-विवाद होता है जब कि धर्म विश्वास पर आधृत है न कि तर्क पर। ये लोग अंधविश्वासी नहीं होते। किसी भी कार्य को करने अथवा उस पर विश्वास करने के पूर्व वे विवेक का सहारा लेते हैं। यदि उन्हें वह कार्य उपयुक्त और कल्याणकारी दिखलाई पड़ता है तो वे करते हैं अन्यथा नहीं।

गाँव वाले भाग्यवादी होते हैं। 'जो कर्म में लिखा है वही होगा' इस कहावत के वे कट्टर समर्थक होते हैं। प्राकृतिक प्रकोप आदि को भी वे बुरे कर्म का ही फल मानते हैं। उनका यही विश्वास रहता है कि जो कुछ भी होता है वह सब ईश्वर की कृपा से होता है। चूंकि ईश्वर ही सर्वेसर्वा है, इसलिए इसके द्वारा प्रदत्त परिणामों का भी पालन करना आवश्यक है। उन पर यदि कोई विपत्ति आ पड़ती है तो वे इसको दूर करने के लिए कोई उद्योग किए बिना ईश्वर की याद करते हैं जब कि हम नगरों में देखते हैं कि वे कर्म पर विश्वास ही नहीं करते। उन्हें अपने शक्ति और पौरुष पर विश्वास रहता है जिससे वे बड़ी से बड़ी विपत्तियों को चुटकी बजाते-बजाते दूर कर देते हैं या हाथ पर हाथ रख कर बैठने की जगह उसके निवारणार्थ उद्यम करते हैं। नगर में जो प्राकृतिक विपदाएँ आती हैं उनका सामना करने के लिए नगरवासी वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित रहते हैं।

इसके अतिरिक्त, हम देखते हैं कि गाँव वाले कृत्रिमता नहीं पसन्द करते हैं। वे बहुत ही सीधे-सादे, निष्कपट और सरल हृदय के होते हैं। उनका स्वभाव बहुत निर्मल होता हैं। बोगार्डस ने लिखा है—"गाँव के लोग स्पष्ट

---

1. The city is cosmopolitan, whereas the country is nationalistic and patriotic". E. A. Ross : Principles of Sociology, p. 77.

बक्ता, निष्कपट एवं सत्यनिष्ठ होते हैं। वे नागरिक जीवन के अनेक क्षेत्रों की कृत्रिमता से घृणा करते हैं।"[1] इसके विपरीत, हम नगरो में देखते हैं कि वहाँ की रचना, उसका संगठन ही कृत्रिमता पर आधृत है। वहाँ सौन्दर्य-प्रसाधनों, बनावट एवं शृंगार आदि का बोलबाला रहता है। हर व्यक्ति तड़क-भड़क पसन्द करता है और बड़े टिप-टाप से रहता है। उन्हें पग-पग पर झूठ, फरेब, धोखाधड़ी का सहारा लेना पड़ता हैं। ये जो कुछ भी करते हैं उनमें अधिकांश दिखावटी (Showy) और आडम्बरपूर्ण रहता हैं।

(५) सांस्कृतिक जीवन—(Cultural Life) :—

नगर और गाँव की संस्कृतियों तथा उनके सांस्कृतिक जीवन में मी काफी अन्तर होता है। सूक्ष्म रूप से देखने पर ज्ञात होता है कि ग्रामीण संस्कृति में स्थिरता पाई जाती है। इस सम्बन्ध में नजमुलकरीम ने लिखा है—"वे स्थिर प्रतीत होते हैं जब कि कोई भी वस्तु स्थिर नहीं रहती। एक राजवंश के बाद दूसरा राजवंश समाप्त हो गया, क्रांति के बाद क्राँति होती गई, हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिक्ख और अंग्रेज क्रमशः स्वामी होते गए परन्तु ग्रामीण समुदाय वैसे के वैसे ही रहें।"[2] चूँकि संस्कृति में स्थिरता होती है, फलस्वरूप उनमें कूपमण्डूकता और रूढ़िवादिता की भी भावना कूट-कूट कर भरी रहती है। उनके विचार भी स्थिर रहते हैं। वहाँ परम्परा की पूजा होती है जिसके कारण उनका एक निश्चित जीवन रहता है। जीवन में कोई नवीनता नहीं रहती। सिम्स महोदय ने तो कहा है कि—"कुछ अपवादों को छोड़ कर उनका जीवन भी ऋतुओं के समान निश्चित कालचक्र के अनुसार ही चलता है।"

लेकिन जब हम नगरों के सांस्कृतिक जीवन को देखते हैं तो महान अन्तर परिलक्षित होता है। नगरीय संस्कृति में गतिशीलता अधिक पाई जाती है। नागरिकों के विचारों में भी परिवर्तनशीलता देखी जाती है। यहाँ प्रथा,

---

1. "Rural people are frank, open and genuine; they scorn the artificiality of many phases of city life." E. S. Bogardus : Sociology, p. 133.

2. "They seem to last where nothing else lasts. Dynasty after dynasty tumbles down; revolution succeeds revolution, Hindu, Pathan, Marahatha, Sikh, English are masters in turn, but the village communities remain the same." A. K. Nazmulkarim : Changing Society in India and Pakistan, Oxford University Press, Dacca, (1956) p. 8.

बक्ता, निष्कपट एवं सत्यनिष्ठ होते हैं। वे नागरिक जीवन के अनेक क्षेत्रों की कृत्रिमता से घृणा करते हैं।"[1] इसके विपरीत, हम नगरो में देखते हैं कि वहाँ की रचना, उसका संगठन ही कृत्रिमता पर आधृत है। वहाँ सौन्दर्य-प्रसाधनों, बनावट एवं शृंगार आदि का बोलबाला रहता है। हर व्यक्ति तड़क-भड़क पसन्द करता है और बड़े टिप-टाप से रहता है। उन्हें पग-पग पर झूठ, फरेब, धोखाधड़ी का सहारा लेना पड़ता हैं। ये जो कुछ भी करते हैं उनमें अधिकांश दिखावटी (Showy) और आडम्बरपूर्ण रहता हैं।

(५) सांस्कृतिक जीवन—(Cultural Life) :—

नगर और गाँव की संस्कृतियों तथा उनके सांस्कृतिक जीवन में मी काफी अन्तर होता है। सूक्ष्म रूप से देखने पर ज्ञात होता है कि ग्रामीण संस्कृति में स्थिरता पाई जाती है। इस सम्बन्ध में नजमुलकरीम ने लिखा है—"वे स्थिर प्रतीत होते हैं जब कि कोई भी वस्तु स्थिर नहीं रहती। एक राजवंश के बाद दूसरा राजवंश समाप्त हो गया, क्रांति के बाद क्राँति होती गई, हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिक्ख और अंग्रेज क्रमशः स्वामी होते गए परन्तु ग्रामीण समुदाय वैसे के वैसे ही रहें।"[2] चूँकि संस्कृति में स्थिरता होती है, फलस्वरूप उनमें कूपमण्डूकता और रूढ़िवादिता की भी भावना कूट-कूट कर भरी रहती है। उनके विचार भी स्थिर रहते हैं। वहाँ परम्परा की पूजा होती है जिसके कारण उनका एक निश्चित जीवन रहता है। जीवन में कोई नवीनता नहीं रहती। सिम्स महोदय ने तो कहा है कि—"कुछ अपवादों को छोड़ कर उनका जीवन भी ऋतुओं के समान निश्चित कालचक्र के अनुसार ही चलता है।"

लेकिन जब हम नगरों के सांस्कृतिक जीवन को देखते हैं तो महान अन्तर परिलक्षित होता है। नगरीय संस्कृति में गतिशीलता अधिक पाई जाती है। नागरिकों के विचारों में भी परिवर्तनशीलता देखी जाती है। यहाँ प्रथा,

---

1. "Rural people are frank, open and genuine; they scorn the artificiality of many phases of city life." E. S. Bogardus : Sociology, p. 133.

2. "They seem to last where nothing else lasts. Dynasty after dynasty tumbles down; revolution succeeds revolution, Hindu, Pathan, Marahatha, Sikh, English are masters in turn, but the village communities remain the same." A. K. Nazmulkarim : Changing Society in India and Pakistan, Oxford University Press, Dacca, (1956) p. 8.

"नगर जगन्मित्र होता है जब कि ग्राम राष्ट्रवादी और स्वदेशाभिमानी होता है।"[1]

ग्रामीण जनता राजनीति के प्रति एकदम उदासीन रहती है जब कि नगरीय जनता राजनीति में बहुत ही सक्रिय रूप से भाग लेती है। ग्रामवासी चूंकि रूढ़िवादी होते हैं इसलिए धर्म के प्रति उनकी काफी निष्ठा रहती है। ईश्वर में भी उनका पूर्ण विश्वास रहता है। वे आँख बन्द करके धर्म और ईश्वर की आराधना करते हैं। धर्म और ईश्वर के विरुद्ध कोई भी कार्य करना वे पाप समझते हैं। लेकिन हम देखते हैं कि नगरीय जीवन पर विज्ञान का काफी प्रभाव रहता है जिसके फलस्वरूप लोगों में धर्म एवं ईश्वर पर पूर्ण विश्वास नहीं रहता। विज्ञान हर चीज को सत्य की कसौटी पर कसता है। उस पर वाद-विवाद होता है जब कि धर्म विश्वास पर आधृत है न कि तर्क पर। ये लोग अंधविश्वासी नहीं होते। किसी भी कार्य को करने अथवा उस पर विश्वास करने के पूर्व वे विवेक का सहारा लेते हैं। यदि उन्हें वह कार्य उपयुक्त और कल्याणकारी दिखलाई पड़ता है तो वे करते हैं अन्यथा नहीं।

गाँव वाले भाग्यवादी होते हैं। 'जो कर्म में लिखा है वही होगा' इस कहावत के वे कट्टर समर्थक होते हैं। प्राकृतिक प्रकोप आदि को भी वे बुरे कर्म का ही फल मानते हैं। उनका यही विश्वास रहता है कि जो कुछ भी होता है वह सब ईश्वर की कृपा से होता है। चूंकि ईश्वर ही सर्वेसर्वा है, इसलिए इसके द्वारा प्रदत्त परिणामों का भी पालन करना आवश्यक है। उन पर यदि कोई विपत्ति आ पड़ती है तो वे इसको दूर करने के लिए कोई उद्योग किए बिना ईश्वर की याद करते हैं जब कि हम नगरों में देखते हैं कि वे कर्म पर विश्वास ही नहीं करते। उन्हें अपने शक्ति और पौरुष पर विश्वास रहता है जिससे वे बड़ी से बड़ी विपत्तियों को चुटकी बजाते-बजाते दूर कर देते हैं या हाथ पर हाथ रख कर बैठने की जगह उसके निवारणार्थ उद्यम करते हैं। नगर में जो प्राकृतिक विपदाएँ आती हैं उनका सामना करने के लिए नगरवासी वैज्ञानिक अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित रहते हैं।

इसके अतिरिक्त, हम देखते हैं कि गाँव वाले कृत्रिमता नहीं पसन्द करते हैं। वे बहुत ही सीधे-सादे, निष्कपट और सरल हृदय के होते हैं। उनका स्वभाव बहुत निर्मल होता हैं। बोगार्डस ने लिखा है—"गाँव के लोग स्पष्ट

---

1. The city is cosmopolitan, whereas the country is nationalistic and patriotic". E. A. Ross : Principles of Sociology, p. 77.

परम्परा आदि को विशेष महत्व नहीं दिया जाता। यहाँ की संस्कृति भी असाम्प्रदायिकता पर आधारित होती है। इसके विपरीत हम गाँवों की संस्कृति जातिगत एवं पवित्रता पर आधृत देखते हैं।

(६) जनसंख्या का घनत्व (Density of Population) :—

ग्रामीण समाज की एक मुख्य विशेषता यह है कि यहाँ की जनसंख्या नगरों की अपेक्षा बहुत कम होती है। इसका कारण यह है कि ये लोग कृषि पर निर्भर रहते हैं और कृषि के लिए आवश्यक है कि अधिकाधिक भूमि हो और उसका विस्तार भी काफी हो। जब कृषि-योग्य भूमि अधिक रहेगी तो स्वाभाविक है कि लोगों की आबादी भी कम होगी। इसके विपरीत, नगरों में तो थोड़ी-सी ही भूमि में बड़े-बड़े कारखाने रहते हैं जिनमें हजारों की संख्या में श्रमिक काम करते हैं। अधिकांश श्रमिक तो कारखाने के आस-पास ही रहते हैं जिसके फलस्वरूप नगरों में जनसंख्या का आधिक्य पाया जाता है। सन् १९५१ की जनगणना की रिपोर्ट में भी गाँवों की जनसंख्या के घनत्व में कमी होने का संकेत किया गया है। यह बात इतनी सीधी और स्पष्ट है कि मेरी समझ से इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार के आँकड़े (Datas) या प्रमाण को प्रस्तुत करने की आवश्यकता ही नहीं है।

नगरों में जनसंख्या अधिक होने का कारण यह भी है कि यहाँ विभिन्न जाति, प्रजाति, धर्म, सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। शहरों में सिख, पारसी, ईसाई, मुसलमान, हिन्दू, नीग्रो, अमेरिकन, चीनी, ऐंग्लो-इण्डियन, रूसी, जापानी, सभी रहते हैं जब कि गाँवों में ऐसा नहीं होता है। वहाँ सिर्फ वे ही लोग रहते हैं जो वहाँ के मूल निवासी होते हैं। यदि कोई नया व्यक्ति आता भी है तो वह पास-पड़ोस का ही होता है। इस प्रकार नगरों में विभिन्न लोगों के होने के कारण वहाँ की जनसंख्या खिचड़ी होती है और गाँवों में साधारणतया एक ही प्रजाति के लोग रहते हैं। गाँवों में अधिकांशतः कृषक ही होते हैं और उनका व्यवसाय भी एक ही होता हैं। उनका धर्म, रहन-सहन, भाषा, बोली आदि सभी कुछ समान रहती है जब कि नगरों में ठीक इसके विपरीत स्थिति होती है। यहाँ जितने तरह के लोग रहते हैं उतने ही प्रकार की बोलियाँ, धर्म, भाषा, रहन-सहन आदि भी होता है।

(७) सामाजिक अन्तःक्रिया (Social Interaction) :—

सामाजिक सम्पर्क, सहयोग, प्रतिस्पर्धा, संघर्ष आदि कारकों द्वारा भी नगरीय और ग्रामीण जीवन में विभेद दर्शाया जा सकता है। हम देखते हैं कि गाँव का क्षेत्र चूँकि काफी सीमित और संकुचित होता है इसलिए उसका सामाजिक सम्पर्क भी सीमित होता है। उसका सम्पर्क सिर्फ ग्रामवासियों तक ही रहता

है । नए लोगों से मेल-जोल बढ़ाने का अवसर ही नहीं आता । इसका परिणाम यह होता है कि उनका दृष्टिकोण भी संकुचित हो जाता है और यदि कोई नया व्यक्ति गाँव में आता है तो उसे शंका की दृष्टि से देखा जाता है । वे लोग उससे मिलने-जुलने अथवा ग्रामीण जीवन के बारे में कुछ भी बताने में हिचकते हैं । उनमें कूपमंडूकता की भावना भरी रहती है । लेकिन नगर में हम ठीक इसके विपरीत स्थिति पाते हैं । नगरवासियों का दृष्टिकोण काफी विस्तृत होता है । उन्हें दफ्तरों में, कारखानों में नित्य सैकड़ों व्यक्तियों के साथ संपर्क स्थापित करना पड़ता है । उनसे मिल-जुल कर कार्य करना पड़ता है । यदि उनके साथ मिल-जुल कर कार्य न करें तो वे एक मिनट भी नहीं रह सकते । सामाजिक सम्पर्क होने के कारण उन्हें नए-नए समाचार, नई-नई बातें मालूम होती रहती हैं जिससे उनके ज्ञान का विस्तार भी बढ़ता है । लेकिन गाँवों और नगरों के सम्पर्क में एक खास अन्तर यह है कि गाँवों में जो सम्पर्क होते हैं वे स्थायी, दृढ़ और प्रत्यक्ष होते हैं लेकिन नगरों में सामाजिक सम्पर्क तो सैकड़ों व्यक्तियों से रहता है लेकिन उनमें से बहुत कम लोगों को प्रत्यक्ष रूप से जाना जाता है ।

गाँव में सहयोग की भावना होती है । सब लोग मिल-जुल कर कार्य करते हैं लेकिन अधिकतर यह सहयोग की भावना परिवार तक ही सीमित होती हैं । उसमें स्वार्थ की भावना निहित रहती है । श्रम-विभाजन और विशेषीकरण (Specialisation) सहयोग पर ही आधृत है ।

जहाँ तक प्रतियोगिता अथवा प्रतिस्पर्धा (Competition) का प्रश्न है, हमें गाँवों में अधिक नहीं दिखलाई पड़ती जब कि नगरों में प्रतिस्पर्धा की मात्रा अधिक रहती है । गाँवों में चूँकि प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने कार्य में लगा रहता है जिससे उनमें इसका अभाव रहता है । लेकिन संघर्ष का प्रत्यक्ष और उग्र रूप हमें गाँवों में दिखलाई पड़ता है । जरा-जरा सी बात पर लड़ाई-झगड़ा, मार-पीट अथवा किसी की हत्या कर देना गाँव में बहुत साधारण बात है । अधिकतर संघर्ष भूमि का प्रश्न लेकर होता है । लेकिन नगरों में हमें अप्रत्यक्ष संघर्ष (हड़ताल, तालेबन्दी, दंगे) देखने को मिलता है । नगरों में संघर्ष भूमि का प्रश्न लेकर नहीं बल्कि आर्थिक विषमता के कारण होता है । नगरों के उत्थान में संघर्ष एक प्रत्यक्ष प्रक्रिया थी ।"[1]

---

1. "Conflict was a conspicuous process in the rise of the city." N. L. Sims : Elements of Rural Sociology, (1947) p. 651.

(८) सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility) :—

सामाजिक गतिशीलता का तात्पर्य जनसंख्या का एक स्थान से दूसरे स्थान को विस्थापन(Migration) ही नहीं है अपितु व्यक्ति द्वारा एक पेशें को छोड़कर दूसरा पेशा अपनाना भी है। नगरों की अपेक्षा गाँवों में कम गतिशीलता पाई जाती है। इसे हम सोरोकिन तथा जिमरमैन के शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं—"ग्रामीण समुदाय एक घड़े में शांत जल के समान है और नगरीय समुदाय पतीली में उबलते हुए पानी की तरह है।...एक की विशेषता स्थिरता है तो दूसरे की गतिशीलता।"[1]

गाँवों में स्थिरता का कारण कृषि व्यवसाय का होना है। ग्रामवासियों का जो भी व्यवसाय होता है वह परम्परात्मक होता है और परम्परा से चली आ रही परिपाटी को वे तोड़ना नहीं चाहते। यही कारण है कि एक कृषक का लड़का कृषि-कार्य और एक ब्राह्मण का लड़का पूजा-पाठ, शिक्षा-दान और धार्मिक अनुष्ठानों को ही सम्पादित करता है। धर्म, सामाजिक मान्यताएँ, रूढ़ियाँ, प्रथाएँ तथा प्राथमिक संस्थाओं का नियन्त्रण गतिशीलता को अवरुद्ध कर देता है। इसके विपरीत, नगरों में हमें अत्यधिक गतिशीलता परिलक्षित होती है। वहाँ चूँकि किसी प्राचीन अथवा परम्परात्मक मान्यताओं का पालन नहीं किया जाता और न कृषि ही उनका व्यवसाय होता है, इसलिए वे बड़ी आसानी से एक पेशे को छोड़ कर दूसरे पेशे को अपना लेते हैं। नगरों में एक ब्राह्मण का लड़का भी मोची का कार्य करता दिखलाई पड़ता है। यहाँ व्यक्ति को अपना व्यवसाय बदलने में कोई कठिनाई नहीं होती। प्रायः एक ही परिवार के व्यक्ति विभिन्न प्रकार के व्यवसायों द्वारा जीविकोपार्जन करते हैं। नगरवासियों के दृष्टिकोणों में भी गतिशीलता देखी जा सकती है। वे सदैव नित्य नवीन परिवर्तनों की अभिलाषा करते रहते हैं और उस परिवर्तन का स्वागत भी करते हैं। वे रहन-सहन तथा जीवन-यापन के नवीन ढंगों को शीघ्र ही अपना लेते हैं। नगरों में स्थान-परिवर्तन भी अत्यधिक सीमा तक होता है। लेकिन गाँव में यह सम्भव नहीं हो पाता। नगरों में राजनीति, धर्म, शिक्षा आदि के कारण भी सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि हो जाती है। गाँवों में इन सब कारकों का प्रभाव बहुत कम होता है।

---

1. "The rural community is similar to calm water in a pail and the urban community to boiling water in a kettle. Stability is the typical trait for the one, mobility is the typical for the other." Sorokin & Zimmerman : Principle of Rural-Urban Sociology, (1929) p. 44.

(९) सामाजिक विघटन (Social Disorganisation) :—

सामाजिक विघटन का तात्पर्य एक ऐसी स्थिति से है जब सामाजिक नियन्त्रण के साधनों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है जिससे सामाजिक-व्यवस्था ठीक तरह से नहीं चल पाती। मूल्यों, परम्पराओं, आदर्शों में सन्तुलन नहीं रह पाता और न लोग इसके अनुसार कार्य ही करते हैं। इस दृष्टिकोण से देखने पर ज्ञात होता है कि चूँकि ग्रामीण समाज का मूलाधार ही परम्पराएँ और प्रथाएँ हैं इसलिए वहाँ वैयक्तिक विघटन उत्पन्न ही नहीं हो पाता। परिणाम-स्वरूप न तो उनमें मानसिक संघर्ष ही और न निराशा ही उत्पन्न होती है। नशाखोरी, आत्महत्याएँ, वैश्यावृत्ति, मद्यात्यय आदि विघटनात्मक प्रवृत्तियों का भी जन्म नहीं हो पाता और यदि होता भी है तो नगरों की अपेक्षा बहुत कम। नगरों में इन सब प्रवृत्तियों को दैनंदिन के जीवन में देखा जा सकता है। इन सब प्रवृत्तियों को अपनाने का मुख्य कारण मानसिक दुश्चिन्ता और परेशानी से छुटकारा पाना है। इसलिए वैयक्तिक विघटन के साथ ही साथ सामाजिक और पारिवारिक विघटन भी नगरों में अधिक पाया जाता है। गाँवों में विवाह-विच्छेद (Divorce), परित्याग, पृथक्करण आदि पारिवारिक विघटन के प्रकार बहुत कम पाए जाते हैं जब कि नगरों में इनकी प्रबलता बड़ी आसानी से देखी जा सकती है।

विधवा-विवाह की समस्या गाँवों में अत्यधिक पाई जाती है। परम्परा और रूढ़िवादिता पर आधारित होने के कारण ग्रामवासियों का दृष्टिकोण और उनकी मनोवृत्ति भी रूढ़िवादी हो जाती है और वे विधवा-विवाह पाप समझते हैं। गाँवों में विधवाओं की बड़ी शोचनीय स्थिति होती हैं। वे अपवित्रता की द्योतक होती हैं। किसी हर्षोत्सवों में सम्मिलित होना उनके लिए निषिद्ध होता है। इस प्रकार उनकी बड़ी गिरी हुई दशा होती है। उनका जीवन नारकीय होता है। लेकिन नगरों में यह समस्या इतनी भयंकर नहीं होती क्योंकि यहाँ पुनर्विवाह की प्रथा है। इसके अतिरिक्त, नगरों में आर्थिक विघटन का भी रूप बहुतायत से देखने को मिलता है। दरिद्रता, बेरोजगारी, भिक्षावृत्ति तथा आर्थिक स्थिति में मन्दी होने के कारण अनेक आर्थिक थपेड़े आते रहते हैं जिसकी वजह से लोगों का सामाजिक जीवन विघटित हो जाता है। वे समाज में अपने को अभियोजित नहीं कर पाते। इसका परिणाम यह होता है कि नगरों में चोरी, डाका, लूट, हत्या, बलात्कार आदि अपराधों का आधिक्य हो जाता है और लोग अपराधी मनोवृत्ति के हो जाते हैं।

नगरीय और ग्रामीण समाज की एक खास बात यह भी है कि गाँवों में

बाल-अपराधी नहीं के बराबर होते हैं जबकि नगरों में इनकी बहुलता होती है। नगरों में अपराध करने के तरह-तरह के प्रकार (Types) होते हैं लेकिन गाँवों में इनका अभाव पाया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सामाजिक विघटन भी नगरीय और ग्रामीण समाज की तुलना में एक महत्वपूर्ण कारक है।

(१०) सामाजिक संस्तरण (Social Stratification) :—

पद और उत्तरदायित्व के लिए प्रत्येक समाज में संस्तरण आवश्यक है। इस संस्तरण के कारण समाज अनेक श्रेणियों में विभक्त हो जाता हैं। गाँव और नगरों में जाति और वर्ग के सिद्धांत भिन्न होते हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि ग्रामीण समाज में नागरीय समाज की अपेक्षा सामाजिक वर्गों की संख्या बहुत कम होती है। नगरों में अनेक वर्ग और जातियाँ होती हैं। बोगार्डस ने लिखा है—"अत्यधिक विषमतायें नगर का लक्षण हैं।"[1] नगरों के पारस्परिक वर्गों में जितनी दूरी होती है उतनी गाँवों के वर्गों में नहीं होती। नगर में करोड़पतियों, लखपतियों के साथ ही साथ भूख से तड़पते वर्ग भी मिलेंगे। लेकिन गाँवों में सामाजिक स्तर की दूरी इतनी अधिक नहीं मिलेगी। नगर में लखपती और उच्चाधिकारी निम्न वर्ग के लोगों से बहुत कम सम्पर्क रख पाते हैं लेकिन गाँवों में ऐसा नहीं होता। वहाँ तो बड़े से बड़ा आदमी भी छोटे से छोटे व्यक्ति से परिचित होता है। गाँव का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भलीभाँति परिचित होता है। नगर में यह सम्भव नहीं है। नगरों में जाति-पाँति के बंधन ढीले अवश्य हो जाते हैं जिससे एक जाति के लोगों को अन्य जाति के लोगों से सम्पर्क स्थापित करने में सरलता होती है लेकिन गाँवों में जाति-प्रथा अत्यन्त कठोर होती है।[2] एक जाति का व्यक्ति दूसरी जाति के व्यक्ति के यहाँ उठ-बैठ नहीं सकता। उसके यहाँ एक गिलास पानी तक नहीं पी सकता। जाति-प्रथा की कठोरता का ही परिणाम है कि गाँवों में शूद्रों की छाया तक पड़ना अपशकुन माना जाता है। शूद्रों की बड़ी दयनीय स्थिति होती है। वे राजमार्ग, सार्वजनिक अस्पताल आदि का लाभ नहीं उठा सकते। गाँवों में इन शूद्रों की स्थिति का वर्णन महात्मा गांधी ने इस तरह किया है—"सामाजिक दृष्टि से वे कोढ़ी हैं। आर्थिक दृष्टि से वे गुलामों से भी बदतर हैं। धार्मिक दृष्टि से उनका उन

---

1. "Class extremes characterise the city." E. S. Bogardus : Sociology, p. 144.

2. S. R. Tripathi : Encyclopeadia of Sociology, p. 209.

स्थानों में, जिन्हें हम भ्रम से भगवान का घर कहते हैं, प्रवेश निषिद्ध है। उन्हें सार्वजनिक मार्ग, सार्वजनिक विद्यालय, सार्वजनिक अस्पताल, सार्वजनिक कुयें, सार्वजनिक नल, सार्वजनिक पार्क तथा अन्य इसी प्रकार के स्थानों का प्रयोग निषिद्ध होता है। कुछ मामलों में निश्चित दूरी के अन्दर उनका प्रवेश सामाजिक अपराध है तथा कुछ न्यून मामलों में उनका दर्शन भी अपराध है। उन्हें नगरों तथा ग्रामों में अत्यन्त निकृष्ट भवन निवास के लिए दिए जाते है जहाँ किसी प्रकार की सामाजिक सेवाओं का प्रबंध नहीं होता। सवर्ण हिन्दू वकील तथा डाक्टर उनके कार्य नहीं करते। ब्राह्मण उनके धार्मिक उत्सवों पर पुरोहित नहीं बनते।"[१]

इस प्रकार हम देखते हैं कि गाँव में कितना कठोर संस्तरण होता है। ऊँच-नीच का भेद-भाव तो बुरी तरह से गाँवों में पाया जाता है। लेकिन इसके विपरीत, नगरों में संस्तरण की इतनी कठोरता नहीं पाई जाती। नगरों का दायरा इतना विस्तृत होता है, लोगों के पास कार्य इतना अधिक रहता है कि उन्हें एक दूसरे की जाति-पाँति के सम्बन्ध में पूछने का अवसर ही नहीं मिलता। सभी एक साथ कार्य करते हैं, एक ही स्थान पर रहते हैं और होटलों में एक ही मेंज पर बैठ कर खाते-पीते हैं।

---

1. "Socially they are lepars. Economically they are worse than slaves. Religiously they are denied entrance to places we miscall 'House of God'. They are denied the use on the same terms as the Caste Hindu of public roads, public schools, public hospitals, public wells, public taps, public parks and the like. In some other cases, there approach within a measured distance is a social crime, and in some other rare enough cases there very sight is an offense. They are relegated for their residence to the worse quarters of cities and villages, where they practically get no social services. Caste Hindu lawyers and doctors will not serve them. Brahmins will not officiate at their religious functions." M. K, Gandhi : Quoted in 'Harijans Today'; The Publication Division, Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India, New Delhi (1955) p. 1–2.

अभी ऊपर कुछ मूलभूत कारकों का उल्लेख किया गया है जिनके आधार पर ग्रामीण और नगरीय जीवन के बीच विभेद किया जा सकता है। लेकिन ये सब कारक एक आदर्श ग्राम और आदर्श नगर में ही पाए जाते हैं। हम गाँव और नगर को अलग-अलग नहीं कर सकते। दोनों में पारस्परिकता और अन्योन्याश्रितता काफी अंश तक होती है। गाँव नगर पर और नगर गाँव पर आश्रित रहता है। इसलिए दोनों के बीच कोई एक निश्चित विभाजन रेखा खींच कर उनमें अन्तर स्पष्ट नहीं किया जा सकता। एक के अभाव में दूसरे की कल्पना करना भी कठिन होगा। अतः हमें नगर और ग्राम, दोनों की आवश्यकता है।

अध्याय ४

नगर के परिस्थितिक प्रतिमान

(Ecological Patterns of the City)

ग्रामीण बस्तियों की भूमिगत (Spatial) व्यवस्था मूलतः भौगोलिक दशाओं पर निर्भर करती है। भूमि की उर्वरता अथवा उसके किसी अन्य गुणों की उपयुक्तता को देख कर ही किसान किसी स्थान का चुनाव करता है। इस भूमिगत चयन को हम व्यक्तिवादी कह सकते हैं क्योंकि चुनाव करते समय वह पास-पड़ोस की परवाह नहीं करता। जहाँ उसे लाभ दिखलाई पड़ता है उसी स्थान का वह चुनाव करता है। अतः स्थानगत व्यवस्था अनियन्त्रित और नियमविहीन होती हैं। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि गाँव का परिस्थितिक प्रतिमान (Ecological Pattern) अनियन्त्रित और नियमविहीन होता है। इसलिए यहाँ विकास की कोई एक पद्धति नहीं अपनाई जा सकती।

इसके विपरीत, हम नगरीय बस्तियों के रूप को इससे भिन्न पाते हैं। नगरों के प्रतिमान नियन्त्रित एवं नियोजित होते हैं जिन्हें देखा, मापा और अभिव्यक्त किया जा सकता है। नगरों में लोग एक ही स्थान पर एकत्रित नहीं रह सकते जब कि ग्रामों में लोग एक ही स्थान पर रहते हैं। नगरों में भूमिगत क्रम (Spatial Order) स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यह भौगोलिक दशाओं पर नहीं निर्भर करता है।

नगरों में बहु-क्रियात्मक व्यवस्था (Multi-functional Settlement) होती है जो अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करती है। प्रत्येक कार्य के लिए एक निश्चित स्थान निर्धारित रहता है। इस प्रकार, हम देखते है कि नगरों में विभिन्न प्रकार की इकाइयों के (Units) होते हुए भी वह पूर्ण रूप से अन्तःसम्बन्धित (Interrelated) रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि सामाजिक शक्तियों के द्वारा ही किसी नगर का परिस्थितिक

आवास और दफ्तरों या कारखानों के मध्य जो विभाजन आ गया है उसके परिणाम को हम प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। नगरीय जीवन और कार्य स्थल तथा आवास गृह के बीच बड़ी तीव्रता के साथ विभाजन हो रहा है जबकि गाँवों में अभी भी वही प्राचीन परम्परा है। किसान अविभाज्य इकाई हैं। नगरों में श्रमिकों का कार्य और यंत्रों के साथ अटूट सम्बन्ध है। उनके लिए समय का काफी मूल्य है। उनका जीवन समय के साथ नियंत्रित है। इस नियंत्रितता का सबसे बड़ा परिणाम यह है कि नगरों का श्रमिक फुर्सत के समय ही अपने परिवारवालों को देख सकता है। वह इतना व्यस्त रहता है कि उसे परिवार की तरफ ध्यान देने की फुर्सत ही नहीं मिलती। इस व्यस्तता के कारण एक नगरीय के परिवारों में गम्भीर समस्या उत्पन्न हो जाती है।

जब एक बार आवास और व्यापार क्षेत्र अलग हो जाते हैं तो प्रकार्यात्मक विभेदीकरण (Functional Differentiation) प्रारम्भ हो जाता है। जहाँ तक आवास से सम्बन्धित प्रकार्यात्मक विभेदीकरण का प्रश्न है, अमेरिकनों का (कुछ अपवादों को छोड़ कर) विचार एक ही परिवार वाले घर में रहने का है। इसी प्रकार, व्यापार-क्षेत्र भी प्रकार्यात्मक विभेदीकरण की प्रक्रिया से गुजरता है और एक ही प्रकार की क्रियाएँ विशिष्ट क्षेत्रों में केन्द्रित होती हैं। इस तरह हम नगर-केन्द्र और बाजार केन्द्र के क्षेत्र को प्रकाश और भारी उद्योगों, मनो-रंजन के साधनों आदि से परिपूर्ण पाते हैं। जितना ही बड़ा नगर होगा उपखंडों (Sub-division) की संख्या भी उतनी ही अधिक होगी।

व्यापार क्षेत्र और आवास क्षेत्रों के मध्य विभाजन दृढ़ क्षेत्रीय नियमों (Zoning Laws) द्वारा होता है। किसी भी आवासीय क्षेत्र को व्यापार से पूर्ण स्वतन्त्र नहीं रखा जा सकता। जितने भी आवासीय भाग होते हैं वहाँ चर्च, स्कूल, स्टेशन, पंसारी एवं अन्यान्य सुविधाजनक वस्तुओं की दुकानें होती हैं।

(ख) वर्ग विभाजन (Class Separation) :—

जहाँ अधिक विभेदीकृत सामाजिक व्यवस्था होती है वहाँ वर्ग-विभाजन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। प्राचीन काल के नगरों तथा मध्ययुगीन शहरों के आवासीय क्वार्टरों (Housing Quarters) में तीन वर्ग स्पष्टतः परिलक्षित होते थे—आभिजात्य वर्ग का महल, साधारण लोगों के घर तथा गरीबों के झोपड़े। यह विभाजन प्रकार्यों (Functions) के आधार पर नहीं बल्कि संरचनात्मक विभेदीकरण (Structural Differentiation) के कारण था। वर्ग-विभेद अनेक मापदण्डों (Criteria) पर आधृत है :—

प्रतिमान (Ecological Pattern) निर्धारित होता है। इसमें कई प्रकार की प्रक्रियाएँ होती हैं लेकिन उनमें से तीन महत्त्वपूर्ण हैं जिनके आधार पर परिस्थितिक प्रतिमान का निर्धारण होता है।

(क) प्रकार्यों की भिन्नता (Differences of Functions) :—

यह बहुत ही साधारण और स्वाभाविक बात है कि व्यक्ति जिस स्थान पर कार्य करता है, वहीं उसे रहना भी चाहिए। जहाँ तक कृषि-व्यवस्था का सम्बन्ध है कृषक अभी भी वैसा ही करते हैं अर्थात् उनकी जहाँ जमीन होती है उसके निकट ही उनका निवास स्थान भी होता है। नगरों में भी बहुत दिनों तक ऐसी व्यवस्था थी। राजा अपने महल में, सिपाही अपने बैरकों में तथा पुरोहित मन्दिरों में रहते थे। कारीगरों अथवा श्रमिकों के लिए उनका कारखाना ही रहने का एक अंग था। प्राचीन औद्योगिक काल में हम देखते हैं कि आवास, दफ्तर और कारखाना, अक्सर एक ही स्थान पर होते थे। लेकिन औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ज्यों-ज्यों औद्योगिक विकास होता गया, इस व्यवस्था में भी परिवर्तन आता गया और यह प्रक्रिया समाप्त होने लगी। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के फलस्वरूप लोगों की चिन्तन-पद्धति में भी परिवर्तन आने लगा। लोग ऊँचे स्तर पर चिन्तन करने लगे और यहीं से आवास तथा कार्य-स्थलों के बीच विभाजन प्रारम्भ हो गया जिससे नगरों का विकास हुआ।

आधुनिक औद्योगिक प्रगति ने यातायात व्यवस्था में अभूतपूर्व सुधार किये हैं और इस सार्वजनिक यातायात व्यवस्था का लोगों ने हार्दिक रूप से स्वागत किया जिसके फलस्वरूप प्रक्रिया और आगे बढ़ चली। प्राचीन काल में हमने देखा था कि लोग जिस स्थान पर कार्य करते थे वहीं रहते भी थे। इसका कारण यह था कि श्रमिक दूर दूर से आते थे। अत: यातायात की अच्छी सुविधा अथवा व्यवस्था न होने के कारण वे नित्य शाम को घर वापस नहीं लौट सकते थे। फलस्वरूप विवश होकर उन्हें कार्य-स्थल पर ही रहना पड़ता था। लेकिन आज औद्योगिक विकास के कारण यातायात व्यवस्था का काफी विस्तार हो चुका है जिससे दूरी (Distance) का प्रश्न ही नहीं रह गया है। अब दफ्तरों और कारखानों में रहना किसी भी दशा में आवश्यक नहीं है। बर्जेल[1] महोदय ने उदाहरण देते हुए लिखा है कि जो व्यक्ति वाल स्ट्रीट (Wall Street) में कार्य करते हैं वे अन्यत्र भी रह सकते हैं। उनके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे वाल स्ट्रीट में ही रहें।

---

1. E. E. Bergel : Urban Sociology. Mc Graw Hill Series.

(i) **स्थिति** (Location) :—वर्ग-विभेद के मापदण्डों में स्थिति का काफी महत्वपूर्ण स्थान है। नगरों में भिन्न-भिन्न प्रकार के निवास स्थान होते हैं। ये निवास-स्थान अधिकतर रहने वालों की आय, रहन-सहन के ढंग तथा परिस्थिति के अनुसार विभाजित रहते हैं। बोस्टन (Boston) में लुइसवर्ग स्क्वायर (Louisburg Square) के क्वार्टर उन्हीं को मिलते हैं जिनकी सामाजिक प्रतिष्ठा काफी होती है और यह प्रतिष्ठा परम्परात्मक होती है। यदि प्रतिष्ठा में कमी आने लगती है तो उन लोगों को अन्यत्र जाना पड़ता है। इन स्थानों में गन्दगी नहीं होती, कम धुआं होता है और निचले स्थानों पर पानी प्रवेश करने की कम संभावना रहती है। शोर-गुल भी नहीं होता है। पहाड़ों, जंगली क्षेत्रों या पार्कों में रहना भी सामाजिक विभेद का प्रतीक है।

जहाँ औद्योगिक संस्थान होते हैं वहां हम निम्न वर्ग के आवासों को पाते हैं क्योंकि वह स्थान अधिकांशतः उन उद्योगों में कार्य करने वाले श्रमिक वर्ग से संबंधित होते हैं। यदि समुद्र तट अथवा झील के किनारों पर औद्योगिक संस्थान नहीं होते तो ऐसे स्थानों पर हम उच्च वर्ग के आवास-गृहों को पाते हैं क्योंकि ये लोग खुले स्थान को ही अधिक पसन्द करते हैं। मैनहट्टन (Manhattan) में कार्ल शुर्ज पार्क (Carl Schurz Park) ऐसा ही खुला स्थान है जहाँ उच्च-वर्ग के लोग रहते हैं। लेकिन यदि व्यावहारिक रूप में देखा जाय तो उच्च-वर्ग के लोग नदियों के किनारे मकान बनवाने के पक्ष में नहीं होते हैं क्योंकि वे लोग खूबसूरत सा छोटा-मोटा बँगला बनवाते हैं जिसके जलप्लावित होने का भय उन्हें सदैव बना रहता है। इसीलिए वे नदियों के तट पर मकान बनवाने के पक्ष में नहीं होते।

उच्च-वर्ग के लोग, जिनके लिए समय का कोई मूल्य नहीं होता, शोर-गुल, भीड़-भाड़ और मुख्य एवं सार्वजनिक मार्गों से दूर रहते हैं। लेकिन इसके पश्चात् भी वे उसी स्थान पर मकान बनवाना चाहते हैं जहाँ से दुकानें एवं बाजार अधिक दूर न हों; जहाँ से सरलतापूर्वक सर्वत्र पहुँचा जा सके। जो क्षेत्र ऐसे स्थानों से दूर होते हैं वे निम्न आवासीय क्षेत्र होते हैं और वहाँ निर्धन वर्ग के लोग ही रहते हैं क्योंकि वे अधिक किराया आदि नहीं दे सकते। मध्यम वर्ग के लोग उस स्थान पर रहते हैं जहाँ यातायात स्थल होते हैं। उदाहरण के लिए, न्यूयार्क में 'क्वीन्स'। उच्च वर्ग के लोग इतनी अधिक दूर रहते हैं कि उन्हें मोटर-कार आदि रखना आवश्यक होता है। निम्न आय वाला समूह इन दोनों समूहों के बीच रहता है। जैसे, अमेरिका के कोरोना (Corona), वुडसाइड (Woodside) और लाँग आइलैंड (Long Island) आदि ऐसे स्थल हैं जहाँ निम्न आय वाले रहते हैं। अतः हम

देखते हैं कि धनिक और गरीब, दोनों मुख्य केन्द्र से बहुत दूर रहते हैं। लेकिन जो अत्यन्त गरीब होते हैं, वे मुख्य व्यापारिक केन्द्र के इतने निकट रहते हैं कि वहाँ से वे अपने कार्य-स्थल तक पैदल ही जा सकें। इस प्रकार वे सवारी का दाम बचा लेते हैं।

(ii) **मकानों के आकार एवं प्रकार** (Size and Types of Houses) :—वर्ग-संरचना (Class Structure) में मकानों के आकार-प्रकार का भी काफी महत्व है। नगरों में धनिक वर्ग बड़े-बड़े शानदार भवनों में रहता है जिनमें अधिकांश ताप-नियन्त्रित सामग्रियों से सुसज्जित होते हैं। मध्यम वर्ग के लोग सामान्यतया एक परिवार वाले मकानों में रहते हैं जिनका अधिक किराया नहीं होता। निम्न-वर्ग वाले सस्ते मकानों तथा एक-एक कमरों में रहते हैं। कहीं-कहीं तो बहुत से लोग एक साथ ही रहते हैं; एक ही मकान में दो से छः परिवार तक के लोग रहते हैं। जो अत्यधिक निर्धन (Poorest) होते हैं वे एक साथ मिल कर मकान के किसी हिस्से में, नम जगहों पर, झोपड़ी अथवा तहखानों में रहते हैं।

धनी व्यक्तियों के यहाँ प्रत्येक व्यक्ति के लिए अलग-अलग शयन-कक्ष, अध्ययन-कक्ष, मनोरंजन-कक्ष, अतिथि-भवन और नौकरों के लिए अलग कमरे होते हैं। उच्च मध्यय-वर्ग के यहाँ सिर्फ एक खाली शयन-कक्ष होता है। निम्न आय वाले किसी के आ जाने पर अपने शयन-कक्ष को ही अतिरिक्त शयन-कक्ष के रूप में प्रयोग करने को बाध्य रहते हैं। जो अत्यधिक निर्धन वर्ग होते हैं उनके पास तो एकदम बेकार और अनुपयुक्त क्वार्टर होते हैं जिनमें प्रत्येक आयु और लिंग के लोगों की भीड़ रहती है। उनके पास अतिरिक्त जगह जरा भी नही रहती जिससे उनके बाल बच्चे सड़कों पर खेलते-कूदते हैं जिसका कभी कभी प्राणघातक परिणाम भी देखने को मिलता है।

(iii) **विशेषता** (Quality) :—मकान की आन्तरिक विशेषता भी आर्थिक दशाओं को दर्शाती है। इसके वर्णन की कोई आवश्यकता ही नहीं है। इसलिए आवश्यक है कि मकान में निवास करने वालों की आन्तरिक दशा का भी अध्ययन किया जाय। हम यह देखें कि किस प्रकार के लोगों ने मकान पर अधिकार जमा रखा है, अर्थात् मकान के आंतरिक संगठन और संरचना का भी अध्ययन अपेक्षित है!

(iv) **सहायक चीजें** (Accessories) :—सहायक चीजें, वर्ग स्थिति के आर्थिक दशा या खर्च का ही उद्‌घाटन नहीं करतीं बल्कि वे उस जीवन-शैली भी दर्शाती हैं जिसे एक विशिष्ट वर्ग बनाए रखना चाहता है। मकान

के टूटने-फूटने पर व्यक्ति उसकी मरम्मत करवा सकता है कि नहीं, यह भी उसके वर्ग-स्थिति का संकेत करता है।

इस प्रकार हमने देखा कि अनेक कारक हैं जो वर्ग विभेद दर्शाते हैं।

(ग) सांस्कृतिक पृथक्करण (Cultural Segregation) :—

उपरोक्त विवेचनाओं से स्पष्ट हो गया कि वर्गों पर समाज के आर्थिक विभाजन के रूप में चिन्तन किया गया है। लेकिन कुछ कारकों ने यह संकेत किया है कि सिर्फ आय और स्वामित्व के आधार पर इस समस्या पर पहुँचना अतिसरलीकरण (Over Simplification) है। प्रायः यह देखने में आया है कि कुछ लोगों ने अच्छे क्वार्टरों में रहने के लिए अनेक महत्वपूर्ण त्याग किए हैं। इसके विपरीत, कसाई, पर्यटक, पंसारी, आधे दामों पर कपड़े बेचने वाले अपेक्षाकृत गन्दी व गरीब बस्तियों में रहते हैं। हालाँकि आर्थिक रूप से वे गतिशील हो चुके हैं फिर भी वे ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि वे उस समूह के मूल्यों में भाग लेना चाहते हैं जिसमें से वे आए हैं और जिसमें अभी भी रहते हैं। वे, स्पष्ट रूप से, विभिन्न सांस्कृतिक मानदण्डों के साथ अपने समूह में संतोष का अनुभव करते हैं।

प्रायः देखा जाता है कि दफ्तर या कारखानों में विभिन्न वर्गों के लोग एक ही कार्य करते हैं लेकिन रहते अलग-अलग हैं। इस प्रकार आवास-संबंधी पृथक्करण में वर्ग विभेद देखा जा सकता है। वर्ग विभेद का परिस्थितिक (Ecological) महत्व इस तथ्य में रहता है कि विभिन्न वर्गों के लोग विभिन्न क्षेत्रों में रहते है। सांस्कृतिक पृथक्करण का परिस्थितिक महत्व इस बात में रहता है कि यह किसी भी प्रकार से वर्ग विभाजन के लिए सीमित है। अमेरिकी नगरों में पृथकत्व स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अमेरिका में प्राचीन काल से ही साँस्कृतिक पृथकत्व को एक संस्था के रूप में मान्यता दी गई है। यदि समूह संस्कृति में भिन्न रहते हैं तो उन्हें अलग रहना पड़ता है। उन्हें कम से कम सामाजिक होना पड़ता है। सांस्कृतिक पृथकत्व ही संरचनात्मक विभेदों में परिवर्तित हो जाते हैं।

आजकल अमेरिकी नगरों का आवास-क्षेत्र हिस्सों (Sections) में पुनः बाँट दिया गया है जिसमें विभिन्न समूहों के लोग रहते हैं जो सांस्कृतिक रूप से भिन्न होते हैं। सांस्कृतिक भिन्नता का जन्म जातीय, धार्मिक और राष्ट्रीय विभिन्नताओं से होता है। इनमें से किसी भी प्रकार के सांस्कृतिक विभेद जैविक (Biological) गुणों के आधार पर आनुवंशिक नहीं हैं बल्कि अर्जित किए गए हैं। इनमें से यदि एक या अनेक विभिन्नता के कारण, सामाजिक रूप

से पृथक हो जाते हैं तो वे अपनी एक नवीन संस्कृति उत्पन्न कर लेते हैं। जो समूह उसकी विशिष्ट प्रकृति से परिचित रहते हैं वे भी 'हम' की भावना (We feeling) विकसित कर लेते हैं। इस प्रकार से संस्कृतियों की उत्पत्ति एवं उनमें विभाजन होता रहता है।

अन्त:समूह (In group) की सुविधाएँ और वाह्य समूह (Out-group) की अस्वीकृति ही विभाजन को प्रेरित करती है। लेकिन वास्तविक विभाजन निम्नलिखित कारकों पर आधारित होता है जिनका अत्यधिक महत्व है :—

(i) **संख्याएँ** (Numbers) :—होमर हायट[1] (Homer Hoyt) ने कहा है कि जब तक अल्पसंख्यक वर्गों की संख्या काफी है किसी भी प्रकार का विभाजन संभव नहीं हो सकता। विदेशियों का एक अल्प समूह सामाजिक रूप से अस्वीकृत हो सकता है लेकिन इससे भूमिगत (Spatial) विभाजन उत्पन्न नहीं होता। विभाजन उसी समय होता है जब संख्या अधिक होती है और स्थान का अभाव होता है।

(ii) **आर्थिक स्थिति** (Economic Position)—अल्पसंख्यक समूह की जितनी कम आय होती है संभवत: उतना ही अधिक विभाजन उत्पन्न होता है।

(iii) **प्रतिस्थापित अमेरिकन मानकों से उत्पन्न सांस्कृतिक विचलन की मात्रा** (Degree of Cultural Derivation from established American Standards)—यदि अल्पसंख्यक समूह इन मानकों (Standards) के अनुकूल है तो विभाजन कम ही उत्पन्न होगा। प्रतिकूल होने पर ही विभाजन होता है।

(iv) **अल्पसंख्यक समूह की संस्थागत अस्वीकृति** (Institutionalised Rejection of a Minority Group) :—इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण दक्षिण में, नीग्रो में देखा जा सकता है। नीग्रो बिना संस्थागत विचारों का उल्लंघन किए भूमिगत (Spatial) अलगाव नहीं कर सकते। इस पर विजय प्राप्त करने के लिए उन्हें विस्तृत जनसंख्या के संस्थागत विचारों को तोड़ना ही पड़ेगा।

(v) **वर्ग प्रस्थिति** (Class Status)—समाज व्यवस्था में उच्चतम

---

1. Homer Hoyt : The Structure & Growth of Residential Neighbourhood.

या निम्नतम स्तर पर ही विभाजन अधिक होता है। उच्च वर्गों में निम्न वर्गों की अपेक्षा अधिक विभाजन होता है।

(vi) **रूढ़िवादिता की मात्रा** (Degree of Conservatism)—यहाँ पर 'रूढ़िवादिता' शब्द का प्रयोग मनोवैज्ञानिक अर्थ में किया गया है न कि किसी राजनैतिक अर्थ में। एक समूह जितना ही रूढ़िवादी होगा उसमें वर्तमान संस्कृति को प्राप्त करने की चाह और बहुसंख्यकों के सांस्कृतिक व्यवस्था को अस्वीकार करने की प्रवृत्ति होगी। इस प्रकार यह समूह-सम्बन्धों और भूमिगत पृथक्करण को नियन्त्रित करती है।

अध्याय ५

परिस्थितिक प्रतिमानों में परिवर्तन

(Changes in Ecological Pattern)

पिछले अध्याय में यह व्याख्या की गई है कि यदि एक नगर स्थिर हो तो उसके नगरीय प्रतिमान क्या होंगे ? लेकिन नगर कभी भी स्थिर नहीं होता। उसमें सदैव परिवर्तन होता रहता है। व्यापार में मन्दी तथा विस्तार, नगरों के भीतरी तथा बाहरी सिरों पर उद्योगों का चलन और लोगों के आने-जाने की क्रिया सदैव चलती रहती है। नगरीय जनसंख्या और क्षेत्र में वृद्धि और अवनति होती रहती है। ये सब परिवर्तन नगरों की रूपरेखा बदल देते हैं लेकिन अचानक नहीं बल्कि एक निश्चित और क्रमिक व्यवस्था के रूप में। जिस प्रकार कुछ शक्तियाँ नगरों के प्रतिमान को आकार प्रदान करती हैं, उसी तरह कुछ अन्य शक्तियाँ भी होती हैं जो इन प्रतिमानों को परिवर्तित भी कर देती हैं। ये शक्तियाँ कभी-कभी ध्रुवीय (Polar) होती हैं। वे साथ-साथ रहती हैं फिर भी एक दूसरे का विरोध करती हैं। उदाहरण के लिए, केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति के साथ-साथ विकेन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति भी होती है। केन्द्रीयकरण का अर्थ ही नगरीय प्रतिमानों की प्रतिस्थापना करना है जब कि विकेन्द्रीयकरण इन प्रतिमानों को तोड़ता है, सामाजिक मानदण्डों का उल्लंघन करता है।

वाणिज्य क्षेत्र में भी इस तरह की विभिन्नता पाई जाती है। बड़े पैमाने के उद्योग, थोक व्यापारी एवं बड़े-बड़े दुकानदार जो महत्त्वपूर्ण वस्तुओं का लेन-देन करते हैं, नगर के बीचोबीच अपने व्यापार का एक केन्द्र बना लेते हैं। परन्तु छोटे-छोटे व्यापारी इधर-उधर छोटे-मोटे स्थानों पर अपना व्यापार करते हैं। जैसे-जैसे नगरों में छोटी-छोटी नई बस्तियाँ स्थापित होती जाती हैं, ये छोटे व्यापारी इन नई बस्तियों में अपनी छोटी-छोटी दुकानें खोल कर आवश्यक चीजें बेचते हैं। ये दुकानें उन महिलाओं के लिए उपयोगी होती

प्रक्रिया बदल गई और इसने आवासीय क्षेत्रों में विकेन्द्रीयकरण ला दिया। इस नवीन विकास में तीन समूहों ने प्रमुख रूप से योगदान दिया—

(i) **उच्च वर्ग**—जिन्होंने इसमें रहने में अत्यधिक सुविधा महसूस की।

(ii) **अत्यधिक गरीब वर्ग**—जो अधिक किराया नहीं दे सकते।

(iii) **मिश्रित वर्ग**—जो घनी आबादी वाले हिस्सों में उपयुक्त और यथेष्ट स्थान न पा सके।

इस प्रकार विकेन्द्रीयकरण ने विभिन्न प्रकार के नए आवासीय क्षेत्रों को उत्पन्न किया जिनमें सर्वप्रथम, बहुत आलीशान आवास थे जो बहुत बड़े भूमि-खंड पर निर्मित थे। द्वितीय, मध्यम वर्गों की बस्तियाँ जो बहुत जल्दी में बनाई गई थीं, और तृतीय, सबसे कम आयवाले समूहों के लिए गन्दे आवास। पहले के प्राचीन मकान अब पूर्ववत न रहे। अत्यधिक जनसंख्या की वृद्धि और बाढ़ आ जाने से आवास-खण्डों का निर्माण किया गया जिन्हें आंशिक या पूर्ण रूप से एकाकी परिवार वाले मकान के रूप में पुनर्स्थापित किया जा सकता था। चूंकि नगरों में जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि होती जा रही थी इसलिए खाली भूमि-खण्डों पर अतिरिक्त मकान बनवाए गए लेकिन इसके बावजूद कुछ लोग नगरों की सीमा की तरफ उन्मुख हुए और इस प्रकार एक उपनगर (Suburb) की स्थापना हुई। इस प्रक्रिया के बार-बार पुनरावृत्ति के कारण स्थानीय रूपरेखा में भी परिवर्तन हुआ। जब नगरों की जनसंख्या और आकार में वृद्धि होती है, धनिक वर्ग केन्द्र से दूर चलते जाते हैं और जो पहले के फैशनेबुल उपनगर होते हैं वे मध्यम वर्गों के लिये हो जाते हैं तथा उच्च वर्ग के लोग अविकसित (Undeveloped) भूमि पर नवीन मकान निर्माण करवाते हैं।

उपरोक्त वर्णन से जो निष्कर्ष निकलता है, उसे हम इस प्रकार संक्षिप्त कर सकते हैं;" "एक विकसित हो रहे नगर में व्यापारिक केन्द्र, आवासीय क्षेत्रों को अस्त-व्यस्त करके, आकार में बढ़ने के लिए बाध्य है। इसी समय, आवासीय क्षेत्र नगर सीमाओं के बाहर अधिकाधिक गतिशील होकर केन्द्र से दूर जाने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं[1]।"

---

1. " In an expanding city the business centres tend to grow in size thereby dislocating residential areas. At the same time residential areas show a centrifugal tendency by moving more and more forward the outskirsts and beyond the city limits" E. E. Bergel : Urban Sociology,

हैं जो घर का संचालन करती हैं। वे स्वयं जाकर या बच्चों को भेज कर वे चीजें मँगवा लेती हैं जो बड़ी दुकानों से लाना भूल गई होती हैं या जो अचानक समाप्त हो जाती हैं, जैसे नमक, मसाला, चाय आदि। उपरोक्त वर्णन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नगरीय विकास के अध्ययन में हम सिर्फ बड़े-बड़े व्यापार केन्द्र ही नहीं पाते अपितु छोटी-छोटी दुकानों के केन्द्र भी देखते हैं। इसलिए जैसे-जैसे नगर का विकास होता जाता है इन छोटे व्यापार केन्द्रों में भी वृद्धि होती जाती है जो कि न्यष्टि (Nucleus) है। संपूर्ण प्रक्रिया को बहुन्यष्टि (Multinucleation) कहते हैं।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि एक विकसित हो रहे नगर में वाणिज्य केन्द्र आकार में बढ़ने के लिए बाध्य हैं तथा आवासीय क्षेत्रों को वे अस्त-व्यस्त कर देते हैं। इसी समय आवासीय क्षेत्रों में गतिशीलता आती है और वे केन्द्र से दूर (नगरीय सीमा के बाहर) अधिकाधिक जाने लगते हैं।

जब विस्तार या संकुचन प्रारम्भ होता है तो व्यापार क्षेत्रों की सीमाएँ अत्यधिक प्रभावित होती हैं। व्यापारिक क्षेत्रों की अवनति प्रारंभ हो जाती है, भूमि का मूल्य कम होने लगता है और समस्त सीमान्त प्रदेश क्षीण होने लगते हैं। यदि कुछ क्षेत्रों में व्यापार नहीं होता तो मूल्य में वृद्धि नहीं होती क्योंकि आवासों की भाँति स्वतंत्र रूप से छोटे-छोटे मकान-खंड उतने आकर्षक नहीं होते। लेकिन गरीब लोग उन भवनों में जा सकते हैं जो बहुत ही शीघ्रता में रहने लायक सस्ते क्वार्टरों के रूप में बनाए गये होते हैं और इस प्रकार एक नवीन गन्दी बस्ती की उत्पत्ति हो जाती है। बहुधा यह देखा और पाया गया है कि व्यापार क्षेत्रों की अवनति नहीं होती बल्कि इसका विस्तार ही होता जाता है जिससे नगरीय प्रतिमान में परिवर्तन आ जाता है। इसी प्रकार जनसंख्या की वृद्धि और अवनति भी नगर की भूमिगत (Spatial) रूप-रेखा बदल देती है। तुलनात्मक रूप से, जनसंख्या में कमी बहुत कम होती है। पिछले १०० वर्षों में तो अवनति के स्थान पर जनसंख्या-वृद्धि ही कार्यरत रही है। परिणामस्वरूप आवासीय क्षेत्र बहुत भीड़युक्त हो गए हैं। भूमि के मूल्य, कर (Tax) और किराये में भी वृद्धि हो गई है। लेकिन इन सबके बावजूद नागरीकरण की प्रक्रिया जारी है। लोगों का नगरों की तरफ आकर्षित होना जारी है। पहले इसका परिणाम सामूहिक केन्द्रीयता (Mass Concentration) और आवास क्षेत्रों का केन्द्रीयकरण था लेकिन यह

---

1. L. W. Bryce &. B. Khan : Introduction to Urban Sociology. p. 49.

संरचनात्मक परिवर्तन (Structural Change) :—

जनसंख्या में वृद्धि होने का तात्पर्य नगरीय संख्या में वृद्धि होना है लेकिन यह वृद्धि विभिन्न नगरीय समूहों में समान नहीं होती। यह वृद्धि वर्ग-संरचना और जातीय विभागों में भी परिवर्तन ला देती है।

सामान्यतया परिवर्तनों ने निम्नलिखित प्रवृतियों को दर्शाया है—

(i) उच्च वर्ग की अपेक्षा निम्न वर्ग की वृद्धि अधिक तीव्रता से होती है।

(ii) उच्च आय वाले समूहों में हाल में ही बने धनी लोग उन लोगों के क्वार्टरों में घुसने लगते हैं जो सुनियोजित परिवार होते हैं।

(iii) एक नगर की तीव्रतम जनसंख्या वृद्धि का कारण, जन्म दर की अपेक्षा बाहर से आने वाले लोग हैं। ये बाहर से आने वाले या तो देश के किसी भाग के विस्थापित (Migrant) व्यक्ति होते हैं अथवा विदेशों के आप्रवासी (Immigrants), अथवा दोनों ही।

(iv) दक्षिण के नीग्रो उत्तरी नगरों में विस्थापित होकर वहाँ की संख्या में वृद्धि कर रहे हैं।

(v) जन्म दर, पेशा और अन्य विभेदों के कारण जातीय समूहों की वद्धि विभिन्न दर से होती है।

(vi) यह अधिकांश बड़े बड़े नगरों की धार्मिक रचना को भी प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, चूंकि अमेरिका में कैथोलिक और यहूदियों की संख्या प्रोटेस्टेन्ट धर्म मानने वालों की अपेक्षा अधिक है इसलिए वे लोग अधिक लाभ उठाते हैं।

ये कारक कुछ निश्चित स्थानीय परिवर्तन होने के लिए विवश करते हैं। उच्च वर्गों की संख्या कम होने लगती है लेकिन अभी भी वे अपने-अपने क्षेत्रों में रह सकते हैं। परन्तु अक्सर वे लोग केन्द्र से बाहर की तरफ चले जाते हैं और इस प्रकार एक नवीन और आलीशान उपनगर (Suburb) की उत्पत्ति हो जाती है। सामान्यतया ये नवीन भाग केन्द्रीय व्यापार स्थल से दूर स्थित होते हैं।

जब धनिक वर्ग एक क्षेत्र से बाहर चला जाता है तब निम्न आय वाला समूह केन्द्र की तरफ घुसता है लेकिन अधिक किराया न दे सकने के कारण वह अपनी मदद बड़ी मुश्किल से कर पाता है। तब इसका हल रूपान्तरण द्वारा निकलता है, अर्थात् एक परिवार वाले मकान, जो एक समय मध्यम वर्गीय समूह द्वारा दखल कर लिए गये थे, बहु-परिवारों में परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रकार मकान की आय में वृद्धि हो जाती है और प्रति व्यक्ति किराया कम हो जाता है। यह रहन-सहन के स्तर में गिरावट का सूचक है।

अब मध्यम वर्ग के लोग उन स्थानों की तरफ चल देते हैं जो उच्च वर्गों द्वारा अधिकृत होने के पश्चात छोड़ दिया गया था अथवा वे लोग स्वयं ही कम खर्चीले प्रकार के उपनगरों की स्थापना करके रहने लगते हैं। यदि यह प्रवृत्ति चालू रहती है तो अनेक हिस्से गन्दी बस्तियों के रुप में परिवर्तित होने लगते हैं। इससे परिस्थिति और भी दयनीय हो जाती है। बाहर से आने वाले अधिकांश आप्रवासी (Immigrants) और निम्न रहन-सहन के ढंग से रहने के अभ्यस्त होते हैं। चूँकि सबसे कम मजदूरी पर वे काम करते हैं इसलिए अल्प आय के कारण वे मकान की खराब दशा की मरम्मत नहीं करा सकते।

परिस्थितिक गतिशीलता
(Ecological Dynamics)

जातीय समूह के वितरण में भी अनेक परिस्थितिक झगड़े होते हैं। ज्योंही कोई भाग अत्यधिक भीड़युक्त होता है, कोई मकान खाली नहीं रह पाता। परिणामस्वरूप जो लोग उस स्थान पर रहना चाहते हैं, वे इससे वंचित हो जाते हैं। अतः ये लोग अन्य स्थानों की खोज करते हैं। इसके बाद वाला विकास क्रम तीन स्तरों (Stages) से गुजरता है।

(१) **अन्तःसंचरण** (Infiltration) :—विकास-क्रम के इस स्तर में एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवास पाने की प्रक्रिया अन्तर्निहित है। एक परिवार के लोग अन्य भागों में क्वार्टर पाने का प्रयास करते हैं। यदि यह प्रयास सफल हो जाता है तो उसी समूह के कुछ अन्य लोग उसका अनुसरण करते हैं और इस प्रकार गतिशीलता में वेग आ जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जब किसी विभाजित अल्पसंख्यकों का एक बहुत बड़ा भाग किसी हिस्से में जाता है तो अन्य लोग भी उसका अनुसरण करके वहाँ बसने लगते हैं। फिर कुछ ही दिन पश्चात् जनसंख्या में परिवर्तन देखा जा सकता है।

(२) **आक्रमण** (Invasion) :—आवासीय उद्देश्य के लिए जब जनसंख्या किसी क्षेत्र में जाती है तो इस घटना को परिस्थितिक आक्रमण (Ecological Invasion) कहते हैं। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि आक्रमण सिर्फ खाली क्षेत्रों में ही होता है। आवासों का विस्थापन (Displacement) नहीं होता। अमेरिका के विकसित हो रहे नगरों के बाहरी क्षेत्रों में इस प्रकार के आक्रमण निरन्तर हो रहे हैं। आक्रमण का परिणाम प्रजातीय (Racial) अथवा जातीय (Ethnic) विभाजन नहीं बल्कि आर्थिक

विभाजन होता है और वह भी इस अर्थ में कि वहाँ रहने वालों की आय समान होती है।

परिस्थितिक आक्रमण ऐच्छिक (Voluntary) अथवा अनैच्छिक (Involuntary) दोनों हो सकता है। संभवतः अधिकांश आक्रमण ऐच्छिक ही होता है। लेकिन ऐसे अनगिनत उदाहरण मिलते हैं जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि व्यापार और उद्योग द्वारा ही आवासीय क्षेत्रों पर आक्रमण हुआ और वहाँ के रहने वालों को वह स्थान छोड़ने के लिए बाध्य किया गया अथवा ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जिनमें दुर्भाग्यग्रस्त परिवार पड़ोस में जाने के लिए बाध्य किए गए जिसे वे सम्पन्न स्थितियों में शायद ही पसन्द करते।

ऐच्छिक रूप से आवासीय आक्रमण अधिक सुखदायक वातावरण, व्यावसायिक लाभ, सामाजिक प्रतिष्ठा अथवा अन्य किसी भी चीज की प्राप्ति की आकांक्षा के वशीभूत होने पर व्यक्ति अथवा परिवार के अन्तःसंचरण (Infiltration) से होता है।

सामान्य बोलचाल की भाषा में आक्रमण से हमारा तात्पर्य किसी भी विशिष्ट क्षेत्र में एक निश्चित संख्या में व्यक्तियों की गतिशीलता से है। संख्या का कोई महत्व नहीं होता। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, आक्रामकों और आवासों के मध्य महत्वपूर्ण संबंध होता है। अमेरिकी नगरों के किसी भी श्वेत क्षेत्र (White Area) में, एक इटैलियन-अमेरिकन शहर में १००-पोलिश-अमेरिकनों के प्रवेश की अपेक्षा आधे दर्जन नीग्रो के प्रवेश का समाजशास्त्रीय महत्व काफी हैं। अमेरिका में नीग्रो के आक्रमण का बड़ा जबरदस्त सामना किया जाता है। आक्रमण के वक्त श्वेत जाति कानून अपने हाथ में ले लेती है और यथाशक्ति भयावह पद्धतियों से, नीग्रो के अन्तःसंचरण (Infiltration) को रोकने का प्रयास करती है। कुछ वर्ष हुए, अमेरिका में, सिसरो के एक निवासी ने नीग्रो परिवार के विरुद्ध हिंसात्मक कार्य किया जो शहर में प्रविष्ट हो चुका था। लेकिन प्रबल विरोध के फलस्वरूप उस परिवार को नगर छोड़ना पड़ा। परन्तु इन सब प्रयासों के बावजूद हम देखते हैं कि समस्त नगरों में नीग्रो लोगों का क्षेत्र धीरे-धीरे विकसित हो रहा है। उनमें भी गतिशीलता आ गई है और अब वे उन स्थानों में प्रवेश कर रहे हैं जहाँ एक समय सिर्फ श्वेत रहते थे।

(३) उत्तराधिकार अथवा अनुक्रमण (Succession) :—जब आक्रामकों द्वारा स्थान के मूल निवासी विस्थापित कर दिए जाते हैं और वे (विस्थापित समूह) किसी विभाजित क्षेत्र में चले जाते हैं तो इसे हम अनुक्रमण कहते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उपरोक्त तीनों प्रक्रियाओं में (अन्त:संचरण, आक्रमण और उत्तराधिकार) कम सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति या समूह सदैव उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त समूहों को विस्थापित करते रहते हैं।

भूमि-मूल्य
(Land Value)

उपरोक्त परिवर्तन भूमि–मूल्य तथा किसी परिस्थितिक क्षेत्र की प्रकृति को भी बदल देता है। यह भूमि-मूल्य जनसंख्या के अन्त:प्रवेश (Influx) से प्रभावित और माँग तथा पूर्ति (Demand & Supply) के नियम का परिणाम होता है। माँग तथा पूर्ति का नियम यह है कि जब किसी चीज की माँग अधिक हो जाय और उसके अनुपात में उसकी पूर्ति न हो पाये तो स्वभावत: वस्तु के मूल्य में वृद्धि हो जायेगी। इसी तरह, यदि एक ही संख्या के मकानों के लिए अधिक लोग प्रतिस्पर्धा करते हैं तो स्वभावत: मकान का मूल्य बढ़ जाता है अथवा बढ़ सकता है। अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखने पर ज्ञात होता है कि जनसंख्या की तीव्रतम वृद्धि देखते हुए भूमि-मूल्य कम होने की संभावना बहुत कम ही है।

वाह्य-समूहों की नापसन्दगी इतनी दृढ़ होती है कि लोग कम मूल्य पर ही अपने मकान एवं भूमि को बेच कर अन्य क्वार्टरों में चले जाने को बाध्य हैं। यदि कोई भी वाह्य-समूह का व्यक्ति किसी भाग में आ जाता है तो उसके पड़ोसी विक्रय प्रारम्भ कर देते हैं और शेष अन्य लोग भी उसका अनुसरण करने लगते हैं। कभी-कभी तो विक्रय काफी उग्र हो जाता है क्योंकि मालिक डर जाते हैं कि यदि वे प्रतीक्षा करेंगे तो इससे भी अधिक नुकसान का सामना करना पड़ सकता है।

जब अनुक्रमण (Succession) कम हो जाता है तब भूमि-मूल्य मे गिरावट आने लगती है क्योंकि उत्तराधिकारी (Successor) निम्न प्रस्थिति और आय वाले होते हैं। इसीलिए वे मकानों की मरम्मत तथा उनकी सुरक्षा के लिए उतना धन व्यय नहीं कर सकते जितना उनके पहले के लोग करते थे और इस प्रकार आगामी ह्रास (Ensuing Deterioration) भूमि-मूल्यों में कमी कर देता है। कभी-कभी इससे बहुत गहरा नुकसान भी होता है।

जो ईमानदार स्वामी होते हैं वे घाटा सहने के लिए बाध्य हैं, चाहे वे अपनी जायदाद को बेचें या रखे रहें। यह अत्यन्त गम्भीर समस्या प्रदर्शित करता है। धार्मिक, नैतिक, और समाजशास्त्रीय आधार पर विभाजन और पूर्वाग्रह

(Prejudice) से लड़ना संभव है लेकिन किसी एक व्यक्ति को संतुष्ट करना असंभव है। इसका परिणाम यह होता है कि लोग बहुत ही सस्ते दामों पर भूमि खरीद लेते हैं। जब नगरों में जनसंख्या का भारी अन्त:प्रवेश होता है तो एक परिवार वाले मकान बहु-परिवार वाले मकानों में परिवर्तित कर दिए जाते हैं और इस प्रकार उनसे अधिक किराया मिलने लगता है। इसमें किसी भी प्रकार की हानि नहीं है क्योंकि जनसंख्या में वृद्धि होती ही जायेगी और लोगों के रहने के लिए मकानों की आवश्यकता पड़ेगी ही। इसी तरह, जब जनसंख्या में वृद्धि होती है और नगर की जमीनें अप्राप्य होती जाती हैं तो भूमि मूल्य भी अवश्य बढ़ेगा। उदाहरण के लिए, हम भारतवर्ष को ही ले सकते हैं। आज से १५ वर्ष पूर्व तक भारत की आबादी लगभग तैंतीस करोड़ थी लेकिन आज वह ४४ करोड़ तक पहुँच गई है। उस समय भूमि का मूल्य भी बहुत कम था लेकिन आज दोनों में भारी परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। जनसंख्या में काफी वृद्धि हो रही है जिससे मकानों की कमी पड़ गई है। फलतः मकान बनवा कर रहने के लिए भूमि की काफी माँग बढ़ गई है जिससे भूमि-मूल्य में भी भयंकर वृद्धि हो गई है। कल तक जो जमीनें ५०० रु० बिस्वे मिलती थीं आज उनका दाम २ से लेकर ५ हजार रुपये बिस्वे तक है। इस प्रकार भूमि-मूल्य में दुगुनी-तिगुनी वृद्धि हो गई है। भूमि-मूल्यों और परिस्थितिक क्षेत्रों (Ecological Areas) के मध्य कोई प्रत्यक्ष सहसम्बन्ध (Correlation) का पता लगाना असम्भव है।

इन सबको ध्यान में रखते हुए दोनों में निम्नलिखित अन्त:सम्बन्धों की स्थापना की जा सकती है :—

(i) भूमि के गुण (Quality) की अपेक्षा उसके प्रयोग पर नगरीय भूमि-मूल्य अधिक आधृत है।

(ii) उच्च वर्गों के आवास-भागों का मूल्य मध्यम और निम्न-वर्गीय आवासों की अपेक्षा अधिक होता है।

(iii) केन्द्रीय स्थल अथवा मुख्य व्यापारिक भाग के आस-पास की जमीनें अत्यधिक ऊँचे मूल्यों की होती हैं। उदाहरण के लिए, न्यूयार्क में वाल-स्ट्रीट (Wall Street) और ब्राडवे (Broadway) के छोर पर एक वर्ग-फुट जमीन का दाम अधिक होता है। केन्द्रीय व्यापार क्षेत्रों में भूमि के मूल्यों के आधिक्य का कारण उसकी आर्थिक महत्ता है।

(iv) हमने देखा कि व्यापारिक केन्द्रों (Business Centres) में भूमि का बहुत अधिक मूल्य होता है। लेकिन इसके सिरे पर मूल्यों में काफी

कमी होती है। फलतः एक निश्चित बिन्दु तक केन्द्र से दूर की जमीनों के मूल्यों में विपरीत रूप से वृद्धि होने लगती है। तत्पश्चात मूल्य में फिर गिरावट आती है और उनकी वृद्धि, अच्छे आवासीय उपनगर के विकास पर निर्भर करती हैं। जहाँ उपनगरों की स्थापना नहीं हो पाती वहाँ चूँकि सरलतापूर्वक सञ्चार के साधनों को नहीं पहुँचाया जा सकता, इसलिए सञ्चार की कठिनाइयों के बढ़ने के साथ ही साथ भूमि-मूल्य में पुनः गिरावट आने लगती है।

परिस्थितिक प्रतिमान में परिवर्तन का सिद्धांत

(Theories of Changes In Ecological Pattern)

नगर के परिस्थितिक प्रतिमान (Ecological Pattern) नगर के आकार और उसकी रूपरेखा बदल देते हैं। प्रश्न उठता हैं कि वे कौन-कौन से प्रतिमान हैं जो नगर के आकार-प्रकार में परिवर्तन ला देते हैं ? इस सम्बन्ध में कई एक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं :—

(१) संकेन्द्रिय-मण्डल सिद्धान्त (Concentric-Zone Theory) :—

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक बर्जेस (Burgess) महोदय हैं। उन्होंने शिकागो नगर के सामुदायिक अध्ययन के आधार पर नगरीय समुदाय की परिस्थितिक संरचना (Ecological Structure) का विश्लेषण किया है।[1] उन्होंने अपने इस सिद्धान्त को रेखाओं द्वारा दो नक्शों (Charts) में प्रतिपादित किया है जिसकी व्याख्या स्वयं ही हो जाती है। उनके अनुसार एक नगरीय क्षेत्र में पाँच संकेन्द्रिय मण्डल (Concentric Zones) होते हैं जो प्रकार्यात्मक वैभिन्न्य (Functional Difference) दर्शाते हैं। ये क्षेत्र गोलार्द्ध (Radially) में विकसित होते हैं और निम्नलिखित तरह के होते हैं :—

(i) **केन्द्र-बिन्दु** (Loop) :—नगर का केन्द्र-बिन्दु प्रायः व्यापार का गढ़ होता है जहाँ हम सभी चीजें प्राप्त कर सकते हैं। यहाँ महत्त्वपूर्ण प्रशासकीय एवं व्यावसायिक कार्यालय स्थित होते हैं। रहन-सहन का ढंग अव्यवस्थित होता है। इसे सामान्यतया व्यापार-केन्द (Down Town) कहते हैं।

(ii) **संक्रमणकालीन क्षेत्र** (The Zone in Transition) :—केन्द्र-बिन्दु के चारो तरफ विभिन्न चौड़ाई के चार संकेन्द्रिय वृत्त (Concentric

---

1. R. E. Park, E. W. Burgess, and R. O. Mckenzie : The City. The University of Chicago Press (1925), pp. 50 ff.

Circles) होते हैं । इनमें से जो सबसे नजदीक होता है वह संक्रमण-कालीन क्षेत्र (Zone in Transition) कहलाता है । इस क्षेत्र में लघु उद्योग एवं गन्दी बस्तियाँ पाई जाती हैं । यहाँ सदैव लघु-उद्योग खोलने की चेष्टा होती रहती है जिससे यहाँ निवास स्थानों का अभाव सा हो जाता है । मकान कम होते जाते हैं और कोई भी व्यक्ति रहने योग्य मकानों का निर्माण नहीं कराता ।
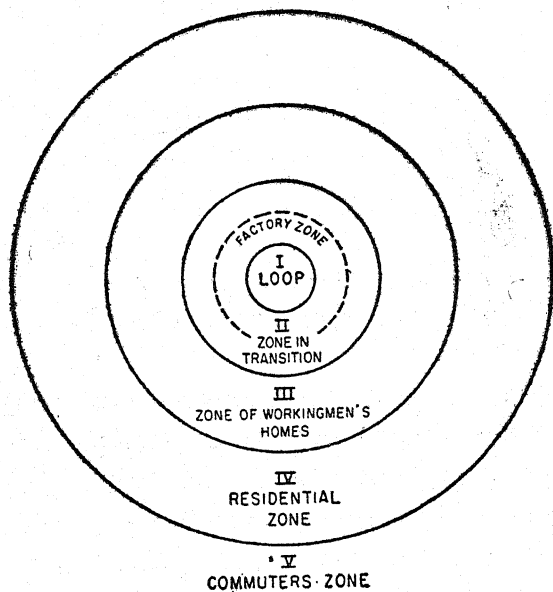
URBAN AREAS

दुकान बढ़ती जाती हैं । निवास स्थानों को लोग ऊँचे दामों पर बेचने लगते हैं। परिणामस्वरूप कुछ लोग अन्यत्र निवास स्थान खोज कर स्थानान्तरित हो जाते हैं लेकिन जो गरीब होते हैं उनका इन भवनों के साथ ही पतन होता जाता है । ऐसे क्षेत्रों को थ्रैशर[1] (Thrasher) महोदय ने अन्तरालीय (Interstitial) कहा है । यहाँ बहुत ही सस्ते कमरे वाले मकान मिलते हैं । इसके अतिरिक्त, आप्रवासी (Immigrant) भी इस क्षेत्र में रहते हैं ।

(iii) **श्रमिक-आवास क्षेत्र** (The Zone of Workingmen's Home):—द्वितीय क्षेत्र में मध्यम किराए वाले निवास-स्थान होते है जिनमें श्रमिक और

---

1. F. M. Thrasher : The Gang. The University of Chicago Press, (1936) p. 22.

कारीगर रहते हैं। यहाँ वे निपुण श्रमिक रहते हैं जो उद्योग-धंधों में काम करते हैं और शीघ्र ही अपने कार्य-स्थल पर पहुँच सकते हैं। दूसरे शब्दों में, हम इस प्रकार कह सकते हैं कि इस क्षेत्र में मध्यम वर्ग के कर्मचारी रहते हैं। यहाँ के मकान सड़क से थोड़ी दूर पर स्थित होते हैं।

(iv) **आवासीय क्षेत्र** (Residential Zone) :—इस क्षेत्र में उच्च-मध्यम वर्ग के लोग रहते है जिनका पारिवारिक जीवन संतोषजनक होता हैं और उनके क्रिया-कलाप मानकित (Standardised) होते हैं। यहाँ उच्च-श्रेणी के आलीशान मकान होते हैं जिनमें सिर्फ एक ही परिवार के लोग रहते हैं।

(v) **उपनगर खंड** (Commuters' Zone) :—इसे कभी-कभी सीमान्त बस्ती (Satellite Cities) भी कहते हैं। यह वह क्षेत्र है जहाँ नगर के सभी प्रतिष्ठित लोग रहते हैं। यह क्षेत्र नगरीय सीमा के बाहर होता है। दूसरे शब्दों में, इसे नगर से लगे हुए गाँव के नाम से अथवा उपनगर (Suburban) के नाम से संबोधित किया जा सकता है। इस खंड में रहने वाले मोटर-कार आदि का प्रयोग करते हैं और उनके लिए ३० से ६० मिनट तक का सफर (अपने व्यापार केन्द्र तक पहुँचने के लिए) कष्टप्रद नहीं होता। उनके लिए समय का मूल्य भी कुछ नहीं होता। यहाँ एकाकी परिवार के लोग रहते हैं जिनमें से कुछ के भव्य भवन होते हैं। ये भवन प्रकृति की गोद में बसे हुए होते हैं और लोग वहुत ही शानदार तरीके से रहते हैं।

(२) वृत्तखण्ड सिद्धांत (The Sector Theory) :—

कुछ दिन तक तो संकन्द्रिय-मंडल सिद्धांत (Concentric Zone Theory) को स्वीकार कर लिया गया लेकिन सभी लोग इस सिद्धांत से सहमत नहीं थे। इनमें मॉरिस डेवी (Maurice R. Davie) और होमर हायट (Holmer Hoyt) का नाम उल्लेखनीय है। मॉरिस डेवी का कथन था कि बर्जेस ने जिस विश्वजनीन प्रतिमान (Universal Pattern) का निर्धारण किया है, गलत है। उनका कथन था कि नगरीय विकास का कोई विश्वजनीन प्रतिमान नहीं है और न ही इस सम्बन्ध में किसी आदर्श-प्रकार (Ideal Type) का निर्धारण किया जा सकता है[१]। उन्होंने स्वयं ही कुछ अंशों में प्राकृतिक क्षेत्रों को स्वीकार किया है।

---

1. "There is no universal pattern, not even an ideal type." Maurice R. Davie.

सन् १९३९ के लगभग होमर हायट (Hoyt) ने वृत्तखण्ड सिद्धांत प्रस्तुत किया। नगरीय विकास का यह सिद्धांत बर्जेस की योजना का पुनर्स्थापन (Replacement) नहीं बल्कि एक सुधार था। हायट महोदय ने अपने अध्ययन के पश्चात निम्नलिखित निष्कर्ष प्रस्तुत किए[1] :—

(i) सर्वप्रथम हायट महोदय ने कहा कि औद्योगिक क्षेत्र केन्द्रीय व्यापार केन्द्र के चारो तरफ नहीं विकसित होते बल्कि नगर के उन बाहरी भागों में भी विकसित होते हैं जहाँ आवागमन के साधन हों और जल-व्यवस्था तथा सड़कें अच्छी तरह से उपलब्ध हों। इस प्रकार औद्योगिक क्षेत्रों की वृद्धि वर्तुलाकार (Circles) नहीं बल्कि पंक्तिबद्ध (Stringlike) होती है।

(ii) दूसरी मुख्य बात उन्होंने यह कही कि उच्च श्रेणी के आवासीय क्षेत्र (Residential Zone) दफ्तरों तथा फुटकर बिक्री केन्द्रों के निकट विकसित होते हैं, संभवत: झील, खाड़ी, नदी व समुद्र के सामने की तरफ।

(iii) उपनगर (Commuters Zone) में सिर्फ धनिक वर्ग ही रहेगा, इसे हायट महोदय नहीं मानते हैं। उनका कथन है कि धनिक वर्ग की स्थिति किसी वृत्तखण्ड (Sector) में ही हो सकती है और इनका विकास भी त्रिकोणात्मक (Triangular) होगा न कि गोलार्द्ध में। इनके क्षेत्रों में परिवर्तन भी होता रहता है।

(iv) अन्तिम बात हायट महोदय ने यह कही कि जो सबसे प्रतिष्ठित व्यक्ति होते हैं वे कई स्थानों पर रहते हैं। उच्चाधिकारियों अथवा उच्च-स्तर के अफसरों का निवास स्थान उनके दफ्तरों अथवा औद्योगिक स्थानों पर ही होता है। यदि हम सूक्ष्मतापूर्वक देखें तो आधुनिक नगरों में यह बात कुछ हद तक सत्य भी है। हायट महोदय ने आगे कहा कि कभी-कभी ऐसा भी होता है कि नगर या समाज के नेता जहाँ रहते हैं, वहाँ भी शहर के धनिक चले जाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हायट (Hoyt) महोदय ने बर्जेस की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही हायट का सिद्धांत

---

1. Homer Hoyt : The Structure and Growth of Residential Neighborhoods in American Cities. Federal Housing Adminis tration, Government Printing Office, Washington, (1931.)

बर्जेस की अपेक्षा अधिक गतिशील भी है। हायट महोदय के सिद्धांत का चित्र नीचे दिया जा रहा है।
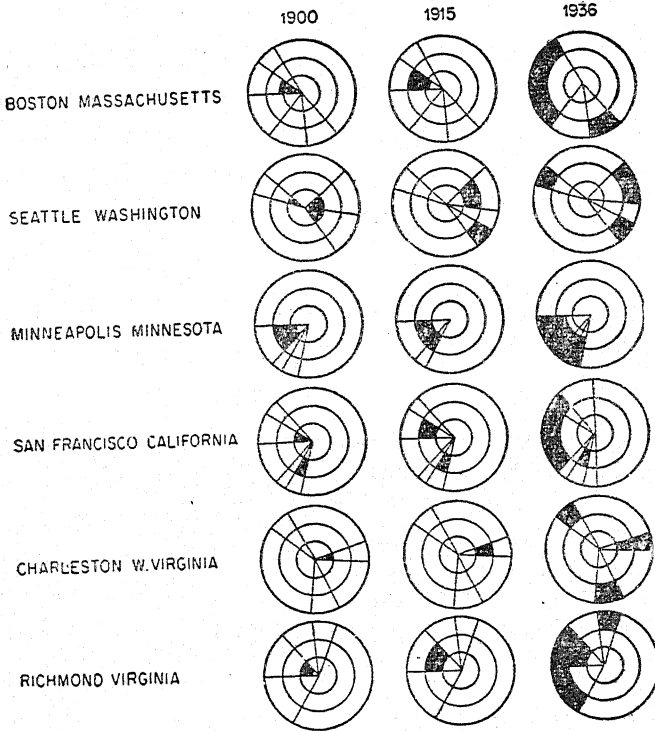
उपरोक्त चित्र देखने पर ज्ञात होता है कि हायट महोदय ने भी संकेन्द्रिय मंडल (Concentric Zone) का प्रयोग किया है लेकिन वृत्तखण्डों (Sectors) के रूप में।

(३) प्राकृतिक क्षेत्रों का सिद्धांत (Theory of Natural Areas) :—

उपरोक्त दोनों सिद्धान्तों से एकदम स्वतन्त्र, अनेक लेखकों ने प्राकृतिक क्षेत्रों की अवधारणा पर अधिक बल दिया है। लेकिन यह शब्द भ्रामक है क्योंकि यह मानव प्रकृति (Human Nature) की बात करता है न कि प्राकृतिक क्षेत्रों का। इस सिद्धान्त के प्रतिपादकों का कथन है कि नगरों का विकास प्राकृतिक ढंग के आधार पर नहीं बल्कि मनुष्य के स्वाभाविक प्रकृति के अनुसार होता है। इस सिद्धांत का केन्द्र-बिन्दु यह है कि एक ही प्रजातीय, धार्मिक, सांस्कृतिक राष्ट्रीय समूह के सदस्यों की मनोवृत्ति एक ही क्षेत्र में रहने की होती है। दूसरे शब्दों में, हम इस तरह कह सकते हैं कि यदि कुछ लोग

धार्मिक मनोवृत्ति के हैं तो वे एक ही स्थान पर रहना पसन्द करते हैं। इसी तरह एक ही प्रजातीय, राष्ट्र तथा संस्कृति के लोग अलग-अलग अपना-अपना क्षेत्र बना कर रहते हैं।

लेकिन यह सिद्धान्त स्थान सम्बन्धी प्रतिमानों (Spatial Patterns) की अपेक्षा संरचनात्मक विभागों की व्याख्या करता है। अत: जब तक यह सिद्धांत काफी विशिष्ट (Specific) न हो जाय तब तक इसे मानना, मेरी समझ से अश्रेयस्कर होगा। यद्यपि इस सिद्धान्त की अपने में काफी महत्ता है तथापि इसे अन्य उपकल्पनाओं (Hypothesis) की सहायतार्थ ही प्रयुक्त किया जा सकता है।

(४) प्रतीकात्मक मूल्यों का सिद्धांत (Theory of Symbolic Values) :—

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक वाल्टर फरे (Walter Firey) महोदय हैं। इन्होंने संकेन्द्रिय मंडल सिद्धांत (Concentric Zone Theory), वृत्तखण्ड सिद्धांत (Sector Theory) तथा उन सभी प्रयासों की आलोचना की जो सिर्फ प्रतिमानों (Patterns) की आर्थिक रूप में व्याख्या करते हैं। उनकी आलोचना अवधारणात्मक आपत्तियों (Conceptual Objection) पर आधृत थी और उन्होंने उसका समर्थन आनुभविक अथवा वैज्ञानिक गवेषणा (Empirical Research) द्वारा किया। फरे महोदय का कथन था कि बर्जेस और हायट ने जिस सिद्धान्त का प्रतिदान किया था वह बोस्टन (Boston) नगर में नहीं लागू होता है।

फरे का कथन है कि लोग कार्य-स्थलों पर इसलिए रहते हैं क्योंकि उन-उन स्थान विशेष से उनका मोह हो जाता है, उनका संवेगात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। वे लोग उसे छोड़ना नहीं पसन्द करते हैं। यद्यपि उनकी सन्तानें उस स्थान को छोड़ कर अन्यत्र जा सकती हैं लेकिन वे लोग छोड़ना नहीं चाहते। इस प्रकार, फरे ने समूह और स्थान या क्षेत्र के बीच एक प्रतीकात्मक भावात्मक सम्बन्ध (A Symbolic Sentimental Relationship) पाया। इस संबन्ध में उन्होंने बेकन हिल (Beacon Hill) और उत्तरी सिरा (North End) के निवासियों का उदाहरण दिया है। बेकन हिल में रहने वाले उच्चकुलीन परिवार उस स्थान को छोड़ना नहीं पसन्द करते हैं जब कि उन्हें उससे भी अधिक आरामदेह क्वार्टर मिलते हैं। इसी तरह उत्तरी सीमा (North End) के इटली के आप्रवासी (Italian Immigrant) भी अपने स्थान को नहीं छोड़ना पसन्द करते। उन्हें वहाँ रहने में प्रसन्नता होती है। ऐसा सिर्फ इसीलिए होता है कि उन लोगों का संवेगात्मक सम्बन्ध

उस स्थान के कृतिम मूल्यों से हो जाता है। लिण्ड्स (Lynds) और हायट (Hoyt) आदि ने भी इसका समर्थन किया है।

(५) आवागमन का सिद्धांत (The Transportation Theory) :—

इस सिद्धांत के अनुसार सभी नगरों के विकास की सीमा यातायात पर निर्भर होती है तथा यातायात के साधनों के विकास के ऊपर ही नगरों का विकास भी निर्भर करता है। जितने ही तीव्र संचार और यातायात के साधन होंगे, उतनी ही तीव्रता के साथ नगरों का विकास भी होगा। इस सिद्धांत के प्रतिपादक ए. वेबर (A. Weber), ऑगबर्न (Ogburn) और क्विन (Quinn) हैं। इनके अतिरिक्त, बर्जेस (Burgess) तथा हायट (Hoyt) ने भी यातायात के प्रभावों का उल्लेख किया है। (Cooley, C.H.) महोदय ने तो 'आवागमन के सिद्धांत' (Theory of Transportation) का ही प्रतिपादन किया है।

(६) सांख्यिकी सिद्धांत (The Statistical Approach):—

इस सिद्धांत के प्रतिपादक काल्विन शिमिड (Calvin Schimid) हैं। इन्होंने नगर की अनेक समस्याओं का परीक्षण सांख्यिकी पद्धतियों द्वारा किया। इन्होंने २० नगरों के अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष निकाला उसकी तुलना एक बड़े नगर (Detroit) की दशाओं से की। तुलना के आधार पर उन्होंने पाया कि अमेरिकी नगरों की परिस्थितिक संरचना (Ecological Structure) एक निश्चित और नियमित प्रतिमान के अनुकूल है जिसमें जनसंख्या का सामाजिक-आर्थिक स्तर प्रधान अंग है। उन्होंने कहा कि बड़े-बडे नगरों के अधिकांश भागों का प्रतिनिधित्व स्तर-मूल्यों (Status Values) जैसे शिक्षा, आय, व्यवसाय, द्वारा होता है।

कुछ व्यावसायिक समूह उच्च आय वाले क्षेत्रों में बँट जाते हैं। नीग्रो तथा विदेश में पैदा हुए श्वेत (Whites) निम्न आय वाले क्षेत्र में रहने के लिए विवश हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि काल्विन शिमिड (Calvin Schimid) ने सामाजिक-आर्थिक स्तर पर विशेष बल दिया है।

मूल्यांकन और संश्लेषण

(Evaluation & Synthesis)

उपरोक्त सभी सिद्धांतों का सूक्ष्म परीक्षण करने पर ज्ञात होता है कि यद्यपि प्रत्येक सिद्धांत सत्य का महत्वपूर्ण प्रकाशन करते हैं तथापि वे अपने में पूर्ण नहीं हैं। उनमें कुछ सुधार की आवश्यकता है। अतः हमें उन तत्वों

का अध्ययन करना चाहिए जो वर्तमान उपकल्पनाओं (Hypotheses) को अन्त:संबंधित करते हैं।

परिस्थितिक संरचना (Ecological Structure) के संबंध में कोई एक निश्चित व्याख्या नहीं दी गई है। इस संबंध में अभी तक दो व्याख्याएँ महत्वपूर्ण थीं—

(i) हमें स्थानगत विषमता (Spatial Differentiation) के कारणों का पता लगाना चाहिए और,

(ii) उन कारकों की खोज करनी चाहिए जो विशिष्ट प्रतिमानों का वर्णन करते हैं।

दूसरे शब्दों में, लोगों का उद्देश आत्मगत प्रेरणा (Subjective Motivation) और उसके वैषयिक परिणाम (Objective Consequence) का पता लगाना था।

अमेरिकी नगरों ने एक विश्वजनीन लक्षण को दर्शाया है और वह है—आय-समूहों के अनुसार आवास-क्षेत्रों में विषमता। यह ठीक है कि विश्वजनीन प्रवृत्ति अथवा एक ही व्याख्या के अनुसार विस्तृत व्याख्या अवश्य पाई जायेगी जो सबके लिए सामान्य होगी फिर भी हम लोग एकांगी अवधारणा स्वीकार नहीं कर सकते। हम लोगों को सिर्फ संस्थागत कारकों की ही नहीं अपितु मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक तत्वों की व्याख्या करने वाले सिद्धांतों की भी माँग करनी है।

अत: हमें निम्नलिखित कारकों द्वारा उपरोक्त सभी सिद्धांतों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण करना चाहिए—

(i) परिस्थितिक प्रतिमानों (Ecological Patterns) का अध्ययन हो।

(ii) नगर में स्थानगत विषमता (Spatial Differentiation) का अध्ययन हो।

(iii) लोगों की आन्तरिक इच्छा किन क्षेत्रों में रहने की है और तत्संबंधित सुविधाएँ क्या-क्या हैं, इसका भी अध्ययन हो।

(iv) मनोवैज्ञानिक, आर्थिक, सांस्कृतिक संस्थाओं की अन्त:क्रिया का अध्ययन हो।

(v) व्यापार क्षेत्रों एवं आवासों के पृथक्करण का अध्ययन हो।

लेकिन यहाँ एक बात याद रखने की है कि इन सभी कारकों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक 'संस्थागत कारक' (चतुर्थ) है।

अध्याय ६

नागरीकरण
(Urbanization)

नागरीकरण का अर्थ
(Meaning of Urbanization) :—

किसी भी राज्य में अपकेन्द्रीय (Centrifugal) अथवा अभिकेन्द्रीय (Centripetal) गतिशीलता के माध्यम से जनसंख्या का पुनर्वितरण हो सकता है। अभिकेन्द्रीय गतिशीलता वह प्रकिया है जिससे जनसंख्या का आधिक्य केन्द्र में होता है और अपकेन्द्रीय गतिशीलता वह प्रक्रिया है जिसमें जनसंख्या केन्द्र से परिधि की तरफ जाती है और वहाँ आन्तरिक प्रदेश से पुनः सम्बन्ध स्थापित करती है। इस प्रकार अभिकेन्द्रीय गतिशीलता की प्रधान प्रक्रिया ही नागरीकरण कहलाती है। अतः, नागरीकरण केन्द्र में जनसंख्या के एकत्रीकरण की वह प्रक्रिया है जिससे नगर की आबादी में वृद्धि होती है। दूसरे शब्दों में, व्यक्तियों की भारी संख्या नगरों में निवास करने के लिए जब आती है तो यह कहा जाता है कि नागरीकरण की उत्पत्ति हो गई। नागरीकरण से तात्पर्य किसी क्रिया, किसी प्रणाली अथवा किसी चलते हुए कार्य से है।

साधारणतया नागरीकरण का तात्पर्य ग्रामों का नगरीय रूप धारण करने से है अर्थात् ज्यों-ज्यों ग्राम नगर का रूप लेते जाते हैं, नागरीकरण का विकास होता जाता है। बर्जेल (Bergel) ने भी ग्रामों को नगरीय क्षेत्र में परिवर्तित होने की प्रक्रिया को ही नागरीकरण की संज्ञा दी है।[1] नगरीकरण की प्रक्रिया से नवीन नगरों का निरन्तर विकास और जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि होती जाती है। ग्राम नगरों

1. "We shall call urbainzation the process of transforming rural into urban areas." E. E. Bergel : op, cit. p. 1.

में परिवर्तित हो जाते हैं। ग्रामीण जनसंख्या में ह्रास होकर नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होती है और ग्रामीण जीवन पर नागरिक जीवन का प्रभुत्व और अमिट छाप पड़ जाती है। नगरों में चमक-दमक, सुख-सुविधाएँ, ऐश्वर्यशाली चीजें, मनोरञ्जन और आवागमन के विभिन्न साधन होते हैं जिनसे ग्रामीण जीवन बहुत प्रभावित होता है और इन साधनों के उपभोग हेतु ग्रामीण नगरों की तरफ उन्मुख हो जाते हैं और इस प्रकार नगरीय जनसंख्या में वृद्धि करते हैं।

नागरीकरण के निर्धारक तत्त्व

(Determinants of Urbanization)

नगरीय विकास और नागरीकरण की प्रक्रिया के निर्धारणस्वरूप पाँच प्रमुख कारक हैं जिनका उल्लेख यहाँ किया जायेगा।[1] इनमें से प्रत्येक कारक का नगरों के विकास और विस्तार में विभिन्न कालों में अपना प्रभाव, रहा है।

(१) कृषि में क्रान्ति (Agricultural Revolution) :—

नगरों में वे ही लोग रहते हैं जो कृषि-कार्य में नहीं लगे रहते। कृषि-उत्पादन में जब श्रम की अधिकता हो जाती है तो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लोग शहरों की तरफ उन्मुख होते हैं और इस प्रकार नागरीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। औद्योगिक और प्रौद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप जीवन के हर क्षेत्र में महान् परिवर्तन हुए हैं। यन्त्रों, उपकरणों और विभिन्न प्रकार के कल-पुर्जों का आविष्कार हुआ है जिनसे कम श्रम में ही अधिक उत्पादन किया जा सकता है। थोड़े से ही लोग समस्त जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति कर सकते हैं। कृषि-यन्त्रों के आविष्कार और उत्पादन क्षमता में वृद्धि हो जाने से अधिकांश श्रमिक बेकार हो जाते हैं। फलतः ये लोग कृषि-कार्य छोड़ कर अन्य कार्यों की तरफ आकर्षित हो जाते हैं जिनका सम्बन्ध नगर से होता है।

पश्चिमी नगरों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि जिस नगर में सन् १७८७ मे गाँव के नौ परिवार शहर के एक परिवार के लायक अन्नोत्पादन करते थे वहीं १९३७ के करीब एक परिवार के लोग शहर के सात परिवारों का भरण-पोषण कर रहे थे। इसका प्रमुख कारण कृषि में क्रांति थी। यह प्रवृत्ति समाप्त होने वाली नहीं है। कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिए नित्य नए-नए

---

1. P. K. Hatt, & A. J. Reiss : Cities and Societies, The Free Press of Glencoe, Inc. (1963) pp. 64–82.

रासायनिक साधनों की खोज की जा रही है, नए-नए मशीनों के प्रयोग किये जा रहे हैं ताकि कम श्रम में अधिक अनाज उत्पन्न किया जा सके।

पहले लोगों के पास छोटे-छोटे खेत थे जिससे अधिक लोग श्रम करते थे लेकिन औद्योगिक और प्रौद्योगिक विकास के कारण इन खेतों को बड़े बड़े खेतों के रूप में परिवर्तित किया जा रहा है ताकि ट्रैक्टर तथा अन्य मशीनों का प्रयोग करके कम श्रम और समय में ही अधिक अन्न उपजाया जा सके। अमेरिका में तो यह प्रवृत्ति बहुत अधिक पाई जा रही है जिससे वहाँ के नगरों में जनसंख्या का आधिक्य होता जा रहा है।

जहाँ तक भारतवर्ष का सम्बन्ध है, यह अन्य देशों की तुलना में नागरीकरण की प्रक्रिया में अभी भी बहुत पीछे है। यहाँ अभी कृषि में उतनी उन्नति नहीं हो पाई है जितनी पश्चिमी देशों में। लेकिन यहाँ भी उत्पादन क्षमता बढ़ाने का निरन्तर प्रयास हो रहा है। अनेक योजनाओं और परियोजनाओं द्वारा अन्नोत्पादन की कुशलता बढ़ाई जा रही है। नई-नई मशीनों और खादों का उपयोग किया जा रहा है लेकिन सिर्फ इसी से समस्या हल नहीं हो सकती। विद्यार्थियों को कृषि के आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों, कृषि औजारों और खादों के उपयोग की शिक्षा देनी चाहिए। उनकी शिक्षा प्राप्त कर नौकरी की तलाश की प्रवृत्ति रोकनी चाहिए।

भारत में कृषि-क्रान्ति न होने का कारण यह नहीं है कि हमारी भूमि उपजाऊ नहीं है। हम लोगों के कृषि फार्मों और खेतों की भूमि विभिन्न देशों से अधिक उपजाऊ हैं किन्तु हम अपने प्राप्त साधनों का कृषि-उत्पादन वृद्धि में पूर्ण उपयोग नहीं करते। नागरीकरण की प्रक्रिया कम करने के लिए आवश्यक है कि कृषि को उचित महत्व प्रदान कर उसे एक पेशे की तरह मान्यता दी जाय। कृषि-क्रांति के लिए हमारी सरकार भी अनेक कदम उठाने जा रही है।

(२) प्रौद्योगिक क्रान्ति (Technological Revolution) :—

नगरों के आधुनिक विकास और नागरीकरण का दूसरा मुख्य कारण प्रौद्योगिक क्रांति है। भाप के इञ्जिन और विद्युत द्वारा स्वयं चालित कल-कारखानों के विकास के फलस्वरूप उद्योगों की स्थापना एक ही स्थान पर सम्भव हो सकी और समस्त कार्य इन्हीं यन्त्रों के माध्यम से होने लगे जिससे मानवीय श्रम का ह्रास होने लगा। इसी शक्ति के अन्वेषण से यातायात के साधनों का भी विकास हुआ। जब वाष्प-चालित यन्त्रों का आविष्कार नहीं हुआ था तब आवागमन के साधन बहुत ही व्यय-साध्य थे जिससे कच्चे माल

दूर-दूर तक नहीं पहुँचाए जा सकते थे और इस प्रकार अधिकांश उत्पादन स्थानीय होते थे। लेकिन इन यन्त्रों के आविष्कार हो जाने से इनका प्रयोग बहुत अधिक मात्रा में होने लगा और यह व्यय-साध्य भी कम रहा। इससे उत्पादन प्रक्रिया और उत्पादन मात्रा में वृद्धि हो गई। कच्चे माल भी दूर-दूर तक सरलतापूर्वक पहुँचाए जाने लगे।

इधर कुछ वर्षों से, जब कि वाष्प-चालित यन्त्र नागरीकरण के प्रतिमानों को मोड़ दे रहे थे, एक नवीन शक्ति द्रष्टव्य हुई है जिसका नाम विद्युत है। यह नगरीय जीवन, नगरीय संरचना और सम्पूर्ण सामाजिक क्रम का रचनात्मक तत्त्व है। टेलीग्राफ, टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन आदि विद्युत यन्त्रों की काफी सराहना की गई है और इनकी महत्ता को भी स्वीकार किया गया हैं। जिस प्रकार १९ वीं शताब्दी में वाष्प-चालित यन्त्रों ने हमारे नगरों और सभ्यता को प्रभावित किया उसी तरह २० वीं शताब्दी में विद्युत ने भी नगरों और सभ्यता को एक नवीन रूप प्रदान किया है। इस तरह, हम कह सकते हैं कि ये प्रौद्योगिक यन्त्र नगरीय समुदाय और राष्ट्रीय जीवन को गम्भीर रूप में परिवर्तित कर देंगे। इससे हमारे रहन-सहन के ढंग में भी वृद्धि होगी।

आधुनिक यातायात के साधनों वाणिज्य और व्यापार, महत्त्वपूर्ण परिणाम यह है कि भौतिक दूरी के बावजूद राष्ट्रीय सीमाएँ, खण्ड-सम्बन्धी विभेद, विश्व (प्रौद्योगिक दृष्टिकोण से) समरूप और अन्योन्याश्रित हो गया है। छोटे उद्योग-धन्धों की अवहेलना कर बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों की स्थापना पर बल दिया गया है। इस प्रौद्योगिक क्रांति ने भूमि पर से दबाव भी कम कर दिया है जिससे कृषि कार्य में रत अधिकांश व्यक्ति वेकार हो गए और वे अन्य कार्यों की खोज में नगरों की तरफ चल पड़े।

(३) व्यापारिक क्रान्ति (Commercial Revolution) :—

नागरीकरण की वृद्धि में व्यापारिक क्रान्ति तृतीय कारक है। विश्व-बाजार, विनिमय व्यवस्था तथा यातायात और संवाद-प्रेषण (Communication) के उन्नत साधनों के विकास से नागरिक क्षेत्र के साथ ही साथ ग्रामीण जनसंख्या भी प्रभावित हुई है। नगरीय विकास-क्रम में व्यापार और वाणिज्य का अस्तित्व बहुत प्राचीन काल से रहा है। जब आधुनिक यन्त्रों और यातायात के साधनों का अन्वेषण नहीं हुआ था, उसके पूर्व से ही व्यापार प्रथा प्रचलित थी क्योंकि व्यापार के बिना नगर का अस्तित्व ही नहीं कायम रह सकता। व्यापार की महत्ता का उल्लेख करते हुए सिम्स (Sims) ने लिखा है, "व्यापार नगर के अस्तित्व के लिए उतना ही आवश्यक

है जितना एक प्राणी के लिए रक्त का परिभ्रमण।"[1] अन्तःसम्बन्धित व्यापार व्यवस्था के कारण दूर-दूर के नगरों में कृषि-उत्पादनों को पहुँचाया जाता है।

(४) यातायात के साधनों की बढ़ती हुई क्षमता (Increasing Efficiency of Transportation) :—

यातायात के साधनों के निरन्तर विकास और बढ़ती हुई कार्य-कुशलता से ग्रामीण और नागरिक एकीकरण हुआ है। अभी ऊपर हमने देखा कि वाणिज्य और व्यापार नगर के महत्वपूर्ण निर्धारक कारक हैं। व्यापार के बिना नगर का अस्तित्व ही नहीं हो सकता। अतः आवश्यक है कि व्यापार का अन्तर्राष्ट्रीय और अन्तर्देशीय पैमाने पर विस्तार किया जाय। इसके लिए यातायात के साधनों की सहायता लेना अत्यावश्यक है। इन्हीं साधनों के माध्यम से ही उत्पादित माल एक स्थान से दूसरे स्थान को ले आया और ले जाया जा सकता है। इस प्रकार, व्यापार यातायात के साधनों पर आधृत है।

रेल, साइकिल, मोटर, ट्रक, बस, मोटर साइकिल आदि यातायात के साधनों ने भी केन्द्रीय नगर के विकास में सहयोग प्रदान किया है। आज इन साधनों के जरिए गाँव का व्यक्ति शहर में और शहर का व्यक्ति गाँव में बहुत ही शीघ्र चला जाता है। इस तरह ग्रामीण और नागरिक संस्कृतियों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं, प्रथाओं और व्यवहारों का परस्पर आदान-प्रदान होता है और नागरिक रंग-ढंग और सभ्यता से प्रभावित होकर ग्रामीण नगरों की तरफ चल देते हैं। इन्हीं यातायात के साधनों के द्वारा ही गाँव का व्यापार बढ़ा। वहाँ का उत्पादित माल शहरों में और दूर-दूर तक इन्हीं साधनों द्वारा भेजा जाता है। इस प्रकार ग्रामों पर नगरीय प्रभाव पड़ा जिससे गाँव का स्वरूप परिवर्तित होने लगा।

जल मार्ग और रेल, राष्ट्रीय नगरीय प्रतिमान और कुछ अंश तक आन्तरिक नागरिक संरचना को आकार प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण कारक रहे हैं। इनसे दूर-दूर तक के क्षेत्रों को सुविधाएँ प्राप्त हुईं और अधिक श्रम विभाजन तथा नागरीकरण संभव हो सका। आर्थिक क्रियाओं के

1. "Trade is as necessary to the existence of the city as is the circulation of blood to an organism." N. L. Sims : Elements of Rural Sociology, III Ed., p. 185.

सामाजिक नियंत्रण और नागरीकरण में यातायात के साधन महत्वपूर्ण होते हैं।

(५) जनसंख्यात्मक क्रान्ति (Demographic Revolution) :—

उपरोक्त चारों क्रान्तियाँ औद्योगिक क्रान्ति के विभिन्न पक्ष हैं। नागरीकरण का संबंध जनसंख्यात्मक क्रांति से भी है। औद्योगीकरण के प्रभावस्वरूप मनुष्य नगरों की तरफ अग्रसर हो रहे हैं। परिणामस्वरूप विश्व के समस्त नगरों की जनसंख्या बड़ती जा रही है। औद्योगिक समाज ने मृत्यु-दर में कमी कर दी है और जन्म-दर उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है जिससे जनसंख्या में भी निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। जन्म-दर के अतिरिक्त नगरीय जनसंख्या में वृद्धि का एक कारण देशान्तरगमन और अन्तर्प्रवास भी है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक स्थान की जनसंख्या विस्थापित होकर दूसरे स्थान पर चली जाती है और रोजगार आदि प्रारंभ कर देती है। चूंकि नगरों में विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की सुविधाएँ रहती हैं, इसलिए ग्रामीण जनता और भी आकर्षित होती है।

पूर्व औद्योगिकयुगीन नगरों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि उस समय नगरों में आज की भाँति अनेक प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं। उस समय नगरों में जन्म-दर की अपेक्षा मृत्यु-दर अधिक थी। विभिन्न प्रकार के छुतहे और भयंकर रोगों का अत्यधिक प्रभाव था जिससे लोगों की मृत्यु अधिक संख्या में होती थी। आज की तरह, औषधि-विज्ञान भी उन्नत अवस्था में न था। लेकिन औद्योगीकरण के पश्चात् हम देखते हैं कि समस्त बातें एकदम बदल गई हैं। आज भयंकर से भयंकर रोगों पर विजय प्राप्त किया जा सकता हैं। अच्छी से अच्छी और सस्ती से सस्ती दवाईयों का भी आविष्कार हो चुका है जो रोग-निरोध के लिए बहुत ही मुफीद हैं। जन्म-मरण लेखा से ज्ञात होता है कि आज मृत्यु-दर में कमी आ गई है और जन्म-दर में दुगनी वृद्धि हुई है। इन्हीं सब कारणों से नगरों में जनसंख्यात्मक क्रांति हुई है। इस प्रकार, हम देखते हैं कि नागरीकरण की प्रक्रिया ने किसी भी राज्य या नगर में जनसंख्या की सघनता को बढ़ाया है।

विभिन्न ऐतिहासिक काल-क्रमों, और विश्व के विभिन्न राज्यों एवं देशों में नागरीकरण की प्रक्रिया भिन्न-भिन्न रही है। सन् १८०० के पूर्व, विश्व में ऐसा कोई भी देश नहीं था जहाँ कि संख्या अत्यधिक रही हो। लेकिन १९ वीं और २० वीं शताब्दी से हम पाते हैं कि नगरों में जनाधिक्य होने लगा। १८५० से विश्व नागरीकरण की दर में वृद्धि होने लगी है।

नागरीकरण और विकासोन्मुख क्षेत्र

(Urbanization & Developing Area)

औद्योगिक क्षेत्रों में नागरीकरण की संकेन्द्रीयता (Concentration) से यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि अधिकांश नगरीय जनता इन क्षेत्रों में पाई जाती है, जैसा कि सामान्यतया सोचा जाता है। वास्तविकता तो यह है कि विश्व की जनसंख्या का ३।४ भाग पूर्व-औद्योगिक देशों (Pre-Industrial Countries) में निवास करती है। यद्यपि ये समस्त देश मुख्यतः ग्रामीण हैं लेकिन इन औद्योगिक राष्ट्रों के व्यापारिक प्रभाव के कारण ये कुछ अंश तक नागरीकृत (Urbanised) हैं। परिणामस्वरूप हम पाते हैं कि विकसित हो रहे देशों में अनेक नगर सन्निहित हैं। उन देशों में, जहाँ आधे से अधिक लोग कृषि कार्य, वृक्ष-रोपण और मछली मारने में रत हैं, ४६३ बड़े नगर हैं। औद्योगीकृत राष्ट्रों की अपेक्षा विकासोन्मुख देशों के नगरों में अधिक जनसंख्या निवास करती है।

प्रगतिशील राष्ट्रों में नागरीकरण की संकेन्द्रीयता पिछले १५० वर्षों की देन है। सन् १८०० में, सामान्य जनसंख्या की तरह ही बड़े शहरों की जनसंख्या भी पृथ्वी पर इधर से उधर बिखरी हुई थी लेकिन १९ वीं शताब्दी में औद्योगीकरण के विस्तार ने नागरीकरण की मात्रा को तीव्र गति प्रदान किया। विश्व के प्रगतिशील और अ-प्रगतिशील भागों के मध्य की दरार (Hiatus) अस्थायी घटना है। ज्योंही अत्यधिक प्रगतिशील देशों में परिवर्तन हुआ, नागरीकरण की मात्रा बहुत अधिक हो गई, नगरों की वृद्धि मन्द पड़ गई। वास्तव में यह २० वीं शताब्दी में ब्रिट्रेन, स्विटजरलैन्ड, नीदरलैन्ड और अमेरिका में प्रत्यक्ष रूप से दर्शनीय हुआ। ऐसा होना निश्चित था क्योंकि नगरों में रहने वाली जनसंख्या का अनुपात अधिक होता गया तो इस बढ़ोत्तरी की दर की सुरक्षा, उस अनुपात में कम होती गई। पुनः हम जानते हैं कि नगरों की वृद्धि ग्रामीण-नागरिक विस्थापन के फलस्वरूप ही हुई जिसने प्राकृतिक अथवा स्वाभाविक रूप से बढ़ती हुई जनसंख्या से अधिक योगदान किया। नगरों मैं ऐसी वृद्धि स्वाभाविक रूप से कभी भी नहीं हुई थी। अतः हम देखते हैं जब कि औद्योगिक क्षेत्रों में इस प्रकार का क्रमिक ह्रास हो रहा है, विकसित हो रहे अधिकाँश क्षेत्रों में नागरीकरण की दर में वृद्धि हो रही है। इस प्रकार, आज विश्व में संतुलन की अवस्था चल रही है। परिणामस्वरूय, अगले ५० या १०० वर्षो में नगरीय जनसंख्या एक बार पुनः विश्व की जनसंख्या के अनुपात में छिट-फुट हो जायगी। यदि ऐसा हुआ तो यह

एक विशाल चक्र की (विश्व का नागरीकरण) समाप्ति का सूचक होगा।

अधिकांश पूर्व औद्योगिक क्षेत्रों में नागरीकरण की तीव्रता आश्यचर्यजनक है। एक समूह के रूप में विकसित हो रहा देश (१ लाख में ६ प्रतिशत + नगर और २० हजार में ११ प्रतिशत +नगर) नागरीकरण की उच्च दर की तरफ से कुछ अन्तर पर गतिशील हो चुका है। जब से अत्यधिक आधुनिक औद्योगिक देश नागरीकरण को तीव्रता प्रदान करने की तरफ उन्मुख हुए हैं, प्राचीन देशों की अपेक्षा वे तेजी से इस ओर कार्यरत हैं। विश्वास करने का एक कारण भी है कि वर्तमान विकासोन्मुख क्षेत्र की भविष्यगत गति वास्तव में तीव्र हो सकती है। जर्मनी और जापान की भाँति यदि ये क्षेत्र नागरीकरण की तीव्र दर बढ़ाने में समर्थ हो जाते हैं तो अगले ५० वर्षों में एक समूह के रूप में, वे अत्यधिक नागरीकृत (Urbanised) हो जायेंगे।

पिछड़े हुए क्षेत्रों में नागरीकरण यह दर्शाता है कि वे चाहे कुछ भी हों लेकिन उनमें स्थिरता है। कभी-कभी जब कोई व्यक्ति पूर्व औद्योगिक देशों की विशाल कठिनाइयों और अक्षमताओं पर दृष्टिपात करता है तो वह यह सोचने के लिए लालायित हो जाता है कि ये समाज स्थिर (Static) हैं। ऐसी विचार-धारा तब उद्भूत होती है जब वह वहाँ प्रचलित अविस्मरणीय रीति-रिवाजों और गरीबी को देखता है। लेकिन नगरीय वृद्धि और नागरीकरण की सामग्री (Data) उन्हें उच्चतम गतिशील गुणों को अपनाने को कहता है।

विकासोन्मुख देशों से सम्बन्धित सामान्यीकरण को देखते हुए कोई भी समझ सकता है कि सभी पूर्व औद्योगिक देश एक से ही नहीं हैं। कुछ अन्य की अपेक्षा बहुत ही अधिक नागरीकृत हैं। कुछ जनसंख्या अर्थ-व्यवस्था और समाज में, अन्य से भिन्न होती हैं। इस सम्बन्ध में हमने कुछ देशों को विशिष्ट विश्लेषण करने के लिए चुना है।

किसी भी विशिष्ट देश का विश्लेषण करते समय दो बातें मस्तिष्क में उभरनी चाहिए। प्रथम यह कि, विकासोन्मुख क्षेत्रों के संबंध में हमारी सांख्यिकी अन्य क्षेत्रों की तरह उतनी अच्छी नहीं हैं। वे उन औद्योगिक राष्ट्रों के ही समान हैं जब कि वे (औद्योगिक राष्ट्र) तुलनात्मक विकास क्रम पर थे। समय के साथ पीछे लौटने पर हम सामग्री बहुत ही निम्न पाते हैं। द्वितीय यह कि, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक विशिष्ट देश का तुलनात्मक विश्लेषण करके बिना किसी लाभ के उससे कुछ सीख सकते हैं। इस प्रकार, इसका विश्लेषण तुलनात्मक सांख्यिकी पृष्ठभूमि के आधार पर किया गया है।

भारतवर्ष, इजिप्ट और अफ्रीका जैसे विशिष्ट क्षेत्रों को संक्षिप्त व्याख्या के लिए चुना गया है जिनमें भारतवर्ष प्राचीन कृषि प्रधान देश है जहाँ नागरीकरण की दर सामान्य है। इजिप्ट अत्यधिक नागरीकृत और विघटित कृषि-प्रधान देश है और केन्द्रीय तथा पश्चिमी अफ्रीका नागरीकरण का नवीन क्रांतिकारी क्षेत्र है।

(क) भारतवर्ष[1] में नागरीकरण (The Case of India):—

औद्योगीकरण के दृष्टिकोण से भारतवर्ष क्रम में मध्य-बिन्दु पर आता है। भारतवर्ष की अपेक्षा विश्व की ५१ प्रतिशत जनसंख्या अत्यधिक औद्योगिक देशों में और ४९ प्रतिशत जनसंख्या कम औद्योगिक देशों में रहती है। प्रत्येक देश को इकाई मानने पर विश्व की ४३ प्रतिशत बस्तियाँ (Colonies) और देश, भारत की अपेक्षा अधिक औद्योगिक हैं। १९५१ में, भारत में ६८.९ प्रतिशत पुरूष कृषि-कार्य करते थे। अत: निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भारतवर्ष विकासोन्मुख श्रेणी में आता है लेकिन उस श्रेणी के औसत देशों की अपेक्षा वह अधिक प्रगतिशील है।

अब एक रोचक प्रश्न उठता है। आधुनिककरण (Modernization) के विभिन्न पहलू हैं और यदि देशनांकों (Indices) का जो इन पहलुओं का मापदण्ड है, पता लग जाय तो हम यह पता लगा सकते हैं कि किस प्रकार एक देश अधिक विकसित होता है और किस प्रकार कम। निम्नलिखित तालिका[2] यह दर्शाता है कि भारतवर्ष शिक्षा में बहुत

	भारतवर्ष से अग्रिम देशों में जनसंख्या का प्रतिशत	भारतवर्ष से अग्रिम देशों का प्रतिशत
गैर कृषि-कार्य	५१	४३
कृषि का घनत्व	५७	६९
नागरीकरण	५९	५१
साक्षरता	९२	६८
प्रति व्यक्ति आय	५७	७३

पीछे, प्रति व्यक्ति आय में अत्यन्त पीछे और कृषि में न्यून है। व्यावसायिक संरचना और नागरीकरण के मामले में यह सर्वोत्तम है। अतः हम कह

1. Kingsley Davis : Social and Demographic Aspects of Economic Development in India.

2. Extracted from Hatt & Reiss : Cities & Societies, p. 130.

सकते हैं कि भारतवर्ष में, विकास के अन्य पहलुओं से आगे बढ़ने में, नागरीकरण की प्रवृत्ति वर्तमान है। १९५१ में, १० हजार या इससे अधिक जनसंख्या वाले नगरों में ६.८ प्रतिशत जनसंख्या थी। नागरीकरण की प्रक्रिया में भारतवर्ष, ब्राजील से आधे से भी कम और चिली से ¾ भाग सिर्फ कम है।

भारतवर्ष की जनसंख्या का वर्तमान प्रतिशत संख्या, जो बड़े शहरों में निवास करती है, लगभग उतनी ही है जितनी कि १८५५ में अमेरिका में थी। लेकिन उस समय की अपेक्षा भारतवर्ष में नागरीकरण की प्रक्रिया अधिक मन्द है और प्रारम्भिक कालों में तो यह बहुत ही मन्द थी। अमेरिका में, १९२० से १९६० के बीच बड़े नगरों में रहने वालों का अनुपात प्रति दशक में ६३ प्रतिशत था। भारत में १८९१ से १९५१ तक यह २२ प्रतिशत था। यह संकेत करता है कि भारत के विकास में उत्साहहीनता रही है जो अमेरिका में नहीं रही। परिणामस्वरूप नागरीकरण के समान स्तर पर विकास-दर की असमानता में भी भारतवर्ष पीछे आता है। इस मामले में, १८९१ में, भारतवर्ष अमेरिका से ५५ वर्ष पीछे था लेकिन १९३१ तक वह ९० प्रतिशत से भी अधिक पीछे था। १९३१ के पश्चात् भारतवर्ष में नागरीकरण की दर में वृद्धि हुई। यह क्रम कितने दिनों तक जारी रहेगा, इस सम्बन्ध में कुछ कहना कठिन है।

(ख) इजिप्ट : अति-नागरीकृत देश (Egypt : An over urbanized country) :—

इजिप्ट, आर्थिक विकास की अपेक्षा नागरीकरण में अत्यधिक आगे है। इसी अर्थ में इसे 'अति-नागरीकृत' कहा गया है। निम्नलिखित आँकड़ों से यह कथन और भी स्पष्ट हो जाता है।

		नगरों में जनसंख्या का प्रतिशत	
		१००,००० +	२०,००० +
स्विट्जरलैण्ड	१९५०	२०.६	३१.२
इजिप्ट	१९४७	१९.३	२८.५
स्वीडेन	१९४५	१७.४	२९.२
फ्रांस	१९४६	१६.६	३१.९

इन आँकड़ों को देखने से ज्ञात होता है कि इजिप्ट स्विटजरलैंड के लगभग ही नागरीकृत है और फ्रांस तथा स्वीडेन की अपेक्षा अधिक नागरीकृत है। अपने औद्योगिक स्थिति की तुलना में इजिप्ट बहुत अधिक नागरीकृत हैं। यह दशा कुछ ही दिनों की नहीं बल्कि ४० वर्षों की उपज है। अतः अति-नागरीकरण वास्तविक है और समय के साथ इसमें वृद्धि हुई हैं।

इस स्थिति की व्याख्या करने के लिए इस बात को ध्यान में रखना होगा कि इजिप्ट में कृषि योग्य ग्रामीण क्षेत्र अत्यन्त दरिद्र और घने रूप में बसे थे। जनसंख्या की यह सघनता एक शताब्दी से थी और इसका कारण अर्थ-व्यवस्था और गैर-कृषि सम्बन्धी भाग के विस्तार की अक्षमता थी। इसी के कारण दरिद्रता भी थी। ग्रामीण समुदाय में दरिद्रता के परिणामस्वरूप एक विचित्र बात हुई और वह यह कि जो लोग वास्तव में खेती नहीं करते थे, नगरों में चले गए। मि० राबर्ट पार्क जूनियर ने १९४७ के जनगणना के आधार पर पता लगाया कि सिर्फ १० प्रतिशत व्यक्ति ही ग्रामों में रहते थे। इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता कि इजिप्ट में सामाजिक और आर्थिक संरचना ने कृषकों को इतना दरिद्र बना दिया था कि जीविका के लिए उनके पास थोड़ा-सा या कुछ भी खेत नहीं था। हाथ से बुने हुए उत्पादनों अथवा सेवाओं के द्वारा वे इस गरीबी पर नियन्त्रण नहीं रख सकते थे। अतः जो लोग इन सामानों को जुटा सकते थे, नगरों में चले गए। इस प्रकार नगरों में लोगों का आधिक्य होने लगा।

ऐसी बात नहीं है कि इजिप्ट के नगरों में सिर्फ वे ही लोग आये जो कृषि-कार्य नहीं करते थे बल्कि अधिकांश बेकार लोग भी आए। ये तथ्य यह दर्शाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में सघनता और दरिद्रता के कारण ही लोग नगरों में आए क्योंकि इसके अतिरिक्त उनके पास और कोई उपाय ही नहीं था। जब वे एक बार नगर में आ गए तो उनको भूखों मरने के लिए छोड़ देना सरकार के लिए कठिन हो गया। नगरों में जो अधिकांश विस्थापन (Migration) हुआ, वह पास के देहाती इलाकों से आए हुए शरणार्थियों द्वारा हुआ। इजिप्ट में अति-नागरीकरण के लिए ये सब तथ्य पर्याप्त हैं।

(ग) अफ्रीका में क्रान्तिकारी नवीन नागरीकरण (Revolutionary new Urbanization in Africa) :—

भारतवर्ष और इजिप्ट की अपेक्षा पश्चिमी अफ्रीका में हम पूर्ण रूप से भिन्न विकासोन्मुख क्षेत्र पाते हैं जहाँ प्राचीन आदिवासी जीवन ही जो कि प्रकृति में पूर्ण ग्रामीण है, कुछ समय पूर्व तक प्रभावशाली रहा है। यह क्षेत्र अभी भी अशिक्षित और मूर्ख ग्रामीणों से भरा है। ये लोग अपना जीविकोपार्जन कुदाल-फावड़ों से अथवा शिकार या मछली मार कर करते हैं।

अब इस भीड़युक्त प्राचीन क्षेत्र में तीव्र रूप से आधुनिक नगरीय विकास को प्रोत्साहित किया जा रहा है। यह नागरीकरण न तो यूरोप के उत्तर-कालीन मध्ययुगीन नागरीकरण के समान है और न ही १८ वीं-१९ वीं

शताब्दी का नागरीकरण है बल्कि यह २० वीं शताब्दी का नागरीकरण है। प्राचीन संस्कृतियाँ और आज के नगर मिल कर ग्रामीण-नागरिक जीवन को उन्नत कर रहे हैं जिसे विश्व में किसी भी स्थान का अवलोकन करने पर देखा जा सकता है। यह पाषाणयुगीन संस्कृति और औद्योगिक संस्कृति से भिन्न दोनों का मिश्रण है।

अफ्रीका में ग्रामीण क्षेत्रों से जो लोग नगरों में आते हैं उन्हें स्वामिभक्ति और आदिम रीति-रिवाजों, वर्जनाओं (Tabooes) और अन्धविश्वासों से तुरन्त ही वंचित नहीं किया जा सकता यद्यपि ये सब चीजें आधुनिक नागरिकों के लिए अनुपयुक्त हैं। वे फौरन नगरीय रहन-सहन के ढंग को नहीं अपना सकते हैं। इसका परिणाम एक विचित्र संयोग होता है जो औसत अफ्रीकी नगरों को अवास्तविक, उत्तेजनायुक्त (Tense) और कोलाहलमय (Jangling) बना देता है।

विश्व के किसी भी क्षेत्र की अपेक्षा इस क्षेत्र में नागरीकरण सम्भवतः बहुत तेजी से हो रहा है। इस क्षेत्र की वर्तमान राजधानी एलिजाबेथविली (Elizabethville) की आबादी ८ हजार थी लेकिन १९४८ तक यह बढ़ कर १ लाख से भी अधिक हो गई। विभिन्न प्रकार के उद्योग-धन्धों और आधुनिकतम कृषि-सम्बन्धी विकास पर्यावरण में एलिजाबेथविली आज भी तीव्र गति से बढ़ रहा है। बेल्जियम काँगो की राजधानी लियोपोल्डविली (Leopoldville) की आबादी १९३० में लगभग ३४ हजार थी लेकिन बीस वर्ष पश्चात १९५० में इसकी जनसंख्या में सात गुनी वृद्धि हुई अर्थात् यह आबादी बढ़ कर २ लाख ११ हजार हो गई। कुछ ही वर्षों में इसकी आबादी ५ लाख हो जायगी। ऐसी बात नहीं है कि लियोपोल्डविली का इतिहास अद्वितीय है। नीग्रो अफ्रीका में अनेक अन्य नगर हैं जहाँ वृद्धि की दर भी दर्शनीय और तुलना योग्य है। इनमें से कुछ नगरों की आबादी द्वितीय विश्व-युद्ध तक चार गुना अधिक हो गई।

इन महान क्षेत्रों में नगरों की तीव्र वृद्धि का कारण भिन्न-भिन्न है। क्षेत्र के शहरों और नगरों में, जिनमें से अधिकांश नवीन हैं, अद्भुत गति से वृद्धि हुई। इनमें अनेक नवीन संस्थाओं को सङ्घटित किया गया। अफ्रीका-वासियों और यूरोपियनों, जनता तथा निजी कर्मचारियों के लिए विस्तृत नवीन आवास योजनाएँ प्रारम्भ की गई। बड़े-बड़े नवीन उपयोगी औद्योगिक मशीनों, विद्युत-उद्योगों, उन्नत बन्दरगाहों और नवीन सुविधाओं की व्यवस्था की गई है। १९४५ से १९५४ के मध्य किसी भी समय कोई भी आगन्तुक इन नगरों में नवीन निर्माण-कार्य देख सकता था।

प्रश्न उठता है कि केन्द्रीय और पश्चिमी अफ्रीका में क्रान्तिकारी और तीव्र नागरीकरण की प्रक्रिया का परिणाम क्या होगा ? भारत और इजिप्ट की अपेक्षा यहाँ प्रारम्भिक आधुनिककरण की आशा अच्छी है क्योंकि इस क्षेत्र में भविष्य की विशाल सुविधाएँ वर्तमान हैं और यहाँ की जनसंख्या भी अपेक्षाकृत दूर-दूर बसी है। शेष विश्व को जो अत्यधिक सघन और औद्योगिक कच्चे मालों की भूखी है, इन साधनों की आवश्यकता है। अतः यह संकेत करता है कि अफ्रीका के प्राथमिक उत्पादन में वृद्धि होगी और क्षेत्र में नगर-भवनों के निर्माण की गति तीव्र रहेगी।

नागरीकरण और सामाजिक समस्याएँ[1]

(Urbanization and the Social Problems)

अभी ऊपर हमने देखा कि नागरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो एक बार प्रारम्भ हो जाने के पश्चात रुकती नहीं। नागरीकरण का अर्थ सम्पूर्ण जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि और केन्द्रीय नगरों में संकेन्द्रण है। आधुनिक समाज में जो गतिशील कारक हैं, जैसे सरकारी उद्योग, विदेशी व्यापार, व्यवसाय, विज्ञान और प्रौद्योगिकी आदि, वे नगरीय हैं और ये नगर को एक सीमा तक उन्नति के पथ पर अग्रसर करते हैं। ये कारक आय में वृद्धि और नगरीय क्षेत्र में उत्पादन और उपभोग की सुविधाएँ प्रदान करते हैं। इस प्रकार नागरिक क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र पर दबाब डालता है जिससे ग्रामीणों में बहिर्गमन (Exodus) होने लगता है और वे नगरों में आकर बसने लगते हैं। इस प्रकार, विस्थापन के द्वारा नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होने लगती है। नगरीय प्रभाव के फलस्वरूप परम्परात्मक मूल्यों में भी परिवर्तन होने लगते हैं। नागरीकरण से अनेक सामाजिक समस्याएँ—गन्दी बस्तियां, पारिवारिक व्यतिक्रम, बाल-अपराध, वैश्यावृत्ति और बेरोजगारी, उत्पन्न हो जाती हैं।

नागरीकरण एक व्यय-साध्य प्रक्रिया है। भवन और नगरीय संरचना का खर्च वहन करना एक विकासोन्मुख देश की क्षमता के परे है। चूंकि बढ़ती हुई नगरीय जनसंख्या राजनैतिक और आर्थिक केन्द्रों में एकत्रित होने लगती है इसीलिए राजनैतिक अस्थिरता के कारण विकासात्मक प्रक्रिया के अवरुद्ध हो जाने का भय उत्पन्न हो जाता है। अतः आवश्यक है कि ग्रामीणों का विकास किया जाय। ग्रामीण विकास से सिर्फ नागरीकरण के अस्वास्थ्यकर

1. Based on an article, by Dr. V. K. R. V. Rao, Member Planning Commission, published in 'National Herald' Dated 5. 1. 1964.

और अनार्थिक (Uneconomic) दर को ही नहीं रोका जा सकता बल्कि यह रहन-सहन का ढंग उन्नत करने, ग्रामीण-आर्थिक उत्पादन को सुधारने, राष्ट्रीय आर्थिक विकास की दर समृद्ध करने और सम्पूर्ण राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने में भी मदद करता है। डा० राव का कथन है कि जब तक राष्ट्रीय आय और उत्पादन में वृद्धि नहीं हो जाय तब तक ७० से ९० प्रतिशत सामाजिक कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे विकासोन्मुख देशों में जाकर कार्य करें।

ऐसी बात नहीं है कि एक विकासोन्मुख देश के लिए सिर्फ ग्रामोत्थान और ग्रामीण विकास ही आवश्यक हैं बल्कि नागरीकरण भी अपेक्षित है। अतः इन दोनों को मिला देना चाहिए ताकि ये दोनों प्रकियाएँ वृद्धि की दर में एक दूसरे की सहायता करती रहें। लेकिन व्यावहारिक रूप में हम इन दोनों में एकता नहीं पाते और न ही इनके मध्य नियोजित परिपूर्णता (Complementarity) का ही प्रमाण पाते हैं। लेकिन पिछले १२ वर्षों से भारतवर्ष में इस दिशा में उत्साहपूर्ण प्रयत्न किए जा रहे हैं। हम लोगों ने राष्ट्रीय स्तर पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया है और इसमें ग्राम-समितियाँ, सहकारी-सङ्घ, ब्लाक समितियाँ और पंचायती राज्य जैसी अति आधुनिक संस्थाओं ने महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। इन संस्थाओं को कार्य-कारिणी और वित्तीय सम्बन्धी अधिकार प्रदान किये गये हैं।

लेकिन हम देखते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक विकास योजनाओं को नगरों की तरह सफलता नहीं मिल सकी और न ही इसने कृषकों की शोचनीय आर्थिक समस्या तथा गाँव की अन्य कमजोरियों को ही हल किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसने कृषि-उत्पादन में वृद्धि की है, (१० वर्ष में लगभग ३० प्रतिशत) गाँवों पर नगरीय प्रभाव की छाप डाली है तथा आधुनिक वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग किया है। लेकिन इन सबके बावजूद आय के सम्बन्ध में, ग्रामीण-नागरिक वैभिन्न्य समाप्त नहीं हुआ है। इसलिए ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक है कि नागरीकरण की प्रक्रिया के साथ अत्यन्त सहयोग किया जाय।

राजनीति का लक्ष्य (Policy Measures) :—

यह माँग की जा रही है कि ग्रामीण क्षेत्रों में नौकरी की सुविधाओं में परिवर्तन हो, ग्रामीण आय में वृद्धि हो और सामाजिक-सांस्कृतिक सेवाओं के स्तर में उन्नति हो। इसके विपरीत, नगरों में सिर्फ शहरी नियोजन की ही आवश्यकता नहीं है बल्कि बड़े नगरों के आकार की सीमा हो तथा छोटे शहरों को प्रोत्साहित किया जाय ताकि शहर और देहात के मध्य स्थिरता

स्थापित करना सरल हो जाय। इन सबकी प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि भूमि-सुधार, भूमि की चकबन्दी तथा कृषि में वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक यन्त्रों का उपयोग किया जाय। लेकिन सिर्फ कृषि-उत्पादन में वृद्धि करके ही कृषकों की समस्याओं का समाधान नहीं किया जा सकता और न ही उनके निम्न आय के स्तर को सुधारा जा सकता है। यह भी स्पष्ट हो जाना चाहिए कि जितने दिन तक गाँव छोटे रहेंगे तब तक आर्थिक रूप से सामाजिक सांस्कृतिक सेवाओं को प्रदान कर सकना सम्भव नहीं होगा। इसलिए राजनीति का जो लक्ष्य हो, उसमें ये बातें सम्मिलित होनी चाहिए :—

(i) ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग-धन्धों, शैक्षिक और व्यावसायिक संस्थाओं की स्थापना।

(ii) कृषि और प्राकृतिक साधनों से सम्बन्धित ग्रामीण उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन।

(iii) छोटे-छोटे शहरों की स्थापना जिसमें ग्रामीण वातावरण की जटिलताएं निहित हों और सामाजिक-सांस्कृतिक सेवाएँ दी जाँय तथा नौकरियों में परिवर्तन हो। इन्हें ग्रामीण शहर (Rural Town) कहा जाय और इस प्रकार सम्पूर्ण प्रक्रिया को नागरीकरण कहा जा सकता है।

(iv) बड़े-बड़े शहरों और नगरों की वृद्धि रोकने के लिए विशिष्ट लक्ष्यों की योजना बनाई जाँय तथा शिक्षा, प्रशिक्षण और आवासों का निर्माण करा कर नवागन्तुकों को विशिष्ट सुविधाएँ प्रदान की जाँय। इस ढंग से ग्रामीण विकास और नागरीकरण में एकता और संयुक्त नीतियों का शुभारम्भ सम्भव हो सकता है।

अध्याय ७

नागरीवाद
(Urbanism)

नागरीवाद का अर्थ
(Meaning of Urbanism)

'नागरीवाद' से तात्पर्य नगरीय जीवन की दशा से है। यह जीवन की एक विशिष्ट प्रणाली है। बर्जेल महोदय ने लिखा है—'......नागरीकरण एक प्रक्रिया के रूप में और नागरीवाद एक दशा या परिस्थितियों के पुंज के रूप में समझे जायेंगे।"[१] विर्थ (Wirth) ने नागरीवाद को इस प्रकार परिभाषित किया है—"नागरीवाद लक्षणों का वह पुंज है जो नगरों में एक विशिष्ट प्रकार का जीवन उत्पन्न करता है।"[२]

कुछ विद्वान नागरीकरण और नागरीवाद को एक ही चीज मानते हैं लेकिन यह सर्वथा गलत है। दोनों में सूक्ष्म अन्तर है। क्वीन और कारपेण्टर (Queen & Carpenter) ने दोनों के मध्य भेद स्पष्ट करते हुए लिखा हैं—"नागरीवाद से हमारा तात्पर्य नगर आवास से है और नागरीकरण से तात्पर्य जीवन की उस विशिष्ट पद्धति से जो नगर आवास से सम्बन्धित है।"[3]

---

1. "......Urbanization will be considered as a process and urbanism as a condition or set of circumstances.' E. E. Bergel : Urban Sociology. p. 10.

2. "Urbanism is that complex of traits which make up the characteristic mode of life in cities." Louis Wirth : Urbanism as a Way of Life. American Journal of Sociology, Vol. 41, NO 1, July 1938.

3. Urbanism, we use to identify the phenomenon of city residence; urbanization we use to identify the distinctive

नागरीकरण एक प्रक्रिया है और यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। यह गतिशीलता का परिचायक है। नागरीकरण से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों के नगरीय रूप धारण करने की प्रक्रिया से है। इसके विपरीत, नागरीवाद नगरीय जीवन का एक ढंग है। यह स्थिरता का सूचक है। जब कोई बस्ती नागरीकरण की प्रक्रिमा पार कर लेती है अर्थात् उसका नागरीकरण हो जाता है तब वह नागरीवाद का सूचक हो जाती है। नागरीवाद नागरिक जीवन को कहते हैं। इसकी कुछ अपनी विशेपताएँ होती हैं जिसे कहीं भी पाया जा सकता है। विर्थ ने नगरीय जीवन प्रणाली की कुछ विशेषताओं को सकलित किया है। उनके अनुसार नगरीय वैषम्य, अत्यधिक अन्योन्याश्रितता, वाह्याडम्बर के अनेकानेक सामाजिक सम्बन्ध एवं व्यवहार तथा उनकी शिष्ट और बौद्धिक जीवन प्रणाली—ये सब नागरीवाद की सूचक हैं।

नागरीवाद कभी भी नगरों तक ही नहीं सीमित रहा। इसका प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों पर भी पड़ा क्योंकि सदैव से ही नगर और गाँव एक दूसरे पर निर्भर रहे हैं। ग्राम, नगरीय जीवन प्रणाली को अपनाते रहे हैं। इसलिए नागरीवाद की विशेषताएँ ऐसी हैं कि एक बार उन्हें ग्रहण कर लेने के पश्चात् व्यक्ति चाहे जहाँ रहे, (चाहे वह गाँव में ही क्यों न रहे) वह इस जीवन के ढंग को सरलतापूर्वक छोड़ नही पाता। नेल्स एन्डरसन (N. Anderson.) ने लिखा है—"नागरीवाद जीवन के एक ढंग के रूप में नगरों एवं कस्बों तक ही सीमित नहीं है, यद्यपि इसकी उत्पत्ति बड़े नागरिक केन्द्रों से ही होती है। यह व्यवहार का एक ढंग है और इसका अर्थ यह हुआ कि एक व्यक्ति यद्यपि गाँव में रहता है पर अपने विचार एवं आचरण में वह नागरिक हो सकता है। दूसरी तरफ, एक अ-नागरिक व्यक्ति भी एक नगर के अत्यधिक नागरीकृत भाग में रह सकता हैं।"[१] इसी प्रकार विर्थ (Wirth) ने भी लिखा है—

---

way of life typically associated with city residencc". Queen & Carpenter : The American City. p. 29.

1. "Urbanism as a way of life is not confined to cities and towns, although it emerges from the great metropolitan centres. It is a way of behaving and that means one can be very urban in his thinking and conduct although he may live in a village. On the other hand, a very non-urbanised person may live in a most urbanised section of a city". Nels Anderson : The Urban Community. Routledge & Kegan Paul, London, p. 1.

"हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ग्रामीण जीवन पर नागरीवाद की उतनी छाप रहेगी जितनी कि वह सम्पर्क और संवाद-प्रेषण के द्वारा नगरीय प्रभाव में आता है। यह कथन इस बात को स्पष्ट करेगा कि यद्यपि नागरीवाद का प्रमुख केन्द्र वे स्थान रहेंगे जिन्हें हम नगर कहते हैं तथापि नागरीवाद नगरों तक ही सीमित नहीं है अपितु वह उस स्थान पर भी पाया जाता है जहाँ तक नगर का प्रभाव पहुँचता है।"[१] इसी प्रकार के विचार बर्जेल (Bergel) ने भी व्यक्त किए हैं—"नागरीवाद अब केवल नगरों तक ही सीमित नहीं रहेगा। यह ग्रामीण कृषक समाज को हटा कर उनका स्थान स्वयं ले लेगा।··· नागरिक जीवन का ढंग ही केवल एकमात्र जीवन का ढङ्ग रह जायेगा।"[२] नागरीवाद बढ़ता ही जा रहा है तथा अन्य प्रकार के जीवन के ढङ्ग को समाप्त करता जा रहा है। बर्जेल ने लिखा है—"नागरीवाद ने एक प्रकार के समाज को ही विकसित नहीं किया है बल्कि यह पहले के समस्त प्रकारों को हटाने की प्रक्रिया में है। एक ग्रामीण कृषक समाज और एक नागरिक समाज के सह-अस्तित्व की बात अब भूतकाल की हो गई है।"[३]

कुछ लोग यह समझते हैं कि नागरीवाद सिर्फ नगर-निवासियों को ही प्रभावित करता है लेकिन विर्थ (Wirth) ने इसका खंडन किया है। उनका कथन है कि नागरीवाद का प्रभाव बड़ा व्यापक है क्योंकि नगर अब केवल लोगों के रहने एवं कार्य करने का ही स्थान नहीं हैं, अपितु यह आर्थिक, राजनैतिक, एवं सांस्कृतिक जीवन के नियंत्रण एवं अनुकरण करने का महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। यह अपने क्षेत्र में समस्त संसार को लपेटता चला जा रहा है।[४]

---

1. Moreover, we may infer that rural life will bear the imprint of urbanism in the measure that through contact and communication it comes under the influence of cities. It may contribute to the clarity of the statements that follow to repeat that while the locus of urbanism as a mode of life is, of course, to be found characteristically in places which fulfil the requirements we shall set up as a definition of the city, urbanism is not confined to such localities but is manifest in varying degree wherever the influences of the city reach." L. Wirth : Urbanisn as a Way of Life."

2. E. E. Bergel : op. cit. p. 14.

3. Ibid, p. 10.

4. L. Wirth, : op. cit.

एन्डरसन ने लिखा है—"जीवन के एक ढंग के रूप में नागरीवाद समस्त भूमण्डल पर फैलता जा रहा है।"[1] यह जीवन का एक ऐसा ढंग है जिसे हमें अपनाना ही पड़ेगा। उसने आगे लिखा है—"कुछ भी हो यह एक ऐसा चलन है जिसे ग्रहण करना ही होगा।"[2]

नागरीवाद की विशेषताएँ

(Characteristics of Urbanism)

जीवन के एक ढंग के रूप में नागरीवाद को एक समय नगर की दीवालों के भीतर स्पष्टतः सीमित कर दिया गया था तथा नगर के भीतर भी कुछ निश्चित क्षेत्र तक ही उसे सीमित किया मया था। लेकिन समयानुसार उसमें व्यापकता आई और आज नागरीवाद की कुछ अपनी विशेषताएँ हैं जिनका उल्लेख विर्थ ने इस प्रकार किया है :—

(i) **अस्थायित्व** (Transiency) :—नगर का व्यक्ति भीड़ में परिवर्तित होने लगता है। नगर में लोगों के आने-जाने से किसी के मार्ग में कोई अवरोध नहीं उत्पन्न होता। नगरों में नित्य-प्रति काफी लोग आते-जाते रहते हैं जिससे किसी से स्थायी रूप से संपर्क स्थापित करना सम्भव नहीं हो पाता। इसीलिए उसका संबंध अस्थायी होता है। रोजाना नए लोगों से जान-पहचान होती है और पुराने लोगों का विस्मरण होता जाता है। वह इतने सारे लोगों को न तो जान ही सकता है और न उससे अभिज्ञ होने की इच्छा ही रखता है।

(ii) **अल्पज्ञता** (Superficiality) :—अस्थायित्व के कारण ही उसके संबंध कृत्रिम, औपचारिक (Formal) और दिखावटी होते हैं। नगर का व्यक्ति कार्याधिक्य से इतना बोझिल रहता है कि दूसरे से मिलने-जुलने, उनके बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने, उनसे संपर्क स्थापित करने तथा सौहार्दपूर्ण वातावरण तैयार करने का उसके पास अवकाश ही नहीं रहता। उसके समस्त व्यवहार कृत्रिम और वाह्याडंबरपूर्ण होते हैं। उसमें छल-कपट और स्वार्थपरता की भावना का समावेश रहता है। वह उन्मुक्त और स्वच्छन्द हृदय से किसी से नहीं मिलता और न ही उसकी यह इच्छा होती है कि किसी के घर जाकर उससे बातचीत करे, उससे सम्पर्क बढ़ाये। यदि कोई परिचित रास्ते में मिल गया तो वह बड़े तपाक से मिलता है जैसे लगता है कि उससे बढ़ कर

---

1. "As a way of life, urbanism is becoming global." N. Anderson. : op. cit. p. 8.

2. "It is nevertheless, a trend that must be accepted." Ibid, p. 8.

उसका शुभचिन्तक और कोई नहीं है। लेकिन यदि इस मिलन की भावना का विश्लेषण किया जाय तो उसमें स्वार्थ की भावना और बाह्यता ही परिलक्षित होगी।

(iii) गुमनामता (Anonymity) :—नागरीवाद की तीसरी विशेषता गुमनामता है। व्यक्ति सदैव अपने को गुमनाम स्थिति में ही रखना चाहता है। ऐसी इच्छा का कारण भी है। नगरों में कार्याधिक्य तथा भीड़भाड़ इतनी अधिक होती है कि लोग एक दूसरे की तरफ ध्यान ही नहीं देते। लोग बगल से निकल जाते हैं लेकिन अपने परिचित को पहचानते तक नहीं क्योंकि सबको अपने-अपने काम की व्यस्तता और शीघ्रता रहती है। इस प्रकार उसकी किसी को न पहचानने की अभिवृत्ति बन जाती है।

लेकिन विर्थ द्वारा बतलाए गए उपरोक्त विशेषताओं पर कुछ लेखकों ने आपत्ति की है। बेस्कम[1] (Bascom) ने अफ्रीका में योरूबा (Yoruba) नगर का अध्ययन कर के पाया कि ये नगर पूर्ण रूप से नागरीकृत नहीं थे तथा यहाँ गुमनामता (Anonymity) भी बहुत कम परिलक्षित होती थी। सेडकी[2] (Sedky) महोदया ने भी पाया कि अलेक्जेन्ड्रिया तथा इजिप्ट में भी नागरीवाद की इन विशेषताओं का अभाव था। इन लोगों का रहन-सहन अभी भी प्राचीन परम्पराओं के अनुसार है। उन्होंने उनमें व्यक्तिवाद (Individualism) की भावना का बहुत कम उदाहरण पाया। अलेक्जेन्ड्रिया बहुत ही कम नागरीकृत (Urbanised) है। वहाँ विभिन्न प्रजातियों, धर्मों और राष्ट्रीयताओं के लोगों का आना-जाना भी बहुत कम है।

नागरीवाद व्यवहार और चिन्तन करने का ही एकमात्र ढंग नहीं है। नागरीकृत व्यक्ति, चाहे वह जहाँ भी रहे, सदैव अपने को नवीनताओं और परिवर्तनों के साथ अभियोजित करता रहता है। वह स्वयं ही गतिशील नहीं है बल्कि वह दूसरों की गतिशीलता का भी स्वागत करता है। वह अपने वर्तमान परिवार के प्रति वफादार हो सकता है लेकिन वह अपने अन्य सम्बन्धियों से सम्पर्क स्थापित करने में असमर्थ है।

जीवन के एक ढंग के रूप में नागरीवाद की तीसरी विशेषता, मानकीकृत प्रभावों (Standardised Iufluences) से सम्बन्धित है जो नगरों

---

1. William Bascom : "Urbanization among the Yoruba" American Journal of Sociology. Vol. 60, No. 5. March 1955, pp. 446–54.

2. Mona Sedky : "Groups in Alexandria, Egypt." Social Research, Vol. 22, No. 4, Winter 1955, pp. 441–50.

में व्याप्त है। किसान और लकड़हारा वही रेडियो कार्यक्रम सुनता है, उन्हीं टेलिवीजन कार्यक्रम और चल-चित्रों को देखता है जिसे अधिकांश नागरीकृत व्यक्ति देखते-सुनते हैं। अमेरिका का कृषक खासतौर से नगर में बने मशीनों का प्रयोग करता है तथा उसके पास नगर में बनी मोटर-गाड़ियाँ भी होती हैं। नगर के बच्चों के सदृश, उनके बच्चे भी एक ही शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। टेलीफोन के माध्यम से वह संपूर्ण विश्व से संबद्ध है और वह भी समाचार पत्र पढ़ने वाला पाठक होता है। सिर्फ समाचार पत्र ही नगरों से नहीं आते बल्कि उनकी कृषि संबंधी पत्र-पत्रिकाएँ भी नगरों में ही सम्पादित और प्रकाशित होती हैं। नगर की स्त्रियाँ खाना बनाने के लिए पैकेटों में बन्द जिन चीजों को खरीदती हैं, उन्हें कृषकों की स्त्रियाँ भी खरीदती हैं। उनके बच्चे भी वही मजाक करते हैं, वही गाने गाते हैं जो शहरों के नवयुवक गाते हैं। इस प्रकार, यह दिखलाई पड़ता है कि दोनों आपस में एक हो जायेंगे।

अतः नागरीवाद को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है जिसमें कुछ की व्याख्या ऊपर की जा चुकी है। यह व्यक्ति की योग्यता से संबद्ध है कि नगरों में किस तरह व्यवहार करना चाहिए। यह संवाद-प्रेषण के ताने बाने का भी एक प्रकार है जिसके द्वारा व्यक्ति सर्वत्र एक वृहद् सामाजिक व्यवस्था में आबद्ध है। इस प्रकार, जीवन के एक ढंग के रूप में नागरीवाद जटिल (Complex) और तरल (Fluid) दोनों है।

अंत में, हम देखते हैं कि नागरीवाद की जिन विशेषताओं पर विर्थ ने अधिक बल दिया है, एन्डरसन ने भी उन्हीं पर बल दिया है और इसे जीवन का एक ढंग ही माना है और उसकी विस्तृत विवेचना भी की है।

नागरीवाद का एक सिद्धांत
(A Theory of Urbanism)

नागरीवाद को परिभाषित करने और उसकी कुछ विशेषताओं का उल्लेख करने के पश्चात् विर्थ (L. Wirth.) ने नागरीवाद के एक सिद्धांत की प्रस्थापना की है जिसका मूल भात्र यह है कि नगरों की उत्पत्ति स्थायी सघन क्षेत्रों के परिणामस्वरूप होती है। इस सघन क्षेत्रों में एक विशिष्ट प्रकार के सामाजिक संबंध की उत्पत्ति होती है जो जीवन के एक नवीन ढंग को प्रस्तुत करती है। जीवन के इस नवीन ढंग को ही नागरीवाद के नाम से संबोधित किया गया है। विर्थ ने लिखा है—"अतः जितना ही अधिक

विस्तृत, सघन और विषम या विजातीय एक समुदाय होगा, उतनी ही उसकी विशेषताएँ नागरीवाद जैसी होंगी।"[1]

नागरीवाद की विशेषताओं के संबंध में विर्थ ने निम्न तीन तत्त्वों को विशेष महत्व दिया है :—

(i) **जनसंख्या का आकार** (Size of the Population Aggregate) :—अरस्तू के समय से ही यह माना जाता रहा है कि किसी निश्चित सीमा के बाहर एक बस्ती में निवासियों की संख्या में वृद्धि से नगर और उस बस्ती पर भी प्रभाव पड़ता है। विशाल संख्या में व्यक्तिगत वैभिन्न्य होता है। अन्तःक्रियात्मक प्रक्रिया में जितने ही अधिक लोग भाग लेंगे उतना ही उनमें संभाव्य विभेद होगा। इन विभिन्नताओं के कारण, रंग, आर्थिक और सामाजिक प्रस्थिति, रुचि और वरीयता के अनुसार, स्थानगत विभाजन उत्पन्न हो जाता है। रक्त-संबंध, पड़ोसीपन और एक ही वंशजों में उत्पन्न स्थायी भावों का अभाव हो जाता है। इस परिस्थिति में स्वार्थ और औपचारिक नियंत्रण एक दूसरे का स्थान ले लेते हैं। जनसंख्या वृद्धि से प्रत्यक्ष संबंध समाप्त हो जाता है और एक ही समुदाय के व्यक्ति एक दूसरे को नहीं जान पाते। मैक्स वेबर (Max Weber) ने इस तथ्य की सामाजिक महत्ता मानते हुए यह संकेत किया है कि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विशाल जन-संख्या और बस्तियों के महत्व का अर्थ उनमें पड़ोसीपन की भावना का ह्रास हो जाना है। अतः "जनसंख्या में वृद्धि परिवर्तित सामाजिक संबंधों का समावेश करती है।"[2]

चूंकि नगरों में जनसंख्या की अधिकता होती है और लोगों का जीवन इतना व्यस्त रहता है कि उनको दूसरों से मिलने का अवकाश ही नहीं मिल पाता इसलिए लोग एक दूसरे के प्रति पूर्ण रूप से अनभिज्ञ रहते हैं। उनमें परस्पर सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं हुआ कि नगर निवासियों की जान-पहचान ग्रामीणों की अपेक्षा, अत्यल्प होती है। कहने का अर्थ यह है कि दैनंदिन के जीवन में जिनके कंधे से कंधा रगड़ाता है और जिसे वे रोज देखते हैं, उनके प्रति भी उनकी जानकारी कम होती है।

1, "Thus the larger, the more densely populated, and the more heterogeneous a community, the more accentuated the characteristics associated with urbanism will be." Louis Wirth. op. cit.

2. The increase in numbers thus involves a changed character of the social relationships." Ibid.

नगरों में लोगों का सम्बन्ध प्राथमिक (Primary) न होकर द्वैतीयक (Secondary) होता है। ग्रामीणों की अपेक्षा नगरवासी, अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिकतर लोगों के ऊपर आश्रित होते हैं और इस प्रकार विशाल संख्या के संघटित समूहों से उनका सम्बन्ध होता है। वे किसी विशिष्ट व्यक्ति के ऊपर कम आश्रित होते हैं। इसीलिए नगरीय सम्बन्ध द्वैतीयक कहा गया है। नगर का सम्बन्ध वास्तव में प्रत्यक्ष हो सकता है लेकिन वह अवैयक्तिक (Impersonal), दिखावटी, क्षणिक और विभाजित होता है। उसका सम्बन्ध कार्य-विशेष से ही होता है।[१]

वाह्यता, अल्पज्ञता, अज्ञानता, क्षणिकता आदि गुण नगरीय सामाजिक सम्बन्धों का बोध कराते हैं तथा सामान्यतया यह भी आरोपित किया जाता है कि नगर-निवासी कपटी और विचारवान होते हैं। हमारी जो जान-पहँचान होती है, उसमें स्वार्थ निहित होता है। उस सम्बन्ध से हम अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। नगरों में जान-पहचान और सम्पर्क की उपयोगिता इतनी ही होती है। यह लक्ष्य-प्राप्ति का एक साधन होता है। इस प्रकार, जहाँ वे एक तरफ घनिष्ट समूहों से संवेगात्मक और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पाते हैं वहीं दूसरी तरफ उनमें आत्माभिव्यक्ति (Self Expression), नैतिकता तथा संयुक्त समाज में रहने की भावना का ह्रास हो जाता है। दुरखीम (E. Durkheim.) के अनुसार यहीं आदर्शशून्यता की स्थिति (State of Anomie) उत्पन्न हो जाती है। प्रौद्योगिक समाज में सामाजिक विघटन उत्पन्न हो जाता है। धन का लूट-खसोट होने लगता है जिससे सामाजिक क्रम में अवरोध उत्पन्न हो जाता है।

अन्योन्याश्रितता (Interdependence) के कारण नगरों में श्रम का विभाजन और विशेषीकरण, दोनों होता है। श्रम-विभाजन का सम्बन्ध अस्थिरता और अन्योन्याश्रितता से होता है। इसीलिए नगरों में परोक्ष सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की जाती है। इस प्रकार, हम देखते हैं कि

---

1. "The contact of the city may indeed be face to face, but they are nevertheless superficial, impersonal, transitory and segmental. The reserve, the indifference, and the blase outlook which urbanites manifest in their relationships may thus be regarded as devices for immunising themselves against the personal claims and expectation of others." Idid.

ये परिवर्तित सामाजिक सम्बन्ध एक नवीन प्रकार के सामाजिक सङ्गठन एवं संरचना (Structure) को उत्पन्न करते हैं।

(ii) **घनत्व** (Density) :—नगर के समाजशास्त्रीय विश्लेषण में जिस प्रकार जनसंख्या के आधिक्य से कुछ निश्चित सामाजिक सम्बन्धों की उत्पत्ति होती है उसी प्रकार सीमित स्थान में जनसंख्या के संकेन्द्रीयता से अर्थात् जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि होने से भी कुछ विशिष्ट परिणाम उत्पन्न होते हैं जिनमें से कुछ की यहाँ व्याख्या की जायेगी।

डारविन (Darwin) ने पेड़-पौधों, फूल-पत्तियों तथा दुरखीम ने मानव समाज के अध्ययन के फलस्वरूप यह निष्कर्ष निकाला कि जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि होने से नगरों में विभेदीकरण और विशेषीकरण का विकास होता है और इस प्रकार सामाजिक संरचना में वृद्धि होती है। प्रातीतिक (Subjective) दृष्टिकोण से सिमेल (Simmel) ने यह निर्देशित किया है कि हमारा भौतिक सम्बन्ध तो प्रगाढ़ होता है लेकिन सामाजिक सम्बन्ध में दूरी आ जाती है। इसके अतिरिक्त, नगरों में चमक-दमक और दरिद्रता, गरीबी-अमीरी, बुद्धि और अज्ञानता, क्रम और अनिश्चितता के मध्य शानदार तुलना की जा सकती है। नगरों में भूमि के लिए तीव्र प्रतिस्पर्धा होती है। कार्य-स्थल विच्छिन्न होने लगते हैं। इस तरह, हम देखते हैं कि नगरों में घनत्व अधिक होने से विशेषीकरण का विकास होता है।

घनत्व, भूमि-मूल्य, किराया, पहुँच, स्वास्थ्य-पूर्णता, प्रतिष्ठा, सौन्दर्यात्मक विचार, शोर-गुल, धुआं और धूल आदि ऐसे कारक हैं, जो रहने के लिए नगरों के विभिन्न क्षेत्रों की वांछनीयता का निर्धारण करते हैं। कार्य की प्रकृति और उसका स्थान, आय, प्रजातीय और जाति-सम्बन्धी विशेषताएँ, सामाजिक प्रस्थिति (Status), रीति-रिवाज़, आदत, रुचि, वरीयता (Preference) और पूर्वाग्रह (Prejudice) आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारण हैं जिनका विचार करके ही नगरीय जनसंख्या किसी स्थान का चयन तथा वितरण करती है। इस प्रकार, विभिन्न प्रकार के लोग एक-एक विशेष चीजों का चुनाव करके ही अपने-अपने क्षेत्रों में रहते हैं। एक दूसरे की कोई तुलना नहीं की जा सकती। उनके रहन-सहन के ढङ्ग, उनकी आवश्यकताओं आदि की तुलना एक दूसरे से नहीं हो सकती। फलतः वे एक दूसरे के विरोधी हो जाते हैं। इसी प्रकार, सजातीय प्रस्थिति (Homogeneous Status) के लोग उसी क्षेत्र का चुनाव, चेतन रूप से अथवा परिस्थितियों से बाध्य होकर कर लेते हैं। अतः नगर के विभिन्न क्षेत्रों का विशिष्ट कार्य अर्थात् विशेषीकरण हो जाता है।

जिन व्यक्तियों में संवेगात्मक या भावना-प्रधान ग्रन्थि नहीं होती और जो साथ ही रहते तथा साथ ही कार्य करते हैं, उनमें भी प्रतिस्पर्धा, उन्नति और पारस्परिक शोषण-वृत्ति पनपने लगती है। अनुत्तरदायित्व और संभाव्य (Potential) नियम-भंग के प्रतिक्रियास्वरूप औपचारिक नियन्त्रण (Formal Controls) का प्रयोग किया जाता है। बिना कठोर नियन्त्रण के कोई भी विस्तृत समाज शायद ही अपनी आत्मरक्षा कर सकता है। नगरीय समाज में घड़ी और यातायात—हमारे सामाजिक क्रम के प्रतीकात्मक आधार हैं। घनिष्ठ भौतिक सम्पर्क असम्बद्ध व्यक्तियों के ऊपर दबाव डालता है जिससे सघन स्थान में बसे बहुसंख्यक लोग क्रोधित हो उठते हैं, उनमें स्नावयिक तनाव (Nervous Tension) उत्पन्न हो जाता है और वे व्यक्तिगत भग्नाशाओं (Frustrations) से ग्रस्त हो जाते हैं।

(iii) **भिन्नता** (Heterogeneity) :—नगरीय जीवन में भिन्नता का काफी अधिक महत्व है। विर्थ ने इस तत्त्व परभी विशेष बल दिया है। नागरिक जीवन में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा जो सामाजिक अन्त:क्रिया (Interaction) होती है, उससे जाति-प्रथा और सामाजिक संरचना की कठोरता भंग होने लगती हैं और एक अन्य प्रकार का सामाजिक संस्तरण (Stratification) उत्पन्न हो जाता है। व्यक्तियों में उच्चतम गतिशीलता के कारण उनमें अस्थिरता और असुरक्षा की भावना जाग्रत हो जाती है। उनमें अन्य नवीन विचार, नवीन कार्य उत्पन्न हो जाते हैं जिनसे नगरीय जीवन प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है। नगर सदैव से प्रजातियों, व्यक्तियों, संस्कृतियों, नवीन जैविक और सांस्कृतिक सन्ततियों का उत्पत्ति स्थल रहा है। इसने व्यक्तिगत विभिन्नता का सहन ही नहीं किया है। इसने पृथ्वी के दूसरे सिरे से लोगों को अपनी ओर खींचा है क्योंकि वे भिन्न हैं और एक दूसरे के लिए महत्वपूर्ण हैं।[1]

इस प्रकार, हम देखते हैं कि नगर में विभिन्न प्रकार के लोग एकत्रित होते

---

1. "The city has thus historically been the melting-point of races, peoples and cultures and a most favourable breeding-ground of new biological and cultural hybrids. It has not only tolerated but rewarded individual differences. It has brought together people from the ends of the earth because they are different and thus useful to one-another, rathr than because they are homogeneous and like-minded." L. Wirth ; op. cit.

हैं जिससे एक नवीन सभ्यता, एक नवीन संस्कृति का अभ्युदय होता है। इन विभिन्न संस्कृतियों, वर्गों और प्रजातियों के नवीन अनुभवों से नगर लाभ उठाता है। इन सबके मिश्रण से नगर में जीवन के एक नवीन ढंग की उत्पत्ति होती है।

जनसंख्या की आंशिक भौतिक स्वच्छंदता तथा सामाजिक गतिशीलता के परिणामस्वरूप सामूहिक सदस्यता में सामान्यतया श्रमिकावर्त्त (Turnover) तीव्र हो जाता है। आवास-स्थल, नौकरी के स्थान और उसकी प्रकृति, आय और स्वार्थ, घटने-बढ़ने लगते हैं और संगठन कार्य तथा सदस्यों के मध्य उन्नत और स्थायी संपर्क स्थापित करना कठिन हो जाता है। नगर के स्थानीय क्षेत्रों में यह कार्यान्वित होती है जहाँ प्रजाति, भाषा, आय और सामाजिक प्रस्थिति में भिन्नता के कारण लोग अधिक पृथक् हो जाते हैं।

यद्यपि नगर बहुत अधिक मात्रा में जनसंख्या में भिन्नता उत्पन्न करता है तथापि यह समान प्रभाव भी उत्पन्न करता है। जहाँ कहीं भी भिन्न प्रकार के लोगों की अधिक संख्या रहती है, वहाँ अवैयक्तिकरण की प्रक्रिया (Process of Depersonalisation) भी रहती है। समानता की यह प्रवृत्ति नगर के आर्थिक आधार पर होती है। कम से कम आधुनिक युग में नगरों का विकास, बाष्प (Steam) के एकाग्रीभूत (Concentrative) शक्ति पर आश्रित है। कारखानों की उत्पत्ति ने अधिक उत्पादन सम्भव बनाया है।

औद्योगीकरण

(Industrialisation)

औद्योगिक विकास और नागरीकरण में पारस्परिक सम्बन्ध है। किसी भी देश में नागरीकरण के जनशास्त्रात्मक पक्ष के आधार पर ही उसके आर्थिक विकास एवं औद्योगीकरण के विषय में साधिकार कहा जा सकता है। नागरीकरण एवं औद्योगीकरण के इस पारस्परिक सम्बन्ध की अत्यन्त क्रमबद्ध व्याख्या इधर हाल में किंग्सले डेविस (K. Davis) और होजलिट ने विशेष रूप से की है। उनके अध्ययन का क्षेत्र भारत भी रहा है। उन्होंने स्पष्ट रूप से इस बात पर प्रकाश डाला है कि भारत में नागरीकरण की प्रक्रिया तुलनात्मक रूप से मन्द रही है क्योंकि वहाँ आर्थिक विकास एवं औद्योगीकरण की प्रक्रिया उसी अनुपात में मन्द है।

यदि हम भारतवर्ष का उदाहरण लेकर उत्तरप्रदेश राज्य के पूर्वी जिलों को ध्यान में रख कर विचार करें तो हमारी बात की पुष्टि हो जाती है। आर्थिक रूप से अविकसित पूर्वी क्षेत्र में नगरों की जनसंख्या में क्रमिक रूप से ह्रास हुआ है। केवल दो महत्वपूर्ण नगरों, वाराणसी और गोरखपुर की जनसंख्या में वृद्धि हुई है जब कि अन्य सभी नगर उद्योग एवं आर्थिक क्रियाओं के अभाव में ह्रासोन्मुख रहे हैं।

वाराणसी, मिर्जापुर, देवरिया और गोरखपुर जिलों के नगरीय क्षेत्रों में गाँवों से नगरों की ओर प्रवास में जहाँ वृद्धि हुई वहीं जौनपुर, गाजीपुर, बलिया एवं आजमगढ़ के नगरीय क्षेत्रों को छोड़ कर लोग अन्य स्थानों पर गए हैं। यह स्थिति इन नगरों की ह्रासोन्मुख आर्थिक स्थिति की परिचायक हैं। एक बात और महत्वपूर्ण है कि इन स्थानों के नगरीय क्षेत्रों की जनसंख्या की वृद्धि का अनुपात देश के अन्य क्षेत्रों के नगरों की तुलना में बहुत ही कम है। देवरिया के नगरीय क्षेत्र की प्रवासी जनसंख्या में जो थोड़ी-सी वृद्धि हुई उसके पीछे कोई आर्थिक विकास का कारण नहीं है बल्कि १९४०-५१ के मध्य

देवरिया को गोरखपुर से अलग कर स्वतन्त्र जिला बनाना है। फलतः प्रशासकीय कारणों से स्वाभाविक रूप से लोग इस स्थान पर आए होंगे।

औद्योगीकरण का अर्थ

(Meaning of Industrialisation)

विश्व के समस्त भाग में आज औद्योगीकरण सम्भवतः सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण है। अभी हाल में ही हुए समस्त स्वतन्त्र राष्ट्र इस बात के लिए प्रयत्नशी हैं कि जितना ही शीघ्र हो सके उतना ही शीघ्र देश को औद्योगीकृत कर दिया जाय। इस प्रकार, हम लोग पूर्ण औद्योगीकरण के युग में पदार्पण कर रहे है।

प्रश्न उठता है कि औद्योगीकरण का अर्थ क्या है ? औद्योगीकरण का तात्पर्य, नवीन बड़े पैमाने के उद्योगों का प्रारम्भ और छोटे उद्योगों का बड़े पैमाने के उद्योगों में बदलने से है। दूसरे शब्दों में, औद्योगीकरण का अर्थ द्वैतीयक (Secondary) उद्योगों का विकास है; जैसे, कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस तथा अन्य खनिज़ पदार्थों की प्राप्ति और निर्माण उद्योग तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण उत्पादनकारी और यांत्रिक उद्यौग का विकास।

१८ वीं-१९ वीं शताब्दी में वाष्प तथा विद्युत चालित यंत्रों का आविष्कार होने से बड़े पैमाने के उद्योगों का आरम्भ हुआ और इस प्रकार औद्योगीकरण की नींव पड़ी। ऐडम स्मिथ (Adam Smith) और जेम्स वाट (James Watt) ने प्राचीन व्यवस्था में क्रांति उत्पन्न कर दी और उत्पादन के प्राचीन ढंगों को नष्ट कर दिया। उद्योग-धन्धों में कारखानों (Factories) की व्यवस्था चालू हो गई। १७६० के पहले उद्योग छोटे-छोटे स्वतन्त्र उत्पादनकारियों के हाथ में थे लेकिन इन आधुनिक साधनों के आविष्कार हो जाने से इनमें परिवर्तन आ गया। अब बड़े उद्यौगों की स्थापना हुई जिनका संचालन विद्युत् से होने लगा और उत्पादन में भी वृद्धि हुई।

औद्योगीकरण के कारण

(Causes of Industrialisation)

(i) **औद्योगिक क्रान्ति** (Industrial Revolution) :—औद्योगिक क्रांति प्रमुख रूप से इंग्लैंड की देन है। आर्थिक जीवन में परिवर्तन लाने के लिए ही औद्योगिक क्रांति का सूत्रपात हुआ था। इस क्रांति का सूत्रपात यद्यपि इंग्लैंड में हुआ लेकिन इसका विश्व-व्यापी प्रभाव पड़ा। विश्व का ऐसा कोई भी देश शेष न रहा जिस पर इसका अभूतपूर्व प्रभाव न पड़ा हो। भारतवर्ष में तो इसका अत्यधिक और चतुर्दिक प्रभाव पड़ा। फिर औद्योगिक क्षेत्र ही अछूता क्यों रहता ?

१८ वीं शताब्दी के अंतिम चरण तक इंग्लैंड में शिल्पालय और कारखाने आदि स्थापित न थे। शिल्पी अपने घर में ही वस्तुओं का निर्माण करते थे और फिर उसे दुकानदारों के पास भेज देते थे। इस प्रकार की व्यवस्था को गृह-नीति (Domestic Policy) के नाम से पुकारा जाता है। परन्तु इसी समय के पश्चात बहुत सी ऐसी मशीनों का अविष्कार हुआ जिससे शिल्प-कला और व्यावसायिक क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रगति हुई और देश में स्थान-स्थान पर कारखाने खुल गए। शिल्प-कला, व्यवसाय तथा यातायात के साधनों में हुए इस आश्चर्यजनक परिवर्तन को औद्योगिक या व्यावसायिक क्रांति के नाम से संबोधित किया जाता है।

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप अनेक महत्त्वपूर्ण आविष्कार हुए और उत्पादन के नवीन प्रविधियों (Techniques) का उदय हुआ। सर्वप्रथम, वस्त्रोद्योग (Textile Industry) में सुधार हुआ। १७ वीं शताब्दी के प्रारंभ में विलियम ली (William Lee) ने जालीदार कपड़े बुनने की मशीन (Knitting Machine) का आविष्कार किया। रेशम उद्योग (Silk Industry) के उत्पादन में सर्वप्रथम वृद्धि की गई। जॉन लाम्बी (John Lombe) ने इटली के रेशम की मशीनों की गुप्त बातों का पता लगाया और उसके भाई टामस लाम्बी (Thomas Lombe) ने डर्बी (Derby) के निकट एक कारखाने की स्थापना की। बाद में, अनेक रेशम-उद्योगों की स्थापना हुई जिसने इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया।

वस्त्रोद्योग को छोड़ कर अन्य किसी भी उद्योग में पूर्ण क्रांति नहीं हुई। इसका कारण यह था कि कपड़ों की माँग अत्यधिक थी तथा इसके सस्तेपन (Cheapness) के कारण भी इस उद्योग का काफी विस्तार हुआ। वस्त्रोद्योग के अविष्कारों को चार भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है :—

(i) कताई कार्य (Spinning) :— १७३३ में जॉन के (John Kay) ने एक ऐसी मशीन का आविष्कार किया जिसके द्वारा कपड़ा अधिक चौड़ा और सुगमता से बुना जाने लगा जिससे अधिकांश लोगों का ध्यान कताई कार्य तीव्र करने की तरफ गया। तेज चलने वाली ढरकी (Flying Shuttle) का आविष्कार हो जाने से जुलाहों (Weavers) और सूत कातने वालों (Spinners) के मध्य अवरोध उत्पन्न हो गया। इस आविष्कार ने जुलाहों की गति में वृद्धि कर दी जिससे कपड़ों की माँग भी बढ़ गई। १७६४ में लंकाशायर के एक जुलाहे हारग्रीव्ज (James Hargreaves) ने सूत कातने की एक ऐसी मशीन का आविष्कार किया जिसके द्वारा एक ही व्यक्ति एक साथ ६ धागे (और कुछ समय पश्चात १२० धागे) काट सकता था। इस मशीन का नाम

उसने अपनी पत्नी जेनी (Jenny) के नाम पर 'स्पिनिंग जेनी' (Spinning Jenny) रखा। १७६६ में आर्कराइट (Richard Arkwright) ने एक ऐसी मशीन निकाली जिसमें कातने का काम हाथ के स्थान पर जल-शक्ति से होता था। कुछ समय के बाद क्राम्पटन (Samuel Crompton) ने 'म्यूल' (Mule) नामक एक ऐसी मशीन निकाली जिसमें जेनी और जल शक्ति, दोनों की सुविधाएँ सम्मिलित थीं। अब इस मशीन की सहायता से एक साथ कई धागे काटे जा सकते थे और साथ ही साथ यह जल-शक्ति से चलती भी थी। इससे धागा अधिक महीन और अधिक पक्का बनता था।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि उपरोक्त आविष्कृत नवीन मशीनों ने वस्त्रोद्योग में क्रान्ति मचा दी। कपड़ों की पूर्ति अधिक होने लगी और इस प्रकार करघा मशीन (Power Loom) की आवश्यकता महसूस हुई। १७८७ में कार्टराइट (Edmund Cartwright) ने कपड़ा बुनने के लिये करघा मशीन का आविष्कार किया जिससे कताई और भी सुगम हो गई। १८४५ तक तो करघा मशीन का (कपड़ा कातने के क्षेत्र में) काफी बोलबाला हो गया। पहले यह मशीन घोड़ों द्वारा चलती थी लेकिन बाद में वाष्प से चलने लगी। इस तरह औद्योगीकरण में अनेक आविष्कारों ने अभूतपूर्व योगदान किया।

(ii) **वाष्प-चालित इंजिन का आविष्कार** (Invention of Steam Engine) :—औद्योगिक क्रांति को एक नई दिशा और एक नई शक्ति प्रदान करने वाला आविष्कार वाष्प-शक्ति (Steam Energy) की खोज था। इंग्लैंड में टिन के कारखाने में से पानी निकालने के लिए एक यन्त्र की आवश्यकता थी। टामस सैवरी ने (Thomas Savery) जो एक घड़ीसाज और डिवोनशायर (Devonshire) का मिलिट्री इञ्जिनीयर था, १६९८ में पानी निकालने के लिए एक भाप के इंजिन की रजिस्ट्री करायी। उसके इञ्जिन से १५ फुट की ऊँचाई तक का ही पानी बाहर निकाला जा सकता था। इसलिए टिन के कारखानों के लिए यह व्यर्थ था क्योंकि उनकी गहराई हजारों फुट होती है।

१७१२ में टॉमस न्यूकामेन (Thomas Newcomen) ने एक सफल वाष्प-चालित इञ्जिन बनाया। यह लोहे के कारखानों के साथ ही साथ कोयले की खानों से भी पानी निकालने के लिए प्रयुक्त होता था। लेकिन इसके इस इञ्जिन में ईंधन अधिक लगता था क्योंकि इसमें सर्वप्रथम सिलिंडर (Cylinder) को जिसमें पिस्टन (Piston) रहता था, वाष्प उत्पन्न करने के लिए गर्म किया जाता था ताकि गर्म होने पर वह पिस्टन को आगे ढकेले। फिर पिस्टन को नीचे लाने के लिए उसे पानी में ठंडा किया जाता था। सिलिंडर के इस प्रकार गर्म और ठंडा करने से कोयले की अधिक क्षति होती थी। इसलिए इसका प्रयोग सिर्फ कोयले की खानों में ही हो सकता था क्योंकि

वहाँ कोयले की अधिकता होती है। इस प्रकार कारखानों को चलाने के लिए न्यूकामेन के इञ्जिन का प्रयोग नहीं किया जा सका।

जेम्स वाट (James Watt) ने इसके इञ्जिन में सुधार किया। उन्होंने एक अलग भाप को द्रव में बदलने का कमरा (Condensing Chamber) बनाया। यह कमरा ठंडे पानी से घिरा रहता था ताकि सिलिंडर को ठंडा किये बिना ही वाष्प शुष्क हो जाय। १७६५ में वाट ने इस सुधरे हुए इञ्जिन को बनाया जिसकी समस्त मशीनें वाष्प से चलती थीं। इससे समय और श्रम में बचत हुई और अधिक माल भी उत्पन्न होने लगा। सर्वप्रथम इस इञ्जिन का प्रयोग लोहे और कोयले की खान में होता था लेकिन आगे चल कर वाष्प-शक्ति द्वारा मशीनों का भी संचालन किया जाने लगा। इससे औद्योगिक क्षेत्र में काफी प्रगति हुई और उत्पादन क्षमता में भी वृद्धि हुई।

(iii) **लोहे तथा कोयले के उत्पादन में परिवर्तन** (Changes in Iron & Coal Manufacture) :—कोयला और लोहा औद्योगिक क्रांति के दो पैर हैं। बिना इन दोनों के यह क्रांति संभव नहीं है। मशीन को चलाने के लिए कोयला ईंधन देता है तथा उसके निर्माण के लिए लोहा सामग्री देता है। लेकिन जब तक ये दोनों चीजें सस्ती न हों औद्योगिक क्रांति का शुभारम्भ नहीं हो सकता। लोहा और कोयला मिलने से मशीनों का निर्माण लोहे से होने लगा। खान से लोहे को निकाल कर और शोधने के पश्चात इस्पात (Steel) के रूप में बदल दिया गया जिससे बड़ी-बड़ी मशीनों का निर्माण और कम समय तथा श्रम में अधिकाधिक उत्पादन होने लगा।

(iv) **कुछ अन्य शक्तियों का आविष्कार** (Invention of Some Other Sources) :—औद्योगीकरण में भाप लोहा तथा कोयले के अतिरिक्त कुछ अन्य शक्तियों ने भी योगदान किया है। इनमें विद्युत, पेट्रोल आदि शक्तियों का नाम उल्लेखनीय है। इनसे भी नवीन एक शक्ति ने—अणु-शक्ति—औद्योगीकरण में काफी सहायता प्रदान की है। ये सब शक्तियाँ मिल कर औद्योगीकरण को प्रगति के पथ पर तीव्रतर करती जा रही हैं। इन्होंने मानव जीवन को एक नवीन दिशा प्रदान की है।

व्यवसाय के क्षेत्र में हुई इस क्राँति के फलस्वरूप इंगलैंड एक खेतिहर देश से व्यावसायिक देश बन गया। नई-नई मशीनों का निर्माण हो जाने से अब आवश्यक चीजें अधिक मात्रा में तैयार होने लगीं जिससे मूल्य में गिरावट आ गई। साथ ही साथ इङ्गलैंड में चूँकि आवश्यकता से अधिक माल उत्पन्न होने लगा था इसलिए उसे खपाने के लिए नये-नये बाजार खोलने पड़े जिससे व्यापार का विस्तार काफी हुआ। व्यापार बढ़ने के कारण धन में भी वृद्धि हुई।

इङ्गलैण्ड में, औद्योगिक क्रांति का एक प्रभाव यह भी पड़ा कि लोग एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में अधिक संख्या में जाने लगे। पुराने शहरों को छोड़ कर नवीन औद्योगिक शहरों में बसने के कारण नवीन नगरों की भी स्थापना होने लगी। नए-नए नगर बसते गए और प्राचीन नगरों की महत्ता जाती रही।

भारत में भी औद्योगीकरण का प्रभाव पड़ा। प्रारंभ में यहाँ औद्योगीकरण की रफ्तार बहुत मन्द रही लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात उद्योग में वास्तविक रूप से क्रांति हुई, जबकि हमारी राष्ट्रीय सरकार शक्ति संपन्न हुई। अब औद्योगीकरण तीव्र गति से हो रहा है। लोहा, इस्पात, तेल, वाष्प-शक्ति, सीमेंट, रेलवे इञ्जन, तथा अन्य अनेक चीजों का उत्पादन हमारे देश में हो रहा है। हम लोग पारमाणविक युग (Atomic Age) में प्रवेश कर रहे हैं। वह दिन दूर नहीं जब कि वाष्प और विद्युत के स्थान पर पारमाणविक शक्ति का प्रयोग होने लगेगा। कृषि की नवीन पद्धतियों, उत्पादन के नवीन आविष्कार और संवाद-प्रेषण (Communication) के विकसित साधनों ने जन-जीवन को सुख-संपन्न बना दिया है। यातायात के नवीन साधनों ने हमारे समय और धन में बचत कर दी है।

लेकिन औद्योगिक क्रांति के कुछ कुप्रभाव भी हैं। मशीनों के आ जाने से कारीगर बेकार हो गए। उनकी रोजी समाप्त हो गई और देश में बेरोजगारी तथा अराजकता फैलने लगी। पूँजीपति कम मजदूरी में अधिक श्रम लेने लगे जिससे पूँजीवाद और समाजवाद का झगड़ा उठ खड़ा हुआ। साथ ही साथ संसद में सुधार आन्दोलन भी तीव्र हो गया। कृषि में अवनति होने लगी और जब इस क्रांति का प्रभाव दूसरे देशों पर पड़ा तो वहाँ भी प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो गई। परिणामस्वरूप वे एक दूसरे के राजनैतिक शत्रु हो गए। प्रथम विश्व-युद्ध बहुत हद तक इसी का परिणाम था। भारतवर्ष में भी औद्योगिक क्रांति से घरेलू उद्योग-धन्धों को धक्का पहुँचा और साथ ही साथ हमारे देश के व्यवसायों में भी उन्नति न हो सकी क्योंकि हमें ब्रिटिश शासन का सहयोग नहीं मिला। इस प्रकार, औद्योगिक क्रांति का प्रथम प्रभात असंतोष को तीव्र करने में सहायक सिद्ध हुआ।

औद्योगीकरण और नगरीय विकास
(Industrialisation & City Development)

डा. क्लेफम[1] (Dr. Claphom) कहते हैं कि आधुनिक दशाओं के

---

1. J. H. Clapham : Economic Development of France and Germany, (1815–1914) 1921. p. 53.

अन्तर्गत राष्ट्रीय जीवन के औद्योगीकरण का सर्वोत्तम सामान्य परीक्षण इसके नगरों के विकास की दर तथा विशेषताएँ हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि आज के विश्व में अधिकांश नगरों का विकास औद्योगीकरण के फलस्वरूप ही हुआ; नगरीय जनसंख्या में आश्चर्यजनक प्रगति हुई और लोग ग्रामीण क्षेत्रों को छोड़ कर औद्योगिक संस्थानों के इर्द-गिर्द एकत्रित होने लगे। इस प्रकार, छोटी-छोटी औद्योगिक बस्तियों ने नवीन नगरों का रूप धारण कर लिया।

(क) इंग्लैन्ड तथा अन्य देशों में नगरीय विकास (City Development in England and in other Countries) :—

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप इंग्लैंड में औद्योगिक नगरों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इंग्लैड के उत्तर में जहाँ कोयले और लोहे की खाने थीं, सूती वस्त्र तथा लौह उद्योगों के विशाल कारखानों की स्थापना हो गई जिससे इन कारखानों में कार्य करने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता हुई। जीविकोपार्जन हेतु श्रमिक दूर-दूर से इन कारखानों में कार्य करने के लिए आने लगे। चूँकि ये श्रमिक अत्यन्त दरिद्र तथा घर-बार छोड़ कर आते थे इसलिए वे औद्योगिक संस्थानों से दूर किसी बस्ती में नहीं रह सकते थे। इसका कारण यह था कि एक तो वे अधिक किराया नहीं दे सकते थे और दूसरे इससे उनका समय खराब होता था। फलत: वे इन्हीं उद्योग-धन्धों के निकट ही घर बना कर रहने लगे और शनै:-शनै: ये छोटी औद्योगिक बस्तियाँ बड़े-बड़े नगरों का रूप धारण करने लगीं। मैनचेस्टर, लीड्स, शेफील्ड और बर्मिंघम पहले छोटे-छोटे कस्बे थे लेकिन इन शहरों का विकास औद्योगिक कारखानों के खुलने के पश्चात ही हुआ। मैनचेस्टर में जब कपड़े का कारखाना खुला तो वहाँ श्रमिकों की बाढ़ सी आ गई। दिन-प्रतिदिन इनकी संख्या में वृद्धि होती गई और १९ वीं शताब्दी के अंत तक यह ५ लाख आबादी का नगर बन गया। १७७४ में, मैनचेस्टर की जनसंख्या ४ हजार थी जो १८३१ में २ लाख ७१ हजार हो गई।

१९ वीं शताब्दी के प्रारंभ में इंग्लैंड और वेल्स की जनसंख्या २१.३, स्काटलैंड की १७.०, फ्रांस की ९.५, प्रशिया की ७.२५, रूस की ३.७ तथा अमेरिका की ३.८ प्रतिशत थी।[1] लेकिन आज हम देखते हैं कि फ्रान्स में ४९ प्रतिशत, उत्तरी आयरलैंड में ५०.८ प्रतिशत, इग्लैंड और वेल्स में ८० प्रतिशत, अमेरिका में ८० प्रतिशत और कनाडा में ५३.७ प्रतिशत जनता नगरों में निवास करती है।

---

1. A, F. Weber : Growth of Cities in the 19th Century, (1899).

आज विश्व का समस्त देश औद्योगीकरण की प्रक्रिया से गुजर रहा है। प्रत्येक देश में उद्योग-धन्धों की स्थापना होती जा रही है जिससे नागरीकरण की प्रक्रिया भी तीव्रतर होती जा रही है। जितने भी उद्योग-धंधे खुलते जाएँगे उतने ही नगरों का विकास होता जायेगा।

(ख) भारतवर्ष में औद्योगीकरण और नगरीय विकास (Industrialisation and Growth of Cities in India) :—

इंग्लैंड के औद्योगिक क्रान्ति का प्रभाव भारतवर्ष पर भी काफी पड़ा क्योंकि भारतवर्ष सैकड़ों वर्षों तक अंग्रेजों के चंगुल में फँसा था। यहाँ अंग्रेजों का शासन काफी दिनों तक रहा। भारत आज आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिवर्तनों की प्रक्रिया से गुजर रहा है। इन्हीं परिवर्तनों में से औद्योगीकरण भी एक कारक है। भारतवर्ष में औद्योगीकरण का प्रारम्भ २० वीं शताब्दी से हुआ और इसी समय से ही यहाँ के नगरों में भी वृद्धि हुई है।

भारतवर्ष में सन् १८५० में सर्वप्रथम औद्योगीकरण प्रारम्भ हुआ और बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और कानपुर आदि नगरों की जनसंख्या में सर्वप्रथम वृद्धि हुई। कारण यह है कि ये सब महानगरियाँ हैं और इन्हीं स्थानों पर बड़े-बड़े उद्योग-धन्धे स्थापित हैं। १९११ के पूर्व, जमशेदपुर एक छोटा सा गाँव था लेकिन वहाँ टाटा का लोहे का कारखाना (Tata Iron Factory) खुल जाने से जनसंख्या में वृद्धि हो गई। दूर-दूर से श्रमिक आकर वहाँ बस गए और इस प्रकार जमशेदपुर आज लाखों की जनसंख्या वाला एक नगर है। १९५१ की जनगणना के अनुसार वहाँ की जनसंख्या लगभग २,१८,१३२ थी।

औद्योगीकरण की एक प्रबल लहर द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात दौड़ी जबकि नियोजित औद्योगिक विकास का शुभारम्भ हुआ। सौराष्ट्र में सीका (Seeka), बिहार में डालमियानगर, खोपोली (Khopoli) और बम्बई में पूना के निकट वालचन्दनगर (Walchandnagar), ये सब १९३९ में गाँव थे लेकिन आज यहाँ बड़े-बड़े औद्योगिक संस्थान हैं। इसी समय बंगलोर, कोयम्बटूर, और लुधियाना जैसे गैर-औद्योगिक नगरों में भी अनगिनत औद्योगिक सँस्थानों की स्थापना हुई। औद्योगीकरण के पूर्व इन सब नगरों की जनसंख्या बहुत कम थी। इसी तरह, भिलाई, दुर्गापुर और राउरकेला जैसे ग्रामों में भी द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में बहुत बड़े-बड़े औद्योगिक संस्थानों की स्थापना हुई और आज इन ग्रामों में जनसंख्या का इतना आधिक्य हो गया है कि इसने एक बड़े नगर का रूप धारण कर लिया है। इन स्थानों पर जनसंख्या वृद्धि दिन-प्रतिदिन होती जा रही है।

अहमदाबाद नगर में भी जनसंख्या वृद्धि औद्योगीकरण के ही फलस्वरूप

हुई। अहमदाबाद एक प्राचीन नगर है जो दस्तकारी (Handicrafts) के लिए प्रसिद्ध है। जब से वहाँ कारखाना उद्योगों की स्थापना हुई है, वहाँ आश्चर्यजनक प्रगति हुई। पिछले ४० वर्षों में वहाँ की जनसंख्या में लाखों की वृद्धि हुई है। वहाँ का मुख्य उद्योग सूती कपड़ों की बुनाई और कताई है। वहाँ अब चर्मोद्योग की भी स्थापना हो रही है।

कानपुर भी चर्मोद्योग के कारण आज उत्तरी भारत का सबसे बड़ा औद्योगिक नगर माना जाता है। इसके अतिरिक्त, वहाँ ऊनी और सूती कपड़ों का भी उद्योग है। वहाँ की जनसंख्या में भी निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। मदुरा (Madura) का तो दो इतिहास है। २० वीं शताब्दी के प्रारम्भ में वह तेल, अनाज और सूती कपड़ों का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था लेकिन इस शताब्दी के प्रथम दशक में हथकरघा और रंगाई उद्योग के कारण वहाँ की जनसंख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुई।

गोरखपुर नगर का विकास भी दर्शनीय है। घाघरा नदी के उत्तर के पूर्वी जिलों—नेपाल एवं पश्चिमी बिहार के क्षेत्रों के मध्य गोरखपुर नगर की स्थिति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। प्रशासकीय सुविधा और अन्य उद्योगों के कारण इस नगर की जनसंख्या में अभूतपूर्व हुई है। वैसे तो इस नगर का पूर्वोत्तर रेलवे (N. E. Rly.) के प्रशासकीय केन्द्र एवं वायु सेना की प्रमुख इकाई हवाई अड्डे के कारण, राष्ट्रीय और सामरिक महत्व है ही लेकिन अभी भविष्य में उर्वरक कारखाना इसके औद्योगीकरण में महत्वपूर्ण योग देगा। देश के अन्य क्षेत्रों की तुलना में तो कम लेकिन पूर्वी जिलों की तुलना में गोरखपुर नगर का औद्योगीकरण विगत कुछ दशकों में अधिक मात्रा में हुआ है। यह नगर मुख्य रूप से गृह और लघु-उद्योगों के जैसे, हथकरघे के वस्त्र, गांधी आश्रम, फर्नीचिरों के निर्माण और इन्जिनियरिंग, लिए महत्वपूर्ण है। सन् १९५१ और १९६१ की जनसंख्या की तुलना करने से ज्ञात होता है कि विगत दस वर्षों में इस नगर में कार्यकारी जनसंख्या (Working Population) में ४.९९ प्रतिशत वृद्धि हुई है। सन् १९५१ में यह संख्या २५.२ थी जबकि सन् १९६१ में बढ़ कर यही ३०.१ प्रतिशत हो गई। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार औद्योगिक क्षेत्र में काम करने वाले कुल १०हजार४६९ व्यक्ति हैं जिनमें से ७८४८ पूर्वोत्तर रेलवे के यांत्रिक कारखाने (Mechanical Workshops) में और ६७० सिगनल कारखानों में काम करते हैं। औद्योगिक एवं कार्यकारी जनसंख्या की यह वृद्धि नागरीकरण एवं संपूर्ण जनसंख्या की वृद्धि से सम्बन्धित है। जनसंख्या की वृद्धि और नागरीकरण एवं औद्योगिक विकास की जो गति है उसके आधार पर गोरखपुर नगर के नियोजन के प्रारूप में यह आशा

व्यक्त की गई है कि सन् १९७१ तक इस नगर की जनसंख्या २ लाख ६० हजार और सन् १९८१ तक ३ लाख ५० हजार हो जायगी।[1] इन सब नगरों के अतिरिक्त वाराणसी, देवरिया, मिर्जापुर आदि नगरों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि विगत कुछ वर्षों से नगरों की जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। सन् १९२१ से १९५१ के मध्य नगरीय जनसंख्या में जो वृद्धि हुई है उसे निम्नलिखित तालिका में देखा जा सकता है :—

वर्ष	नगरों की जनसंख्या	वृद्धि की दर
१९२१	२,८२,००,०००	—
१९३१	३,३४,००,०००	+ १८.३
१९४१	४,३८,००,०००	+ ३१.१
१९५१	६,१९,००,०००	+ ४१.१

कुछ बड़े औद्योगिक नगरों में जनसंख्या-वृद्धि की दर निम्न तालिका में प्रस्तुत की गई है :—

नगरों के नाम	१९०१–१९३०	१९५१
कलकत्ता	६.० लाख	४५.८ लाख
बम्बई	४.६ ,,	२८.४ ,,
मद्रास	१.४ ,,	१४.२ ,,
दिल्ली	२.३ ,,	१३.८ ,,
हैदराबाद	०.२ ,,	१०.० ,,
अहमदाबाद	१.३ ,,	१०.९ ,,
बंगलोर	१.५ ,,	७.९ ,,
कानपुर	०.४ ,,	७.१ ,,
पूना	०.९ ,,	५.९ ,,
लखनऊ	०.२ ,,	५.० ,,

उपरोक्त तालिका देखने से ज्ञात होता है कि नगरीय जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही है और होती रहेगी।

---

१. ११ सितम्बर १९६४ के दैनिक 'आज' में प्रकाशित लेख—"गोरखपुर का औद्योगिक विकास, नागरीकरण एवं नियोजन'।

लेकिन भारतवर्ष में जब से औद्योगीकरण प्रारंभ हुआ तबसे लेकर आज तक, नगरीय विकास पर यदि दृष्टिपात किया जाय तो यही परिलक्षित होगा कि यहाँ नागरीकरण और नगरीय विकास की गति अत्यन्त मन्द रही है। इसका प्रधान कारण मन्द औद्योगीकरण है। लेकिन इस कमी के पश्चात भी यहाँ के नगरों की जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है और भारत के भविष्यगत आयोजनाओं के प्रारूप को देखने पर यही ज्ञात होता है कि आगे चल कर यहाँ भी औद्योगीकरण का प्रसार होगा। फलस्वरूप नगरीय विकास भी तीव्र गति से होगा।

अतः हम देखते हैं कि नगरों के विकास पर औद्योगीकरण का काफी प्रभाव पड़ा है। एक तरफ तो इसने पहले से ही वर्तमान नगरों की संख्या में वृद्धि की है और दूसरी तरफ नवीन नगरों की जैसे भिलाई, राउरकेला, टाटा, दुर्गापुर आदि, स्थापना की है।

अध्याय ६

औद्योगीकरण और नागरीकरण का प्रभाव

(Effects of Industrialisation & Urbanisation)

औद्योगीकरण और नागरीकरण की प्रक्रिया ने संपूर्ण विश्व को प्रभावित किया है। भारत में तो इसका विशेष प्रभाव पड़ा है। इसने संपूर्ण सामाजिक संरचना में परिवर्तन ला दिया है जिससे हमारे सामाजिक, आर्थिक, मानसिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं नैतिक जीवन में परिवर्तन आने लगा है। औद्योगीकरण के प्रभावस्वरूप आज नगर का व्यक्ति अपने'को एकदम निराश्रित और असुरक्षित सा अनुभव करने लगा है। उसका अपना कोई व्यक्तिगत अस्तित्व एवं व्यक्तित्व ही नहीं रह गया है। मानसिक रूप से वह भग्नाशाओं (Frustrations) का शिकार हो गया है। उसमें उद्वेग, मानसिक अशांति और अन्तर्द्वन्द की भावना घर कर गयी है। समस्त पारिवारिक बन्धन टूटने जा रहे हैं, धार्मिक एवं नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आते जा रहे हैं। मनुष्य का जीवन यांत्रिक हो गया हैं। मशीनीकरण की प्रक्रिया में उसने अपने जीवन को यंत्रबद्ध कर लिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्ति का अपने जीवन पर कोई अधिकार ही नहीं रह गया है। उसका जो कुछ भी अस्तित्व है, वह इन मशीनों के लिए ही है। औद्योगीकरण और नागरीकरण की विश्वव्यापी प्रक्रिया के द्वारा आज मनुष्य ने देश-काल और प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है। इस औद्योगिक प्रगति का सामाजिक जीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है।

औद्योगीकरण और नागरीकरण का सामाजिक प्रभाव

(Social Effects of Industrialisation & Urbanisation)

(क) पारिवारिक मूल्यों एवं संरचना में परिवर्तन (Change in Family Values & Structure) :—प्रत्येक गैर-औद्योगिक और गैर नागरिक समाज में परिवार की महत्वपूर्ण स्थिति रही है तथा वह सामाजिक

परम्पराओं, मूल्यों एवं अधिकारों से आबद्ध रहा है। लेकिन औद्योगिक नागरीवाद के विकास ने प्रत्येक देश की पारिवारिक-सामाजिक परम्पराओं, मूल्यों एवं उनके स्वरूपों पर कुठाराघात किया है। परिवार की आज वह स्थिति नहीं रह गई है जो पूर्व-औद्योगिक युग में थी। आॅगबर्न (Ogburn) लिखते हैं कि—"अन्य संस्थाओं की भाँति-सामाजिक संस्था के रूप में परिवार परिवर्तित हो रहा हैं।"[1] परिवार में परिवर्तन के कारण आज मनुष्य को अपने कार्य, औजार, आय, रहन-सहन के स्तर, यातायात और आवासीय प्रकार तथा अवकाश के समय अन्य क्रिया-कलापों में परिवर्तन कर देना पड़ा है।

नवीन यांत्रिक आविष्कारों ने उत्पादन केन्द्र को घर से हटा दिया है जिसका प्रभाव परिवार के स्वरूप पर पड़ा है। इसके पूर्व, परिवार आर्थिक क्रियाओं का केन्द्र था। परिवार के सब सदस्य मिल कर कृषि-कार्य या बुनाई अथवा अन्य व्यवसाय करते थे जिससे परिवार में सामूहिक भावना बनी रहती थी। लेकिन आज नये-नये यन्त्रों के आविष्कार के कारण कृषि, गृह और कुटीर उद्योग-धन्धों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। शिल्प तथा नाना प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन की बड़ी-बड़ी मशीनों का निर्माण हो जाने से अब उत्पादन के समस्त कार्य कल-कारखानों में होते हैं। इसलिए कृषि के अतिरिक्त अन्य कमाई के लिए मनुष्य को इन कारखानों का आश्रय लेना पड़ता है जिससे उसका अधिकांश समय घर के बाहर व्यतीत होता है। फलतः परिवार के स्वरूप में परिवर्तन आ गया है।

पहले स्त्रियाँ पुरुषों के कार्यों में हाथ बँटाती थीं लेकिन अब वे ऐसा नहीं कर पाती हैं क्योंकि अब वे लोग एक साथ नहीं रहते हैं। इस प्रकार नागरीकरण और औद्योगीकरण ने स्त्रियों की प्रस्थिति (Status) और उनकी कार्य-कुशलता में भी कमी कर दिया हैं। एक शताब्दी पूर्व तक स्त्रियाँ घर का संचालन और देख-रेख करती थीं लेकिन आज औद्योगीकरण ने उनकी इस स्थिति पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी है। औद्योगीकरण के फलस्वरूप नगरीय स्त्रियों की कार्य-क्षमता में कमी आ गई है। आज अधिकांश कार्य मशीनों द्वारा हो रहे हैं इसलिए उन्हें कपड़ा धोने, कताई-बुनाई करने, आटा पीसने, पनघट से जाकर पानी भरने आदि कार्यों से छुटकारा मिल गया है।

---

1. William F. Ogburn: Why the Family is Changing. See Nels Anderson: Urban Community, Routledge & Kegan Paul, London,

पश्चिमी देशों में तो अब ऐसी मशीनों का भी निर्माण हो चुका है जो सूर्य की रोशनी में ही भोजन तक बनाती हैं। इससे तो उन स्त्रियों को और भी स्वतंत्रता मिल गई है। लेकिन एक बात ध्यान देने योग्य है और वह यह कि औद्योगीकरण द्वारा प्रदत्त इन लाभों से समय में जो बचत हुई है, उसका वे समुचित लाभ नहीं उठातीं। इस अवकाश के क्षणों में वे कोई रचनात्मक कार्य करने की तरफ प्रवृत्त नहीं हुई हैं। यद्यपि हमें कल-कारखानों में स्त्रियाँ भी कार्य करती हुई मिलती हैं लेकिन उनमें वे ही स्त्रियाँ होती हैं जिनकी पारिवारिक अवस्था दयनीय और जो निम्न समूह की होती हैं। अधिकांश उच्च वर्गीय स्त्रियाँ तो इन अवकाश के क्षणों में ऐशो-आराम ही करती हैं। आज स्त्रियाँ, पुरुषों के ही समान, वर का चुनाव करने के लिए स्वतंत्र हैं। इसी तरह वे नौकरी तथा शिक्षा के क्षेत्र में भी लड़कों के समान स्वच्छन्द हैं। आज वे कल-कारखानों में कार्य करने जाने लगी हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि उनकी प्रस्थितियों में परिवर्तन आ गया है।

आधुनिक परिवार में पारिवारिक नियंत्रण कम होने और मूल्यों में परिवर्तन होने से पति-पत्नी, माता-पिता तथा बच्चों में संघर्ष उत्पन्न हो गया है जिससे पारिवारिक अशांति उत्पन्न हो गई है। आपस का विश्वास उठ गया है और मनोवैज्ञानिक सुरक्षा की भावना नहीं रह गई है।

मूल्यों में संघर्ष होने का कारण यह है कि प्राचीन आदर्श, मूल्य और व्यवहार के प्रतिमान आज की नई रोशनी को मान्य नहीं हैं जिससे प्राचीन और नवीन मूल्यों में संघर्ष होने लगा है।

(ख) संयुक्त परिवार प्रथा का विघटन (Disorganisation of Joint Family System) :—भारतवर्ष में संयुक्त परिवार व्यवस्था एक आदर्श परिवार प्रथा रही है। इसकी सत्यता का प्रमाण संस्कृत साहित्य में भी मिलता है। संयुक्त परिवार में साधारणत: कई वंश के लोग एक साथ, एक ही मकान में रहते हैं। उनका भोजन एक ही चूल्हे पर बनता है, और संपत्ति का उपभोग भी समान रूप से होता है। टर्नर[1] (Turner) ने लिखा है कि संयुक्त परिवार प्रथा में समस्त अधिसत्ता और सम्पत्ति, परिवार के वयोवृद्ध व्यक्ति के हाथ में होती थी जिसका प्रभाव परिवार के समस्त सदस्यों पर होता था। उसकी (मुखिया) सत्ता निरंकुश होती थी। रोमन पादरी वाल-

---

1. Ralph Turner : "The Great Cultural Traditions, The Foundation of Civilization. New York, Mac Graw Hill, (1941)Vol. 1, p. 384.

बैन्क और टेलर[2] (Wallbank and Taylor) का भी कथन है कि परिवार के मुखिया की आज्ञाओं का उल्लंघन नहीं होता था। समस्त शिक्षाएँ परिवार में ही केन्द्रित होती थीं। पिता ही समस्त प्रकार की भावनाओं और शिक्षा प्रदान करता था। अधिसत्ता और आकार के दृष्टिकोण से रोमन परिवार एक छोटी-मोटी सरकार थी जिसमें कई तरह के लोग रहते थे। लेकिन इन सबके ऊपर पिता का ही आधिपत्य होता था। वही इस सरकार का संचालन करता था। इस प्रकार यह एक छोटा समुदाय प्रतीत होता था। यही प्रतिमान आज भी अनेक संस्कृतियों में मिलते हैं। यूरोप में भी जागीरदारी प्रथा के समय इसी प्रकार के प्रतिमान मिलते थे, विशेषतया उच्चवर्गीय परिवारों में।

इस प्रकार, हम देखते है कि संयुक्त परिवार प्रथा में पारस्परिक सहयोग की भावना अत्यन्त प्रबल रहती है। एक बेरोजगार व्यक्ति भी अपने को इस परिवार में असुरक्षित और हीनता-ग्रन्थि (Inferiority Complex) का शिकार नहीं समझता था। परिवार के अन्य सदस्य भी उसकी अवहेलना अथवा उपेक्षा नहीं करते थे। श्रम का बराबर विभाजन होता था। वृद्धों, बीमारों और असहायों को इसमें सहारा मिलता था। लेकिन एक बात अवश्य होती थी, और वह यह कि नबयुवक और नवयुवतियाँ अपनी इच्छानुसार कोई कार्य नहीं कर सकती थीं। उन्हें अपनी आकांक्षाओं का दमन करना पड़ता था। संयुक्त परिवार प्रणाली समाजवादी प्रणाली पर आधृत थी। उसमें उदारता, सहिष्णुता और पारस्परिक सहयोग एवं उपभोगी की भावना निहित होती थी।

लेकिन हम देखते हैं कि औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने संयुक्त परिवार प्रणाली को विच्छिन्न और विघटित कर दिया है। भारत में संयुक्त परिवार प्रथा रहने का मुख्य कारण इसका ग्राम-प्रधान और कृषि-प्रधान देश होना

---

2. "There could be no disobedience to his will······what education there was, was centered in the home. The father imparted who amounted to the three R's and, more important, instilled in the children those virtues every Roman was supposed to possess, manliness and self-control······The discipline that molded the young Roman was perhaps too severe by our standards but it produced citizens who were loyal, serious, dutiful and courageous." T.F. Wallbank & A.M. Taylor. Quoted by Nels Anderson : Urban Community, p. 264.

तथा उद्योगों का पारिवारिक केन्द्रीकरण था। लेकिन आज बड़ी-बड़ी मशीनों एवं यंत्रों का आविष्कार हो जाने से समस्त उत्पादन इन्हीं से होने लगे जिससे घरेलू उद्योगों का ह्रास होने लगा। नगरों में बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना होने लगी। फलस्वरूप, जीविकोपार्जन तथा नगरीय प्रलोभन हेतु ग्रामीण नगरों की तरफ चल दिये और वहीं नौकरी करने लगे और इस प्रकार पारिवारिक विघटन प्रारंभ हो गया।

नगरों में जनसंख्याधिक्य तथा भूमि के स्थानाभाव के कारण बड़े-बड़े परिवार एक साथ मिल कर नहीं रह सकते। इसलिए एकाकी परिवार का आविर्भाव हुआ। इसके कारण भी संयुक्त परिवार में विच्छिन्नता आई। चूँकि उद्योग-धन्धों की स्थापना दूर-दूर बड़े शहरों में हुई इसलिए पूरे परिवार को एक साथ ले जाना संभव नहीं था। अतः विवश होकर लोग वैयक्तिक परिवार में रहने लगे।

संयुक्त परिवार पर औद्योगीकरण का सबसे बड़ा प्रभाव यह है (लेखक की दृष्टि में) कि लोगों ने पारम्परिक पेशे का परित्याग कर दिया है। भारतवर्ष का मुख्य व्यवसाय कृषि रहा है। कृषि-कार्य के कारण ही भारत में संयुक्त परिवार का वैशिष्ट्य रहा। लेकिन आज लोग (यहाँ तक कि ग्रामीण भी) कृषि-कार्य करने में अपनी बेइज्जती समझते हैं। प्रत्येक व्यक्ति, (चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित, चाहे ग्रामीण हो अथवा नागरिक) यही चाहता है कि वह किसी कल-कारखाने या अन्य सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाओं में ही कार्य करे। इसका भी कारण है। लोगों को यह विभ्रम है कि इन संस्थाओं एवं संस्थानों में धन की प्राप्ति अधिक होती है। इसीलिए वे नगरों एवं औद्योगिक संस्थानों की तरफ अग्रसर हुए हैं जिससे संयुक्त परिवार में विघटन प्रारंभ हो गया है।

(ग) जाति-प्रथा का ढीला होना (The Cast Differences Loosened) :—औद्योगीकरण और नागरीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप आज भारतवर्ष में राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन भी तीव्र गति से हो रहे हैं। ऐसी दशा में जाति प्रणाली भी अछूती नहीं रह सकती। भारतीय सामाजिक संगठन में जाति-प्रणाली की अपनी एक विशेष महत्ता रही है। यहाँ जाति प्रथा बहुत ही कठोर और जन्म के आधार पर पेशे का विभाजन था। जिस ज़ाति का जो परम्परागत व्यवसाय होता था, व्यक्ति उसी को करता था। खान-पान पर भी कठोर प्रतिबन्ध था। एक जाति का व्यक्ति दूसरी जाति के यहाँ खान-पान नहीं कर सकता था। इसी तरह. विवाह पर भी नियंत्रण था। अपनी ही जाति में विवाह करने की

छूट थी। अपनी ही जाति में उठना-बैठना भी था। शूद्रों की तो अत्यन्त ही गिरी हुई और दयनीय स्थिति थी। उच्च जाति के समक्ष उनकी छाया तक अपशकुन समझी जाती थी। समाज में उनका कुछ भी स्थान न था। उन्हें घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। उनका जीवन बहुत अमानवीय दशा में व्यतीत होता था। इन अस्पृश्यों की दशा का वर्णन करते हुए महात्मा गांधी ने ठीक ही लिखा है—"सामान्य दृष्टि से वे कोढ़ी हैं। आर्थिक दृष्टि से वे गुलामों से भी बदतर हैं...... ।"

औद्योगीकरण और नागरीकरण के प्रभाव ने जाति-प्रथा पर भी प्रबल कुठाराघात किया है। नगरों में बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना हो जाने से लोग जीविकोपार्जन हेतु यहाँ काम करने लगे। छोटे-बड़े, ऊँच-नीच सभी इन कारखानों में कार्य करते हैं। छुआछूत और जाति-विभेद का कोई प्रश्न ही नहीं रह गया है। नगरीय जन-कोलाहल के मध्य किसी के पास इतना समय नहीं है कि वह एक दूसरे की जाति आदि के सम्बन्ध में पूछे। सबको अपने-अपने कार्य से मतलब है। बसों, रेलों, रिक्शों तथा अन्य प्रकार की सवारियों में सभी लोग समान रूप से बैठने के अधिकारी हैं। होटलों, सिनेमा, थियेटर आदि में भी जाति-भेद रखना सम्भव नहीं है। नगरों में एक ब्राह्मण का कंधा एक शूद्र से टकराता रहता है लेकिन इस पर उसे कुछ भी आपत्ति नहीं होती और न ही वह त्योरियाँ चढ़ाता है।

आज ऐसी बात नहीं है कि व्यवसाय का चुनाव जन्मजात पेशे के ही आधार पर हो। आज के प्रगतिशील औद्योगिक समाज में एक उच्च जाति का व्यक्ति भी चमार के पेशे को अपना लेता है। इसका कारण आर्थिक विपन्नता है। इसी तरह, एक निम्न जाति का व्यक्ति भी धनोपार्जन करके उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति हो सकता है। आज भारतीय समाजिक संरचना में एक ब्राह्मण का स्तर केवल ब्राह्मण होने के नाते सर्वश्रेष्ठ नहीं रह गया है।

आज जाति-प्रथा, वर्ग-प्रथा के रूप में परिवर्तित होती जा रही है। घुरिये[1] (Ghurye) महोदय भी यही आशा करते हैं कि यदि औद्योगीकरण चालू रहा तो निःसन्देह भारत में सामाजिक वर्ग व्यवस्था, जाति-व्यवस्था की जगह ले लेगी। उनका कथन है कि अनेक देशों में औद्योगीकरण का इतिहास देखने पर ज्ञात होता है कि सामाजिक संरचना में जो मूलभूत परिवर्तन हुआ. वह यह कि सामन्त-युग (Feudal Age) में जो कठोर संरचनात्मक संस्तरण (Strata) था, उसने मुक्त वर्ग समाज (Open Class Society) को प्रश्रय

1. G. S. Ghurye : Caste and Class in India. Bombay Popular Book Depot (1952.) p 150.

दिया। आज परम्परावाद (Traditionalism) का लोप हो गया है।

देसाई[1] (Desai) ने भी भारतीय राष्ट्रीयतावाद की सामाजिक पृष्ठ-भूमि का विश्लेषण करते हुए उन सामान्य स्वार्थों और रहन-सहन के ढंगों की तरफ संकेत किया है जिनकी उत्पत्ति औद्योगिक क्रांति द्वारा नवीन व्यावसायिक वर्गों की उत्पत्ति के बाद हुई।

आज कृषि मुख्य व्यवसाय न होकर उद्योग मुख्य व्यवसाय हो गया है। अतः जन्मजात व्यवसाय की भावना का ह्रास हो गया है और विशिष्ट व्यवसाय के चयन की प्रवृत्ति में परिवर्तन आ गया है।

(घ) सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन (Change in Social Values): — आर्थिक सीमाओं के विस्तार, राज्य-क्षेत्र विस्तार, नवीन वर्ग-निर्माण, लोक-तन्त्रीय विकास, सज्जा का प्रचार, नागरीकरण तथा नवीन विचारधाराओं के विकास के कारण आज मनुष्यों के विचारों, विश्वासों एवं प्रवृत्तियों पर विशेष प्रभाव पड़ा है। इससे उनके जीवन के मूल्यों में महान् परिवर्तन आ गया है, प्राचीन मूल्यों का लोप हो गया है।

आज धन की महत्ता अत्यधिक बढ़ गई है। धन ही वह कारक है जिसके आधार पर आज सामाजिक प्रतिष्ठा का निर्धारण होता है। प्राचीन काल में ब्राह्मण और क्षत्रिय उच्च-प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति होते थे लेकिन आज धनाधिक्य के कारण एक वणिक या वैश्य इस प्रतिष्ठा के अधिकारी हैं। नैतिक मूल्यों का दबाव अब उतना नहीं रह गया है। धर्म भी सामूहिक न होकर व्यक्तिगत मामला हो गया है। हम धर्म को मानें या न मानें, यह हमारी व्यक्तिगत अभिवृत्ति पर निर्भर है। कोई विशेष धर्म मानने के लिए ही हमें बाध्य नहीं किया जा सकता। आज का नगरीय जीवन बहिर्मुखी (Extrovert) होता जा रहा है। चिन्तन तथा विचार के स्थान पर आजकल वाह्याडम्बर को अधिक महत्ता प्रदान की जा रही है। मानवीय सम्बन्ध अवैयक्तिक (Impersonal) और द्वैतीयक (Secondary) होते जा रहे हैं। "सब ओर मानव-यन्त्र दिखाई पड़ते हैं जिनमें गति है, परन्तु मौलिकता नहीं, स्पन्दन है परन्तु भावना नहीं, हृदय है परन्तु अनुभूतियाँ नहीं।"[2]

आज व्यक्ति, यांत्रिक प्रगति के पीछे मृगतृष्णा की भाँति दौड़ रहा है। वह

---

1. A. R. Desai : The Social Background of Indian Nationalism. p. 157.

2. Dr. Vatsyayan : Social Problems & Applied Sociology (1961), p. 31.

कहाँ जा रहा है, क्यों जा रहा है, इसका कुछ भी पता नहीं है। वह स्वयं ही यंत्रवत होता जा रहा है और इसी यांत्रिकता के परिवेश में अपने मूल्यों और परम्पराओं को दफनाता जा रहा है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रौद्योगिकी ने हमारे सामाजिक मूल्यों को काफी प्रभावित किया हैं। ग्रीन (T. H. Green) ने ठीक ही लिखा है कि—"प्रौद्योगिक परिवर्तन सामाजिक मूल्यों और नैतिक नियमों को प्रभावित करते हैं।"

वैज्ञानिक आविष्कारों तथा प्रगतिशील विचारधाराओं के कारण नगर में धर्म का अब वह प्राचीन स्थान नहीं रह गया है। अधिकांश लोगों का धर्म-कर्म पर से विश्वास उठता जा रहा है। आज प्राचीन रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों की अवहेलना की जा रही है। आज के वैज्ञानिक और प्रगतिशील नगरीय जीवन का आधार तर्क है। तर्क की कसौटी पर जो चीज खरी उतरती है उसे ही स्वीकार किया जाता है। जहाँ तक धर्म और तर्क का सम्बन्ध है, दोनों दो भिन्न चीजें हैं। धर्म तो श्रद्धा और विश्वास की चीज है।

शिक्षा ने भी वैवाहिक, पारिवारिक एवं अन्य प्रकार के आदर्शों एवं रीति-रिवाजों को प्रभावित किया है। उच्च-शिक्षा प्राप्त नवयुवकों और नवयुवतियों की विचारधाराओं में क्रांतिकारी परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं। श्री के० एम० कपाडिया ने भी लिखा है—"स्त्रियों की उच्च शिक्षा ने हिन्दू विवाह और परिवार के आदर्शों तथा रीति-रिवाजों को गम्भीर रूप से प्रभावित किया है। इसी कारण वे आज समस्त नैतिक, परिवारिक बन्धनों को तोड़ती जा रही हैं।"

(ङ) गन्दी बस्तियों का विकास (Development of Slums) :— औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप नगरों में (विशेषतः औद्योगिक और व्यापारिक केन्द्रों) जनसंख्या में तीव्र वृद्धि होने लगी जिससे आवास-समस्या उत्पन्न हो गई। जिस अनुपात में जनसंख्या में वृद्धि हुई उस अनुपात में मकानों का निर्माण नहीं हुआ। फलतः एक ही मकान में कई-कई लोग भरने लगे जिसके फलस्वरूप इन औद्योगिक नगरों में गन्दी बस्तियों का प्रादुर्भाव हुआ। इन बस्तियों में धूप, प्रकाश और शुद्ध हवा का यथेष्ट प्रबन्ध नहीं होता। यहाँ गन्दगी, अन्धकार और सीड़न का साम्राज्य होता है। यही कारण है कि यहाँ के निवासी विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों से ग्रस्त रहते हैं और अमानवीय जीवन व्यतीत करते हैं।

औद्योगिक श्रमिकों के आवास की सामान्य दशाओं का वर्णन करते हुए रॉयल श्रम कमीशन ने लिखा है—नगरों तथा औद्योगिक केन्द्रों में एक दूसरे से सटी हुई जगहें, भूमि का उच्च मूल्य तथा श्रमिकों की अपने उद्योगों के

निकट रहने की आवश्यकता, अधिक भीड़ और घनी आबादी में वृद्धि करती है। व्यस्त केन्द्रों में मकान, प्राप्त भूमि का पूर्ण उपयोग करने के हेतु एक दूसरे से सटा कर बनाए जाते हैं। यहाँ तक कि ओरी से ओरी छूती है और दीवार से दीवार मिली होती है। वास्तव में भूमि इतनी मूल्यवान है कि मकानों में पहुँचने के लिए सड़कों के स्थान पर छोटी एवं सँकरी गलियाँ होती हैं। सफाई की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता और यह इस बात से प्रकट है कि सड़ते हुए कूड़ों के ढेर पड़े रहते हैं और गन्दे पानी के गड्ढे भरे रहते हैं। शौचालयों के अभाव में हवा और धरती—दोनों का वातावरण दूषित हो जाता है। अनेक मकान जिनमें चौखट, खिड़की और रोशनदानों का अभाव होता है, प्रायः एक कमरे वाले होते हैं जिसमें हवा के आने के लिए सिर्फ एक द्वार होता है और वह भी इतना नीचा कि बिना झुके उसमें प्रवेश पाना असम्भव है। गोपनीयता और एकान्तता पाने के लिए पुराने कनस्टरों के टीन एवं पुरानी बोरियों को परदे के रूप में काम में लाया जाता है जिससे प्रकाश और निर्मल वायु का आना और भी बन्द हो जाता है। इस प्रकार के घरौंदों में मनुष्य जन्म लेता है, सोता है, खाता है, रहता है और मृत्यु को प्राप्त होता है।"[१]

ऐसी ही अवस्था का वर्णन १९२८ में ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस के एक प्रतिनिधिमण्डल द्वारा किया गया था—"हम जहाँ भी ठहरे हमने श्रमिकों के क्वार्टरों को देखा और यदि हम उन्हें न देखते तो कभी विश्वास न करते कि ऐसे बुरे स्थान भी हैं···पंक्तियों में मकानों का समूह होता है जिनका मालिक किरायेदारों से ४॥ शि० प्रतिमास किराया लेता है। प्रत्येक आवास में एक अँधेरी कोठरी जो रहने, खाना पकाने, सोने आदि, सभी के काम आती है, ९'×९' माप की होती है। इसमें मिट्टी की दीवारें और ढीली खपरैल की छतें होती हैं। रहने के कमरों में टूटी छत या खुले हुए प्रवेश द्वार के अतिरिक्त और कोई रोशनदान नहीं होता। घर के बाहर लम्बी सँकरी एक नाली होती है जहाँ सब प्रकार का कूड़ा-करकट सञ्चित होता है और जहाँ कीड़े और मक्खियों की अधिकता होती है······यह तो स्पष्ट ही है कि यह नालियाँ बच्चों के टट्टी करने के काम में लाई जाती हैं।"[२]

आवासों की समस्या आज तक बनी है। यह अवस्था समस्त औद्योगिक नगरों की है। बम्बई में 'चाल', मद्रास में 'चेटी', कानपुर में

1. Report of the Royal Commission on Labour; pp. 271–72.

2. Quoted in Palme Dutt's : India Today. p. 361.

'अहाते', दिल्ली में 'बस्ती', गन्दी बस्तियों के अवांछित रूप हैं। कानपुर के 'अहातों' का वर्णन करते हुए रॉयल श्रम कमीशन ने वर्णन किया है—"अधिकांश मकान ८'×१९' नाप के एक कमरे वाले हैं जिनमें से कुछ में एक बरामदा है तथा कुछ में उसका भी अभाव है। ऐसे आवास प्रायः दो, तीन या चार परिवारों द्वारा लिए जाते हैं। इन मकानों के फर्श साधारणतया पृथ्वी की सतह से नीचे होते हैं तथा नालियों, रोशनदानों और सफ़ाई का उनमें पूर्ण अभाव होता है।"

कानपुर श्रम-जाँच-समिति ने एक आवास केन्द्र की शोचनीय दशा के विषय में लिखा है—"एक अजनबी के लिए रात्रि में इन स्थानों को देखने जाना एक संकटमय कार्य है। टखने में मोच तो अवश्य ही आ जायेगी तथा किसी अन्धे कुएँ या विस्तृत आकार के खड्ड में गिर कर गर्दन तुड़वा लेना भी कोई असम्भव बात नहीं होगी।" समिति के एक सदस्य ने आगे कहा कि—"इन गन्दी बस्तियों में रहने वालों की वायुयानों द्वारा बमवर्षा एवं गोली से तो रक्षा हो सकती है परन्तु ये लोग मनुष्य के शत्रु मच्छर-कीड़े, खटमल, आदि के शिकार हो जाते हैं।"

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जब फरवरी १९५२ में कानपुर का निरीक्षण किया था तो उन्हें इन गन्दी बस्तियों को देख कर बड़ा धक्का लगा। उन्होंने चिड़चिड़ाहट और क्रोधपूर्ण शब्दों में कहा था—"इन्हें जला दो, ये मानवता के अत्यधिक पतन का प्रदर्शन करती हैं। जो व्यक्ति इन स्थितियों के लिए उत्तरदायी हैं, उन्हें फाँसी दे देनी चाहिए।" डा० राधाकमल मुखर्जी ने श्रमिकों की दीन-हीन दशा का वर्णन करते हुए लिखा है—"भारत के औद्योगिक केन्द्रों की हजारों गन्दी बस्तियों में निःसन्देह पुरुषों में पाशविक प्रवृत्तियाँ आ जाती हैं, स्त्रियों का सतीत्व नष्ट होता है तथा बालकों के जीवन को आरम्भ से ही दूषित कर दिया जाता है।"[१]

इस प्रकार, हम देखते हैं कि आवास की कमी और दरिद्रता के कारण ही गन्दी बस्तियों का विकास होता है और इसमें रहने वाले श्रमिकों का जीवन नारकीय हो जाता है। इससे इनका स्वास्थ्य तो गिरता और नष्ट होता ही है, साथ ही साथ उनकी कार्यकुशलता और कार्यक्षमता का भी ह्रास हो जाता है जिसका प्रभाव उत्पादन पर बहुत खराब पड़ता है। इससे राष्ट्रीय क्षति होती है। इसलिए हम इन गन्दी बस्तियों को राष्ट्रीय कलङ्क के रूप में देखते हैं।

अतः इन गन्दी बस्तियों की सफाई आवश्यक है। इसके लिए हमें काफी

1. Dr, Radha Kamal Mukerjee : Indian Working Class. p. 320.

ठोस कार्य करने होंगे। लेकिन खेद की तो यह बात है कि हमारी केन्द्रीय और राज्य सरकारों ने अभी तक इस समस्या की ओर बहुत कम ध्यान दिया है। इसके लिए हमें दृढ़ सहयोग की आवश्यकता है। इस प्रकार के सङ्कट का सामना केवल सरकार, मालिकों, श्रमिकों तथा सहकारी संयुक्त समितियों के संयुक्त और दृढ़ प्रयासों द्वारा ही सम्भव है। डा० राधाकमल मुखर्जी के शब्दों में हम कह सकते हैं कि भारतीय श्रमिकों के रहन-सहन के स्तर, व्यवहार और नैतिकता में उन्नति करने के लिए अच्छे आवासों की व्यवस्था पहला पग है। उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि करने और उनकी भलाई के लिए निःसन्देह आवास-व्यवस्था ही मुख्य समस्या है।[1]

(च) दुर्व्यसनों तथा अपराधों की वृद्धि (Growth of Bad Habits and Crime) :—ग्रामीण पर्यावरण की अपेक्षा नगरीय वातावरण ऐसा होता है कि व्यक्ति शीघ्र ही कुत्सित भावनाओं और दुर्व्यसनों एवं विभिन्न अपराध-जन्य वृत्तियों का शिकार हो जाता है। इसका कारण पारिवारिक नियंत्रण का अभाव, स्थानाभाव और उच्च नगरीय स्तर प्रमुख है। औद्योगिक केन्द्रों में श्रमिक दूर-दूर से आते हैं और उनकी आय इतनी नही होती कि वे अपने परिवार को भी अपने साथ रख सकें। इसलिए वे अकेले रहते हैं। दिन-भर कठोर परिश्रम करने से उनमें स्नायविक दुर्बलता और तनाव उत्पन्न हो जाता हैं। इससे छुटकारा पाने के लिए आवश्यक है कि किसी प्रकार का मनोरंजन हो। लेकिन साथ में परिवार न रहने से कोई हँसने-बोलने वाला नहीं होता। अतः विवश होकर या तो वे किसी भी प्रकार का मद्य-सेवन करने लगते हैं अथवा वेश्यावृत्ति की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं। उनके सम्मुख यही दो वैकल्प होते हैं जो उन्हें स्नायविक तनावों से छुटकारा दिला सकते हैं। अपनी दरिद्रता से छुटकारा पाने के लिए वे जुए के भी शिकार हो जाते हैं। ग्रामीण और नगरीय परिवेश में, अपराध सम्बन्धी आँकड़ों से ज्ञात होता है कि नगरों में अपराध अधिक होते है। बड़े-बड़े नगरों में तो और भी अधिक अपराध होते हैं।

नगरों में बाल-अपराधिता की संख्या अधिक मिलती है। इसका कारण यह है कि पति-पत्नी दोनों काम करने के लिए चले जाते हैं और लड़कों को घर में अकेले छोड़ देते हैं जिससे उन्हें खेलने-कूदने, बुरी आदतों को सीखने की पूर्ण स्वतन्त्रता मिल जाती है। उनका साथ गन्दे और अपराधी बालकों से हो जाता है जो उन्हें हर प्रकार के कुकर्मों से अभिज्ञ करा देते हैं। इस प्रकार,

---

1. Ibid. p. 321.

हम देखते हैं कि नगरों में बालकों की उचित देखभाल नहीं हो पाती। आज के औद्योगीकृत समाज और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने वाले मानव के मध्य इतना तीव्र संघर्ष चल रहा है कि किसी के पास इतना अवकाश नहीं कि वह एक दूसरे का ख्याल रख सकें। यही कारण है कि बालकों का जीवन एकदम उपेक्षित हो जाता है और वे भी अपनी उपेक्षिता और स्वतन्त्रता का पूर्ण लाभ उठाते हैं।

अन्त में, हम देखते हैं कि नगरों के ऊपर औद्योगीकरण का जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा, वह सामाजिक परिस्थितिशास्त्र (Social Ecology) में परिवर्तन था। जहाँ तक दक्षिण के प्राचीन नगरों का प्रश्न है, अमेरिकन नगरों के समान, परिस्थितिक प्रतिमान ही विकास की प्रक्रिया रही है। पार्क्स[1] (E. W. Parks) का तो यह निष्कर्ष है कि समस्त दक्षिण के नगर, उत्तर और पूर्व के नगरों की ही भाँति हो जायेंगें। उनका कथन है कि जितनी भी सम्भव भविष्यवाणियाँ हैं, उनसे यही ज्ञात होता है कि नगरों की उत्तरोत्तर वृद्धि हमारे नगरों को, अमेरिका के अन्य नगरों के ही समान कर देगी।

---

1. E. W. Parks : "Towns and Cities" in W. T. Couch (ed), Culture in the South. Chapel Hill : University of North Carolina Press. (1933) p. 518.

अध्याय १०

गन्दी बस्तियाँ

(The Slums)

शहरों में उद्योग-व्यापार की वृद्धि और रोजगार की तलाश में लोगों के गाँवों से शहरों में आने के कारण पिछले ५० वर्षों में शहरों की आबादी बहुत बढ़ी है। बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली, कानपुर आदि सब बड़े शहरों में अत्यधिक भीड़ के कारण गन्दी बस्तियाँ बनीं। ये गन्दी बस्तियाँ, रहन-सहन के निम्न स्तर और नारकीय जीवन का संकेत करती हैं। ये नगरीय जीवन के विघटन का प्रतीक हैं। आज के विकसित हो रहे प्रत्येक नगर के लिए यह एक ज्वलन्त समस्या हैं जिसका समाधान अत्यावश्यक है अन्यथा हमारी सारी प्रगति, सारा नगरीय विकास व्यर्थ हो जायेगा।

प्रश्न उठता है कि गन्दी बस्तियों से हमारा तात्पर्य क्या है ? इस सम्बन्धं में विद्वानों में मतभेद है। गन्दी बस्तियों की एक परिभाषा के सम्बन्ध में कोई मतैक्य नहीं है। कुछ लेखक इसे विघटित क्षेत्र का एक विशिष्ट प्रकार मानते हैं लेकिन यह मत उचित नही जान पड़ता। क्योंकि विशिता (Wichitas) में जो मैक्सिकन गन्दी बस्तियाँ (Mexicon Slums) हैं, वे विघटित क्षेत्र नहीं हैं। कुछ लोग गन्दी बस्तियों और जीर्ण-शीर्ण क्षेत्रों (Blighted Areas) को एक दूसरे का पर्यायवाची मानते हैं लेकिन इन दोनों में भी विभेद हैं, क्विन (Quinn) भी कहते हैं कि जीर्णता का सम्बन्ध आवासीय और गैर-आवासीय, दोनों क्षेत्रों से होता है जब कि गन्दी बस्तियाँ सिर्फ गैर-आवासीय क्षेत्रों में ही पाई जाती हैं। गन्दी बस्तियाँ जीर्ण नहीं हो सकतीं। वे प्रारम्भ से ही गन्दी बस्तियाँ रहती हैं।

बर्जेल (Bergel) के अनुसार नगर के अन्दर निम्न-स्तरीय आवासीय दशा को गन्दी बस्ती कहते हैं। बम्बई में आयोजित गन्दी बस्ती निवारण सेमीनार (Slum Clearance Seminar) के अनुसार गन्दी बस्ती

उस बस्ती को कहते हैं जो अस्त-व्यस्त बसी हो; अव्यवस्थित रूप से विकसित हो एवं सामान्यतः उपेक्षित क्षेत्र हो; अत्यधिक सघन हो, जिसके मकान टूटे फूटे हों और उनकी मरम्मत के प्रति उपेक्षा दिखलाई गई हो। आक्सफोर्ड शब्द-कोष में गन्दी बस्ती का तात्पर्य एक सड़क, गली या खुले क्षेत्र से है जो किसी शहर या नगर के सघन क्षेत्र में बसा हो तथा जिस पर अल्प आय वर्ग या अत्यन्त गरीब लोगों का निवास हो[1]। दरिद्रता, गन्दगी, धूल एवं बीमारी आदि गन्दी बस्तियों की स्पष्ट विशेषताएं हैं। इनके अतिरिक्त, गन्दी बस्तियों का निर्धारण करने वाले कारक ये हैं :—

(i) भूमि पर मकानों की अति सघनता।

(ii) मकानों की जीर्ण-शीर्ण अवस्था।

(iii) इन मकानों में रहने वालों की अत्यन्त सघनता।

(iv) नागरिक और सामुदायिक सुख-सुविधाओं का अभाव और,

(v) खाली स्थानों पर पशुओं का निवास ।

कहने का तात्पर्य यह है कि गन्दी बस्तियाँ मानवीय पतन का चरम बिन्दु हैं। इन स्थानों पर रहने वालों का स्वास्थ्य तो गिर ही जाता है, साथ ही साथ उनके नैतिक चरित्र का भी पतन हो जाता है। एक साथ अधिक लोगों के रहने के कारण स्त्रियों में से शालीनता और लोक-लाज का लोप हो जाता है। उनका अपना कोई व्यक्तित्व ही नहीं रह जाता ।

१९५२ में श्री जवाहरलाल नेहरू ने कानपुर में 'अहाता' कहलाने वाली गन्दी बस्ती को देख कर बड़े रोष में कहा था, "इन्हें जला दो, ये मनुष्य के अधिकतम अधःपतन की परिचायक हैं। इस अवस्था के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों को फाँसी दे दी जानी चाहिये।" डा० राधाकमल मुकर्जी लिखते हैं" भारतीय औद्योगिक केन्द्रों की हजारों गन्दी बस्तियों में बिना बात ही पुरुषत्व को नृशंस, स्त्रीत्व को निराहत, और बाल्यावस्था को उनके उत्पत्ति के समय ही विष दे दिया जाता है।"[2]

---

1. "Slum is a street, alley, court etc, situated in a crowded district of a town or city and inhabited by people of low income classes or by very poor; a number of these streets and courts forming a thickly populated 'neighbourhoods of a squalid and wretched character.' Oxford Dictionary.

2. "In the thousand slums of Indian Industrial Centres manhood is unquestionably brutalized, womanhood dishonoured and childhood poisoned at its very sources." Dr. R. K. Mukerjee op. cit, p. 320

दिल्ली की कुछ बस्तियों के संबंध में २३-१२-१९३३ की विद्यार्थियों की सभा में भाषण करते हुए गांधी जी ने कहा था कि "अपनी आँखों देखे बिना तुम लोग कल्पना तक नहीं कर सकते कि दुनियाँ में इन्सान के रहने के लिए ऐसे भी स्थान हो सकते हैं। इस बस्ती को देखने के बाद खाना-पीना तक अच्छा नहीं लगता। इसे देखते ही जैसे उल्टी आती है। वहाँ ऐसी गन्दगी थी कि उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द तक नहीं हैं।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि गन्दी बस्तियाँ नगरीय जीवन की एक प्रमुख और ज्वलन्त समस्या है। यह एक मानवीय समस्या है।

इस स्थल पर पुनः प्रश्न उठता है कि गन्दी बस्तियों का निर्माण कौन करता है ? क्या मनुष्य गन्दी बस्तियाँ बनाता है अथवा गन्दी बस्तियाँ मनुष्य को बनाती हैं ? इस संबंध में भी मतभेद है। लेकिन इस प्रश्न का कोई भी उत्तर नहीं दिया जा सकता क्योंकि वैज्ञानिक रूप से यह बिल्कुल अर्थहीन अथवा निरर्थक प्रश्न है। यह तो एकदम स्पष्ट है कि निम्न आय समूह का रहन-सहन निम्न होता है। अतः जहाँ ये लोग रहेंगे वहाँ गन्दी बस्तियों का निर्माण होगा ही।

गंदी बस्तियों की उत्पत्ति के कारण :—

गन्दी बस्तियों की उत्पत्ति अनेक कारणों की जटिलता से होती है जैसा कि अन्य अनेक सामाजिक घटनाओं में होता है। लेकिन इसका सर्वप्रमुख कारण दरिद्रता है। श्रमिकों को इतनी कम मजदूरी दी जाती है कि वे अच्छे मकानों या अच्छे क्षेत्रों में रह ही नहीं सकते क्योंकि उनका किराया बहुत अधिक होता है और वे उतना देने में असमर्थ होते हैं। उन्हें जो मजदूरी मिलती है उससे दोनों वक्त का भोजन ही बड़ी मुश्किल से चलता है। अतः किराए का प्रश्न ही नहीं उठता। खानों (Mines) में काम करने वालों को इतनी कम मजदूरी मिलती है कि वे सिर्फ निम्न-स्तरीय आवास-गृहों में ही रह सकते हैं। अल्प आय, व्यक्ति को गन्दी बस्तियों में रहने के लिए बाध्य करती है। इसीलिए प्रायः देखा जाता है कि अधिक श्रमिक बस्तियों में श्रमिकों के स्थान पर मध्यम और निम्न-मध्यम वर्ग के लोग जो दफ्तरों में 'बाबू' हैं, निवास करते हैं। मकान तो श्रमिकों के नाम होता है किन्तु रहते उसमें कोई दूसरे ही हैं। श्रमिक जो ८ आना या १ रुपये से ५ रुपये तक के मकान या अहातों में रहता आया है, २०-२२ रुपये माहवार दे सकने की स्थिति में अपने को नहीं पाता। फलस्वरूप वह यही विचार करके कि २०-२२ रुपया

माहवार देने से तो ५-७ रुपये की 'खोली' ही अच्छी है भले ही उसमें नारकीय जीवन हो। हम देखते हैं कि इस तथ्य में वास्तविकता भी है। आजकल मँहगाई जिस प्रकार आकाश छू रही है, उसे देखते हुए हर व्यक्ति यही सोचता है कि कहीं से किसी भी खर्च को किसी प्रकार काट-पीट कर दो पैसे की बचत की जाय क्योंकि पैसे का काम तो पैसे से ही पूरा होता है। अतएव कोई भी श्रमिक जिस पर कुछ जिम्मेदारियाँ हैं, दो पैसे बचत की बात सोचते हुए अपने अहाते के नारकीय जीवन से पृथक होने को तैयार नहीं।

गन्दी बस्तियों के उत्पन्न होने का दूसरा कारण मकान-मालिकों द्वारा मकानों के मरम्मत की उपेक्षा है। यदि किसी क्षेत्र के निवासी अपने मकानों की उचित देखभाल और मरम्मत न करें तो वह गन्दी बस्ती के रूप में परिणित हो जायगा। लेकिन साधारणतः इन बस्तियों के निवासी असावधान होते हैं और गन्दगी की तरफ उतना ध्यान नहीं देते जितना अन्य लोग देते हैं क्योंकि उनके पास उतना पैसा एवं अवकाश ही नहीं रहता कि वे अपने क्षेत्र की सफाई करवा सकें अथवा क्षेत्र को साफ रखें। रोम के खंडहर यह संकेत करते हैं कि प्राचीन काल में भी गरीबों और दरिद्रों से भरे अत्यन्त सघन मकानों ने गन्दी बस्तियों को उत्पन्न किया। पश्चिम के मध्ययुगीन नगरों में भी मकानों की अपर्याप्तता थी। मकान निम्न-कोटि के थे। पानी की नाली, शौचालय, पत्थर और सीमेंट की सड़कों और निजी स्नान-गृह आदि का अभाव था जिससे लोग एक ही मकान में अधिक संख्या में रहते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि तरह-तरह के संक्रामक रोग फैलने लने, गन्दी बस्तियाँ उत्पन्न होने लगीं और मृत्यु-दर में भी वृद्धि हो गई।

औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगरों में कल-कारखानों की धड़ाधड़ स्थापना होने लगी और इनमें कार्य करने के लिए श्रमिकों की भी आवश्यकता हुई। रोजी-रोटी की समस्या सुलझाने के लिए श्रमिकों में देशान्तरगमन प्रारंभ हुआ। चूँकि ये श्रमिक निम्न श्रेणी और निम्न आय प्राप्त होते हैं इसलिए ये अच्छे मकानों में नहीं रह सकते। इन्हें विवश होकर नगर के किसी गन्दे हिस्से में एक साथ रहना पड़ता है। अल्प मजदूरी किसी भी प्रकार से अच्छे मकानों में रहने की अनुमति नहीं देता। ये लोग झाड़-फूस के बने झोपड़े या अन्य किसी जीर्ण-शीर्ण मकानों में जो अस्वच्छ, अस्वास्थ्यकर और शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाले होते हैं, रहते हैं।

यूरोप की अपेक्षा अमेरिका में नागरीकरण और औद्योगीकरण की प्रक्रिया तीव्र थी। इसलिए कम वेतन पाने वाले श्रमिक भारी संख्या में अन्य स्थानों को चले गये। इस विस्थापन से नवागन्तुकों को आवास प्रदान करना

कठिन हो गया। फलतः जितनी भी गन्दी बस्तियाँ थीं, वे उसी में जा भरे और नवीन गन्दी बस्तियों को उत्पन्न किया। पिछले दो महायुद्धों और मोटर-कार के आविष्कार ने सिर्फ बड़े-बड़े नगरों में ही नहीं वरन् मध्यम श्रेणी के नगरों में भी गन्दी बस्तियों को उत्पन्न किया।

जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि ने नगरों में मकानों की समस्या और भी विकट बना दिया है। रोजी-रोटी कमाने के लिए लोग गाँवों से नगरों की तरफ जा रहे हैं। इनकी तीव्रता अकाल, अनावृष्टि तथा फसल के नष्ट होने से और भी बढ़ जाती है। चूँकि ग्रामों से लोगों की एक भारी संख्या नगरों में आती है इसलिए वहाँ रहने की समस्या उत्पन्न हो जाती है। नगरों में स्थान सीमित होता है इसलिए लोग उसी सीमित स्थान में ही अपने को अभियोजित करना चाहते हैं जिससे नगर में भीढ़ बढ़ती जाती है। फलस्वरुप लोग छोटे-छोटे और गन्दे स्थानों में भी रहना प्रारम्भ कर देते हैं जिससे गन्दी बस्तियों की उत्पत्ति होने लगती है।

जब नगरों की तरफ एक बार देशान्तरगमन आरम्भ हो जाता है तो अन्य अनेक तत्त्व भी अपना प्रभाव डालना प्रारम्भ कर देते हैं। ये नवागन्तुक अभी तक देहातों में ही रहते आए हैं और देहातों के रहन-सहन की विशेषता यह है कि वहाँ स्वच्छता, अस्वास्थ्यकर पड़ोस आदि का ख्याल नहीं किया जाता। ये लोग खेतों मे ही शौचादि करते हैं। अतः वे उसी तरह नगरों में भी रहना चाहते हैं लेकिन नगरों में इतना खुला स्थान तो होता नहीं, इसलिए यहाँ वे सब कार्य अवांछनीय और असह्यनीय होते हैं। लेकिन फिर भी वे इसकी चिन्ता नहीं करते और अपने पास-पड़ोस में गन्दगी करना प्रारम्भ कर देते हैं जिससे गन्दी बस्तियों की उत्पत्ति हो जाती है।

गन्दी बस्तियों के प्रकार
(Types of Slums)

गन्दी बस्तियों के मुख्य तीन प्रकार हैं :—

(i) प्रथम के अन्तर्गत मूल गन्दी बस्तियाँ (Original Slums) आती हैं। इनका अस्तित्व प्रारम्भ से ही रहता है। इनका पुनरूद्धार नहीं हो सकता। इन गन्दी बस्तियों का एक उदाहरण मैक्सिकन गन्दी बस्तियाँ हैं।

(ii) द्वितीय प्रकार की गन्दी बस्तियों की उत्पत्ति तब होती है जब मध्यम तथा उच्च वर्ग के परिवार एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं। उदाहरण के लिए, बोस्टन के दक्षिणी सिरे (South End) की गन्दी बस्तियाँ।

(iii) तृतीय प्रकार की गन्दी बस्तियाँ मुख्यतः संक्रमण की एक घटना

हैं। मुख्य व्यापारिक क्षेत्र के चतुर्दिक जब एक बार गन्दगी अथवा टूट-फूट प्रारम्भ हो जाता है तो भौतिक और सामाजिक अवनति तीव्र रूप से होने लगती है। ये गन्दी बस्तियाँ आवारों, घुमक्कड़ों, शराबियों, शोहदों, भिक्षुकों, अस्थायी व्यक्तियों और आदती अपराधियों से भरी होती हैं। इन लोगों की आर्थिक क्रियाओं का संचालन शराब-गृह के मालिकों, गिरवी रखने वाले महाजनों, नशीली चीजों के विक्रेताओं और वैश्यालयों द्वारा होता है। इस प्रकार की गन्दी बस्तियाँ पुनर्वासन (Rehabilitation) का स्पष्ट विरोध करती हैं। इनका सर्वोत्तम और उपयुक्त इलाज दृढ़ और मजबूत प्रशासन है। इसके लिए भवन-कानून कठोर और तीव्र दण्डात्मक नीतियाँ होनी चाहिए जिससे अनेक जीर्ण-शीर्ण मकानों को गिराया जा सके और उनके स्थान पर अच्छे व नवीन मकानों का निर्माण हो सके। सस्ते आवासों को शरणालय के रूप में परिवर्तित कर देना चाहिए। शराब आदि लाइसेन्स रद्द कर देना चाहिए।

भौतिक रूप से गन्दी बस्तियाँ विभिन्न प्रकार की होती हैं। जैसे, एक कमरे की गन्दी बस्तियाँ, मकान के एक हिस्से की गन्दी बस्तियाँ तथा एक परिवारीय मकान की गन्दी बस्तियाँ। इन मकानों में भी अनेक दोष होते हैं। कुछ में रसोई घर, स्नान-गृह और शौचालय का अभाव होता है। कुछ भवन तो पूर्ण रूप से दोषयुक्त होते हैं। अन्य बहुत अच्छी तरह से बने होते हैं, फिर भी इनमें कोई नहीं रहता। अन्य नैराश्य रूप से क्षीण होते हैं। इसी तरह से इन गन्दी बस्तियों की दशाएँ भी अनेक दृष्टिकोणों से भिन्न होती हैं। कुछ मकानों में तो रहने वालों की अति-अधिकता होती है। ऐसी दशा में अन्य मकानों की तलाश भी करनी चाहिए। कुछ मकानों की स्थिति (Location) ही बड़ी बुरी होती है अर्थात् वह शोर-गुल के निकट होती है। अतः इन क्षेत्रों के निवासी अन्यत्र चले जाते हैं। कुछ मकान तो इतने खतरनाक होते हैं कि उनमें सदैव जीवन और मृत्यु का भय बना रहता है अर्थात् उनकी दीवालें नम होती हैं, हवा और रोशनी की अपर्याप्तता होती है। अतः इन्हें गिरा ही देना चाहिए।

इस प्रकार, उपरोक्त विवेचन से निष्कर्ष निकलता है कि गन्दी बस्तियों के उत्पन्न होने का मुख्य कारण दरिद्रता है। अमेरिका की कांग्रेस संयुक्त समिति ने १९५० में दरिद्रता की दशाओं का अन्वेषण किया और पाया कि वहाँ के १०॥ परिवारों की वार्षिक आय २००० पौंड से भी कम है। वे लोग गन्दी बस्तियों और बर्फ से भी ठण्डे कमरों में रहते थे जिनका किराया १६ पौंड प्रति माह था। इसी तरह एक स्थल सेना का आदमी जिसकी मासिक आय २७६ पौण्ड थी, अपनी पत्नी और सात बच्चों सहित ऐसे मकान में रहता था

जिसकी दीवाल में ४ फुट छेद था और जिसे आवास तथा भवन विभाग ने खतरनाक घोषित कर दिया था। इसी तरह भारतवर्ष के बड़े-बड़े नगरों में भी कितने ऐसे मकानों का दिग्दर्शन किया जा सकता है जिनके न तो छत होती हैं और न कोई छाया ही। बरसात में ऊपर से पानी टपकता है, गर्मी में सूर्य अपनी प्रचण्ड किरणों से उनमें रहने वालों का शरीर झुलसा देता है और जाड़े में बर्फीली हवा की सरसराहट उनके शरीर की हड्डी-पसलियों को तोड़ देती है। लेकिन इतने असुरक्षित मकानों का भी किराया अत्यधिक होता है। लेखक वाराणसी शहर के ऐसे कई मकानों को जानता है जो पूर्ण रूप से असुरक्षित हैं और उपरोक्त सभी विशेषताएँ उनमें मौजूद हैं। लेकिन इसके पश्चात् भी उनका किराया १५ से २० रुपये प्रति कमरा है। उस एक-एक कमरे में भी कई-कई श्रमिक, रिक्शे और ठेले वाले रहते हैं।

किसी भी नगर में गन्दी बस्तियों की संख्या कितनी होती है, इसकी ठीक-ठीक गणना नहीं की जा सकती क्योंकि नगरों के आकार-वृद्धि के साथ ही साथ गन्दी बस्तियों का भी विस्तार होता जाता है। इधर कुछ दशकों से तो यह स्थिति और भी बुरी हो गई है क्योंकि कुछ बड़े-बड़े नगर गन्दी बस्तियों को हटाने के प्रति असावधान रहे। इसके अतिरिक्त, उन नगरों में भी गन्दी बस्तियों की संख्या अधिक है जो प्रगति की दौड़ में होड़ लगाए हैं। इस प्रगति की दौड़-धूप में इमारतों का निर्माण बहुत जल्दी हुआ जिससे उनमें स्थायीपन और मजबूती न आ सकी। फलतः कुछ ही दिन पश्चात् वे गिरने लगे और गन्दी बस्तियों के रूप में परिणित हो गए।

गन्दी बस्तियों की सफाई

(Slums Clearance)

यद्यपि टूटे-फूटे और जीर्ण-शीर्ण आवास गन्दी बस्तियों की विशेषताएँ हैं तथापि यह भौतिक घटना न होकर एक सामाजिक घटना है। इस समस्या का संबंध सिर्फ मकानों से ही नहीं अपितु व्यक्तियों से भी है। यदि कोई टी. बी. का मरीज कोयले की खान में काम करता है तो यह उसके स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक है। इसलिए उसे किसी स्वास्थ्यप्रद वातावरण में चला जाना चाहिए। उसके स्वास्थ्य-लाभ का यही एक आवश्यक शर्त है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं हुआ कि सिर्फ स्वास्थ्यप्रद वातावरण में चले जाने से ही वह स्वस्थ हो जायेगा। उसे औषधियों का भी सहारा लेना पड़ेगा। ठीक इसी तरह, टूटे-फूटे मकानों का संतोषजनक पुनर्स्थापन लाभदायक है लेकिन यह पूर्ण रूप से उपचारात्मक मापदण्ड नहीं है। सिर्फ आवास निर्माण कार्यक्रम

से ही गन्दी बस्तियों की सफाई नहीं हो सकती। इसके साथ ही साथ उन गन्दी बस्तियों के निवासियों का सामाजिक उपचार भी अपेक्षित है। गन्दी बस्तियों को हटाने के अनेक मापदण्ड हैं जिन्हें एक दूसरे से संबद्ध करना पड़ेगा। चूँकि गन्दी बस्तियाँ कई तरह की होती हैं इसलिए उनका उपचार भी उनके प्रकारों (Types) की ही भाँति भिन्न होगा।

संक्रमणकालीन क्षेत्र में (Zone in Transition) तो अत्यधिक सुधारवादी पुनर्वासन प्रक्रिया की आवश्यकता है। इस क्षेत्र से गन्दी बस्तियों को हटाने के लिए आवश्यक है कि उपयुक्त क्षेत्रीकरण (Proper Zoning) किया जाय। इसके लिए केन्द्रीय बस्ती में बाजार, होटल, मनोरंजन-गृह, दफ्तर, सार्वजनिक आवासों का निर्माण और उस क्षेत्र से विद्युत-उद्योग हटा देना चाहिए। इससे यातायात की सघनता कम हो जायेगी। समस्त शोचनीय औद्योगिक संरचनाओं को भी जिनसे गन्दगी फैलती है, हटा देना चाहिए। केन्द्र से मनोरंजन के सस्ते साधनों (पूल रूम्स और शूटिंग गैलरीज़) को हटा देना चाहिए। इससे यह लाभ होगा कि केन्द्रीय क्षेत्र में अवांछनीय तत्त्व नहीं आ पायेंगे जो पड़ोस में गन्दगी फैलाने के एक प्रमुख कारक हैं। इन सबके अतिरिक्त, संक्रमण-क्षेत्र में नियम आदि भी कठोर होने चाहिए। एक-एक कमरे वाले मकानों तथा उनमें रहने वालों की भी संख्या कम कर देनी चाहिए।

गन्दी बस्तियों में रहने वाले अधिकांश दरिद्र ही होते हैं। इसलिए इन गन्दी बस्तियों का सुधार बहुत ही सरलतापूर्वक किया जा सकता है। नगर-पालिका का कुछ भी खर्च न होगा। सिर्फ वर्तमान संहिता, क्षेत्रीकरण नियम और स्वास्थ्य विभाग की आज्ञाओं के प्रशासन में कठोरता मात्र ला देने से इनका सुधार हो सकता है। लेकिन व्यावहारिक रूप में यह पाया गया है कि अनेक नगरों में वर्तमान कानूनों का कार्यान्वयन बहुत ही ढिलाई से होता है। इसका सर्वप्रमुख कारण राजनैतिक या व्यक्तिगत स्वार्थ अथवा प्रत्यक्ष घूसखोरी हैं। नारवाक (Norwalk) और कनेक्टिकट (Connecticut) में सिर्फ वर्तमान भवन कानूनों के कठोर प्रशासन से ही गन्दी बस्तियों की सफाई योजना प्रारंभ हुई लेकिन समाचार-पत्रों के अनुसार इसका परिणाम फलदायक और संतोषप्रद न रहा।

गन्दी बस्तियों के अस्तित्व का एक निन्दनीय कारक यह भी है कि गन्दी बस्तियों का स्वामित्व एक लाभदायक व्यापार है। यह सर्वविदित है कि जितने अच्छे मकान होते हैं उनकी सुरक्षा में अधिक खर्च होता है। अच्छे मकानों पर कर अधिक लगते है और उनका किराया भी अधिक होता है। इसलिए ऐसे

मकानों को खरीदने में भी काफी मूल्य चुकाना पड़ता है। इसके विपरीत, बहुत थोड़े से ही पैसे में गन्दी बस्तियों को खरीदा जा सकता है। इन मकानों के किराए भी कम होते हैं जिससे वे अधिक दिन तक खाली नहीं रहते। इसलिए लोग इन्हें खरीद कर किराए पर उठा देते हैं और आर्थिक लाभ करते हैं। इसके मालिक, टूट-फूट होने पर मरम्मन भी बहुत कम करवाते हैं, साथ ही साथ इनकी सुरक्षा का खर्च भी अति अल्प होता है। कर आदि भी कम लगते हैं। अतः इस समस्या का सरलतम हल कर-नियम में परिवर्तन है।

गन्दी बस्तियों को दूर करने की एक अन्य पद्धति उपयुक्त दण्डात्मक नियम है। आजकल के कानून बहुत ही असंतोषजनक हैं और उनमें काफी अंश तक वैभिन्न्य भी है। अतः आदर्श रूप में कानून ऐसे होने चाहिए जो निम्न-स्तरीय आवासों की निन्दा करे।

गन्दी बस्तियों के अस्तित्व का मुख्य आर्थिक कारण यह है कि वहाँ के निवासी अच्छे मकानों का अधिक किराया नहीं दे सकते। इसलिए वे विवश होकर गन्दी बस्तियों का आश्रय लेते हैं। इन दशाओं में परिवर्तन किसी भी प्रशासकीय कार्य द्वारा नहीं किया जा सकता क्योंकि राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना नगरपालिकाओं के वश की भी बात नहीं है। इस समस्या को सुलझाने के लिए दृढ़ श्रमिक संघों की आवश्यकता है जो श्रमिकों की आय का समान वितरण करके उन्हें अच्छे क्वार्टर दिलावें और उच्च-स्तरीय आवासों के, जिनका किराया अधिक है, विरुद्ध आवाज उठावें।

गन्दी बस्तियों की तीन प्रमुख समस्याएँ हैं :—

(i) इन स्थानों को मनुष्य के रहने योग्य बनाना। गन्दी बस्तियों में जल-पूर्ति, गन्दे पानी की निकासी, प्रकाश का प्रबंध और पक्की सड़कें, स्नान-गृह तथा शौचालय बना कर यह काम किया जा सकता है। यदि किसी बस्ती को साफ करके रहने योग्य नहीं बनाया जा सकता तो पुराने मकानों को गिरा कर नए मकान बनाए जाने चाहिए।

(ii) गन्दी बस्तियों में रहने वालों को बेदखली से बचाना। अधिकतर गन्दी बस्तियों के मकानों और जमीनों के मालिक भूमि मूल्य में वृद्धि होने से उन्हें खाली कराना चाहते हैं।

(iii) गन्दी बस्तियों में रहने वालों को उचित किराए पर सुधरे हुए या नए मकान प्रदान करना।

उपरोक्त तथा अन्य संबंधित समस्याओं को सुलझाने के लिए १९५६ में भारतीय संसद ने केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए गन्दी बस्ती (सुधार और सफाई) अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम में गन्दी बस्तियों के सुधार और

सफाई, बेदखली से किराएदारों की सुरक्षा, और भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित भूमि के मूल्य से कहीं कम मूल्य पर जमीन लेने की व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम के अनुसार गन्दी बस्तियों के सुधार और सफाई की पहली जिम्मेदारी मालिक की है। यदि बारह महीने के भीतर वह यह कार्य नहीं करता तो संबंधित अधिकारी बस्ती को अपने कब्जे में लेकर उसका विकास कर सकते हैं।

अधिनियम लागू होने के बाद उसके मार्ग में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयाँ आईं जिनसे गन्दी बस्तियों की सफाई कार्य में बाधा पड़ी। अतः इसके संशोधन के लिए संसद में एक विधेयक पेश किया गया जिसे लोकसभा ने पारित भी कर दिया।

१९५६ में संसद ने गन्दी बस्तियों की सफाई संबंधी पहला कानुन बनाया और केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारों को लिखा कि वे भी अपने राज्यों में गन्दी बस्तियों की सफाई के लिये कानून बनावें।

आंध्रप्रदेश, आसाम, केरल, मध्यप्रदेश, मद्रास, मैसूर, पंजाब, उत्तरप्रदेश और पश्चिम बंगाल ने तत्संबंधित कानून बना लिए हैं और बिहार, गुजरात महाराष्ट्र, उड़ीसा और राजस्थान, कानून बनाने के लिए कारवाई कर रहे हैं।

मई सन् १९५६ में केन्द्रीय सरकार ने गन्दी बस्तियों की सफाई योजना चालू की। इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों या नगरपालिकाओं को गन्दी बस्तियों के निवासियों के लिए मकान बनाने के खर्च का ७५%दिया जाता है। आरम्भ में इस ७५%आर्थिक सहायता में से ५०%ऋण में और २५ %सहायता में दिया जाता था। परन्तु १९५८-५९ से आधी राशि ऋण में और आधी सहायता में दी जाती है। मेहतरों के मकानों के लिए लागत का आधा धन सहायता में दिया जाता है। इसके लिए १२॥ % अतिरिक्त धन गृह-मन्त्रालय देता है। मकानों की लागत का शेष २५% राज्य सरकार और नगरपालिका लगाती है। इस प्रकार मकानों की लागत की स्वीकृत राशि का ६२॥% से ७५%सहायता में मिलता है। यह सहायता इसलिए दी जाती है जिससे मकानों का किराया अधिक न हो और गन्दी बस्तियों के निवासी आसानी से किराया दे सकें। लेकिन गन्दी बस्तियों की सफाई योजना की वांछित प्रगति नहीं हुई है। मार्च १९६४ के अंत तक राज्य सरकारों और केन्द्रशासित प्रदेशों ने २९ करोड़ रूपये की लागत पर लगभग ८४ हजार मकान बनाने की मन्जूरी दी थी लेकिन उनमें से ४३ हजार मकान बने और उन पर २२ करोड़ रूपये व्यय हुए।

धीमी प्रगति के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं :—

(i) गन्दी बस्तियों की सफाई और इनके निवासियों के लिए मकान बनाने के लिए आवश्यक जमीन मिलने में कठिनाई।

(ii) गन्दी बस्तियों में रहने वालों की अन्यत्र जाने में आनाकानी।

(iii) गन्दी बस्तियों की सफाई कार्यक्रम लागू करने वाली संस्थाओं की तत्परता में कमी। ये संस्थाएँ मुख्यत: नगरनिगम और नगरपालिकाएँ हैं।

पहली कठिनाई दूर करने के लिए राज्य सरकारों को आवश्यक कानून बनाने के लिए कहा जा चुका है। राज्य सरकारें संशोधित केन्द्रीय अधिनियम के आधार पर कानून बना सकती हैं।

जहाँ तक दूसरी कठिनाई का संबंध है, गन्दी बस्तियों के निवासियों को अन्य स्थानों पर जाने के लिए तैयार करना चाहिए। अधिकाँश गन्दी बस्तियाँ इतनी छोटी हैं कि सफाई के बाद नए या सुधरे हुए मकानों में पहले से रहने वाले सब लोगों को जगह नहीं मिल सकती। अतः ऐसा कानून बनाया जाना चाहिए जिसमें गन्दी बस्तियों के निवासियों को साफ की हुई बस्तियों के अलावा अन्य स्थानों पर भी फिर से बसाने की व्यवस्था हो। एक राज्य के तत्संबंधित कानून में व्यवस्था की गई है कि गन्दी बस्तियों के निवासियों को उनके वर्तमान घर के एक मील के दायरे के भीतर ही फिर से बसाया जाना चाहिए। लेकिन बड़े और घने बसे शहरों में यह बात व्यावहारिक नहीं लगती।

नगरपालिकाओं और नगरनिगमों को इस काम में सक्रिय दिलचस्पी लेनी चाहिए, विशेषकर उस स्थिति में जब कि लागत का ७५% सरकार से मिल रहा हो। अक्टूबर १९६२ में नई दिल्ली में बड़े नगरनिगमों के मेयरों और म्युनिसिपल आयुक्तों (Commissioners) का जो सम्मेलन शुरू हुआ, उसमें गन्दी बस्तियों की सफाई कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता देने पर सहमति प्रकट की गई। मेहतरों की गन्दी बस्तियों की सफाई की ओर विशेष ध्यान देने का निश्चय किया गया। परन्तु लगता है कि अभी तक स संबंध में पर्याप्त कार्य नहीं हुआ है।

केन्द्रीय निर्माण और आवास मंत्रालय ने इस सम्मेलन में सुझाव दिया था कि निगमों और नगरपालिकाओं को इस काम के लिए अलग विभाग बनाने चाहिए। उन्हें अपने क्षेत्र की गन्दी बस्तियों का सर्वेक्षण करना चाहिए और इस समस्या पर पूरी तरह विचार करने के बाद गन्दी बस्तियों के निवासियों को १५ वर्ष के भीतर अच्छे मकानों में बसाने का कार्यक्रम तैयार करना चाहिए।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में गन्दी बस्तियों को हटाने का कार्यक्रम :—तृतीय योजना में यह प्रस्ताव है कि गन्दी बस्तियों का सर्वेक्षण होना चाहिए और उन्हें दो श्रेणियों में बाँटा जाना चाहिए—एक तो वे क्षेत्र जिन्हें साफ करके पूर्णतः नए सिरे से विकसित करना है और दूसरे वे क्षेत्र जिन्हें पास-पड़ोस की स्थिति में सुधार करके रहने योग्य बनाया जा सकता है। दूसरी श्रेणी की गन्दी बस्तियों के मकान-मालिक यदि ये सुधार न करें तो स्थानीय निकायों (Local Bodies) को यह काम करना चाहिए और काम की लागत मालिकों से वसूल कर लेनी चाहिए और जहाँ आवश्यक हो कानूनी रूप से स्थायी-अस्थायी आधार पर संपत्ति ले लेना चाहिए। जहाँ स्थानीय निकाय सरकारी भूमि या अधिगृहीत भूमि पर बसी गन्दी बस्तियों में सफाई कार्य करें वहाँ इस बात की आवश्यकता हो सकती है कि स्थानीय निकायों को अनुदान दिए जाँय जिससे वे इन बस्तियों में आवश्यक सेवाओं का प्रबन्ध कर सकें। सफाई और सुधार के लिए गन्दी बस्तियों को चुनते समय उन क्षेत्रों की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जिनमें भंगी बसते हैं। गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार कार्यक्रम चलाने के लिए स्वयंसेवी संगठनों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का सहयोग पूर्णतः प्राप्त किया जाना चाहिए।

गन्दी बस्तियों की सफाई की वर्तमान योजना में छः बड़े शहरों की—कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली, कानपुर और अहमदाबाद—गन्दी बस्तियों की समस्याओं को प्राथमिकता दी गई है। तृतीय योजना में इन छः शहरों में भी गन्दी बस्तियों की सफाई के अधिकाधिक प्रयत्न किए जाने चाहिए। परन्तु सैद्धांतिक रूप से राज्य सरकारों को उन सभी क्षेत्रों में सफाई और सुधार का कार्य करना चाहिए जहाँ यह समस्या विकराल रूप धारण किए हुए है। गन्दी बस्तियों की सफाई और सुधार के साथ-साथ यह भी जरूरी है कि नई गन्दी बस्तियाँ न पनपने दी जाँय। यह सरल कार्य नहीं है। सभी विकसित हो रहे कस्बों और नगरों के लिए वृहत्तर योजना बनाने और उस पर अमल करने के अतिरिक्त यह भी आवश्यक होगा कि नगरपालिका के उपनियमों और निर्माण संबंधी नियमों को लागू किया जाय और इसके साथ कम आय वाले और निर्धन वर्ग के लोगों के लिए मकान बनवाने के हेतु अन्तरिम उपाय के रूप में पटरियों पर रहने वालों और परिवारविहीन श्रमिकों के लिए रैन बसेरे और कोठरियाँ बनाने के कार्य पर अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार, भंगियों के लिए मकान बनाने पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए।

अध्याय ११

आवास
(Housing)

आवास की समस्या कोई नई चीज नहीं है। प्रायः यह देखा जाता है कि शहरों में रहने के लिए उचित और स्वास्थ्यप्रद आवास का अभाव रहता है। लोग गली-कूचों और पटरियों पर रहते हैं। उनके रहन-सहन का स्तर संतोषजनक नहीं होता। लेकिन जब औद्योगिक और व्यापारीय विस्तार के प्रभावस्वरूप नागरीकरण की प्रक्रिया तीव्रतम हुई तो यह समस्या अत्यन्त विकट हो गयी। लोग गाँवों से नगरों की ओर आकर्षित हुए और हर व्यक्ति तथा परिवार जीवन का एक नवीन ढंग अपनाने की इच्छा करने लगा; सब लोग नगरों में ही रहने की ख्वाहिश करने लगे। परिणामस्वरूप, नगरों में आवास की समस्या उत्पन्न हो गई। यह समस्या किसी खास देश या क्षेत्र में ही नहीं है बल्कि विश्वजनीन है। हर देश में, हर नगर में यह समस्या मुँह बाए खड़ी है जिसका पूर्ण निराकरण अभी तक संभव नहीं हो सका है। धनिक और प्रतिष्ठाप्राप्त व्यक्तियों को छोड़ कर अधिकांश नगरवासी, शारीरिक, नैतिक और सामाजिक दृष्टि से अस्वास्थ्यकर वातावरण में रहने के लिए बाध्य हैं।

पूर्व-औद्योगिक देशों में आवास
(Housing in Pre-industrial Countries) :—

वायलिश (Violich) ने बताया है कि लैटिन अमेरिका के दो-तिहाई निवासी अथवा १ करोड़ व्यक्ति सिर्फ २५ लाख व्यक्तियों के रहने लायक निवास-स्थानों में रहते हैं जिसमें कम से कम आधे लोग शहरों में रहते हैं।[१]

1. F. Violich : Urban Land Policies : Latin America, Housing and Town and Country Planning. U. N. Bulletin 7 (1953). p. 93

जहाँ तक भारतवर्ष के प्रमुख शहरों का संबंध हैं, यहाँ के आधे से अधिक श्रमिक अपने परिवार के साथ एक कमरे में रहते हैं। यही नहीं, मध्यम वर्गीय परिवार भी अक्सर इस भीड़युक्त दशा में रहने के लिए बाध्य हैं। बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, दिल्ली जैसे शहरों में, हजारों परिवार सड़क के किनारे टूटे-फूटे और कमजोर झोपड़ियों में रहते हैं। चालों (Chawls) में या मकान के एक हिस्से में तो दस से पन्द्रह लोग एक ही कमरे में रहते हैं।

सन् १९५७ में, स्पेन में दो लाख अनुपयुक्त निवास स्थान थे और ६ लाख मकानों में से करीब २$\frac{१}{२}$ लाख दोषपूर्ण और जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थे। अनेक मकानों में तो, जो सिर्फ एक परिवार के लिए बने थे, दो या अधिक परिवार के लोग रहते थे। फ्रेजर[1] (J. M. Fraser) ने अपनी पुस्तक में दर्शाया है कि सिंगापुर में लगभग १ लाख ३० हजार व्यक्ति निम्न और खराब दशा में रहते हैं जिनका वातावरण बड़ा दूषित और हानिकारक है। अक्सर वे लोग बक्सों के अथवा जंग लगे लोहों द्वारा बने गन्दे तथा खुले शेडों में रहते हैं जहाँ सफाई का कोई प्रबंध नहीं होता है। मनीला (Manila) की लगभग आधी जनसंख्या कपड़े, लोहे के टुकड़ों तथा बेकार सामानों से बनाए गए मकानों में रहती है। अल्जीरिया और कैसाब्लान्का (Casablanca) में तो खाली स्थानों में तेल के पीपों द्वारा मकान बनाए गए हैं जिन पर निम्न-परिवार वालों का दखल है। सेन जॉन (San Juan) और हवाना (Havana) में घास-फूस की बनी एक कमरे वाली असंख्य झोपड़ियाँ, शयन-कक्ष, रसोईघर, भोजन-गृह तथा किसी के बीमार पड़ने पर रोगी के कमरे का काम करती हैं। इन झोपड़ियों में दो-एक आदमी नहीं रहते बल्कि पूरा परिवार रहता है। इसी प्रकार जॉन्सबर्ग तथा दक्षिणी अफ्रीका के अनेक नगरों में लोग टीन अथवा अन्य किसी चीज़ के बने गन्दे मकानों में रहते है।

किसी सार्वजनिक या व्यक्तिगत भूमि को जबरदस्ती हथिया लेना कोई नवीन बात नहीं है। २० वीं शताब्दी में तो यह प्रवृत्ति अधिकतर पाई गई है। विश्व के अधिकांश नगरों में हजारों व्यक्तियों द्वारा जो बलपूर्वक जमीनें हथियाई गईं, उन पर शीघ्र ही झोंपड़ियाँ बना दी गई हैं जिसका स्वामित्व अन्य के हाथ में होता है। इन उजड़े हुए झोंपड़ियों में अधिकतर छतें (Roofs) नहीं होतीं। हम भारतीय नगरों में भी गलियों और सड़कों पर एक पूरे परिवार को रहते हुए देख सकते हैं। सड़क की पटरियाँ ही उनके

---

1. J. M. Fraser : Housing and Planning in Singapore : Town Planning Review, 23 : 5–25 (April, 1952)

लिए सब कुछ होती हैं। पटरियों पर ही पूरा परिवार सोता हैं, वहीं भोजन बनाता है। उनकी सारी गृहस्थी उसी पटरी पर देखी जा सकती है। खराब मौसमों में ये लोग किसी सार्वजनिक मकानों अथवा उसके बरामदों में शरण लेते हैं। हांगकांग में तो ऐसे लोगों को सड़क पर सोने वालों (Street-Sleepers) के रूप में जाना जाता हैं।

औद्योगिक देशों में आवास समस्या
(Housing Problems in Industrial Countries)

यदि विकसित हो रहे नगरों के लिए आवास की समस्या अचम्भित करने वाली है तो विश्व के आर्थिक रूप से संपन्न और प्रगतिशील क्षेत्रों में यह बहुत तीक्ष्ण भी है। नेपुल्स (Naples) के पाँच-मंजिला गन्दी बस्तियों में एक छोटे से जगह में ही अनेक परिवार भरे पड़े हैं जो बहुत ही अस्वास्थ्यकर और अँधेरी है। लन्दन के पूर्वी सिरे को बहुत दिनों तक यूरोप के एक मुख्य जीर्ण-शीर्ण अंचल के रूप में जाना जाता रहा है जिस पर औद्योगिक श्रमिकों का अधिकार था। इसके विपरीत, पेरिस की गन्दी बस्तियाँ अभिजात्य वर्ग (Elite) द्वारा अधिकृत थीं।

कुछ अमेरिकन नगर ऐसे भी हैं जहाँ दूर तक गन्दी बस्तियों का नामो-निशान तक नहीं है। लेकिन शिकागो में कितने ऐसे मकान हैं जिनमें मीलों तक गन्दे व दरिद्र लोग ही रहते हैं। न्यूयार्क के पूर्वी हिस्से में अनेक परिवार कई मंजिले मकानों में भरे पड़े हैं जो नगर के निम्न-आय वाले आवास हैं। सेंट लुईस (St. Louis) में तो जीर्ण-शीर्ण आवासों का एक बहुत बड़ा क्षेत्र ही है जो वर्षों से परित्यक्त है। दूसरी ओर, हम देखते हैं कि जो छोटे-छोटे नगर होते हैं, वहाँ गन्दी बस्तियाँ कम मात्रा में होती हैं।

अमेरिकी नगरों में नीग्रो जाति की आवास-स्थिति बहुत दिनों से भयंकर रही है। नीग्रो उन दशाओं में रहने के लिए बाध्य हैं जो स्वास्थ्य और आराम के दृष्टिकोंण से अत्यन्त निम्न है। शिकागो नगर में तो ड्रेक और केटन (Drake & Cayton) ने पर्यवेक्षण के पश्चात् पाया कि एक वर्ग क्षेत्र मील में ९० हजार नीग्रो रहते हैं जो श्वेतों (Whites) के आवासों से चार गुना अधिक घनी है। इसी तरह, दक्षिणी सिरे पर भी नगर की सीमा पर, जो बहुत ही घनी गन्दी बस्ती है, नीग्रो रहते हैं।

भारतवर्ष भी नवविकसित औद्योगिक देश है। यहाँ भी नागरीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप बढ़ती हुई जनसंख्या ने आवास समस्या उत्पन्न कर दिया है। यूरोपीय देशों की तुलना में यहाँ आवास समस्या काफी भयंकर है।

श्रमिकों की तो और भी शोचनीय दशा है। एक ही कमरे में तीन-तीन चार-चार परिवार तक रहते हैं। उसी कमरे में उनका समस्त कार्य संपादित होता है। न कोई गोपनीयता होती है और न लाज-शर्म। बम्बई, कानपुर जैसे औद्योगिक नगरों की तो और भी दयनीय स्थिति है। बम्बई के एक बस्ती का वर्णन करते हुए शिवाराव (Shiva Rao) ने लिखा है, 'जब बम्बई में श्रमिकों की एक बस्ती में एक लेडी डाक्टर एक मरीज देखने गई तो उसने देखा कि एक कमरे में ४ गृहस्थियाँ रहती थीं जिनके सदस्यों की संख्या २३ थी।" श्री हर्स्ट (Hurst) ने बम्बई की एक श्रमिक बस्ती का वर्णन करते हुए लिखा है, " रहने की दशाएँ यहाँ सबसे खराब हैं। एक सँकरी गली में जिसमें दो व्यक्ति एक साथ नही आ सकते, (लेखक के) घुसने के बाद इतना अंधेरा था कि हाथ से टटोलने पर कमरे का दरवाजा मिला। उस कमरे में सूर्य का भी प्रकाश न था। ऐसी दशा में दिन के १२ बजे थे। एक दिया-सलाई जलाने के बाद ज्ञात हुआ कि ऐसे कमरे में भी अनेक श्रमिक रहते हैं।" डा० राधाकमल मुखर्जी ने तो लिखा है, "भारतीय औद्योगिक केन्द्रों की श्रम बस्तियों की दशा इतनी भयंकर है कि वहाँ मानवता का विध्वंस होता हैं, महिलाओं के सतीत्व का नाश होता है और देश के भावी कर्णधार शिशुओं का गला घुट जाता है।"

लेकिन उपरोक्त विवरण का यह तात्पर्य नहीं है कि विश्व में अन्य लोग आरामदेह और स्वास्थ्यप्रद मकानों में रहते ही नहीं। लाखों व्यक्ति ऐसे हैं जो बड़े-बड़े आलीशान भवनों में रहते हैं। विपन्न देशों तक में धनिक वर्ग बहुत ही अच्छे मकानों में रहता है। अच्छे और मध्यम वर्ग के लोग भी एक सामान्य स्तर पर रहते हैं जहाँ उन्हें सफाई और स्वास्थ्यप्रद वातावरण प्राप्त रहता है। पश्चिमी यूरोप में तो मध्यम वर्ग के लोग सामान्यतया स्वास्थ्य और आराम की दृष्टि से उच्च स्तर के मकानों में रहते हैं।

अमेरिका में, संभवतः संपूर्ण जनसंख्या का $\frac{1}{3}$ भाग सामान्य स्तर के मकानों में रहती है और कुछ यूरोपीय देशों में तो नगरीय संख्या अधिक उपयुक्त ढंग से रहती है। मध्यम और उच्च आय वाले परिवार समान्यतया आर्थिक रूप से इतने समर्थ होते हैं कि वे अपनी मौलिक आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकें।

आवास समस्या क्यों गंभीर है ?

(Why Housing Problem is Acute)

प्रश्न उठता है कि आवास समस्या क्यों इतनी गंभीर और भयंकर हो गई है ? इसके उत्तर में अनेक तर्क प्रस्तुत किए गए हैं लेकिन उन समस्त

तर्कों को विभिन्न देशों के नगरों पर घटित नहीं किया जा सकता। यहाँ कुछ दशाओं का उल्लेख किया जायेगा जो आवास समस्या के लिए उत्तरदायी हैं।

(i) नगरों में आवास समस्या उत्पन्न होने का सर्वप्रमुख कारण जन-संख्या में गतिशीलता है। इधर कुछ वर्षों में नगरों की तरफ बढ़ने वाले प्रवासियों (Migrants) की बाढ़ सी आ गई है जिससे अनेक नगरों में आवास की गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई है। युद्ध, क्रान्ति और अकाल ने लाखों व्यक्तियों को जीविकोपार्जन हेतु, नगरों की तरफ बढ़ने को बाध्य कर दिया जिससे नगरों की जनसंख्या में और भी वृद्धि हो गई।

(ii) युद्ध काल में लाखों-करोड़ों घर बर्बाद हो गए जिस पर शीघ्र विश्वास नहीं किया जा सकता। १९५८ में १६ यूरोपीय देशों के सर्वेक्षण से (जिसमें रूस और जर्मनी भी सम्मिलित है) ज्ञात हुआ कि द्वितीय विश्व युद्ध में ४$\frac{1}{2}$ लाख आवास बर्बाद हो गए जिनमें लगभग $\frac{1}{6}$ भाग तो सिर्फ पौलैन्ड और यूनान में हुए। ब्रिटेन में ५० हजार आवास पूर्ण रूप से नष्ट हो गए अथवा स्थायी रूप से न रहने योग्य हो गए। युद्ध की विध्वंसता के कारण, १९४७ में यह अनुमान लगाया गया था कि चीन में १० लाख मकानों की जरूरत है। चीन के १७३ नगरों में से आधे अथवा इससे भी अधिक मकान नष्ट हो गए और कुछ नगरों में तो पूर्ण रूप से नष्ट हो गए। रंगून में $\frac{1}{3}$ भाग और मनीला में $\frac{1}{4}$ भाग मकान नष्ट हो गए। बमवर्षा के कारण टोकियो का एक बहुत बड़ा भाग सपाट हो गया और नागासाकी तथा हिरोशिमा में तो शायद ही एक मकान शेष बचे हों।

(iii) मकानों के किराए तथा आय में वैभिन्य होने के कारण हजारों परिवार उपयुक्त शरण-स्थल पाने में असमर्थ हो गए हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति की आय की तुलना में मकान का किराया अधिक होता है जिसे एक मध्यम वर्ग का व्यक्ति नहीं दे सकता जिससे उन्हें विवश होकर एक कमरे में रहना पड़ता है।

(vi) कुछ देशों में तो मकान बनाने की सामग्रियों तथा द्रव्य के अभाव-स्वरूप भवन-निर्माण नहीं हो पाता क्योंकि जब पैसा ही नहीं रहेगा तो सामग्री कहाँ से आवेगी और जब सामग्री ही नहीं मिलेगी तो भवन-निर्माण हो ही नहीं सकता।

(v) नगरपालिका तथा राष्ट्रीय सरकार आर्थिक रूप से इतनी दबी रहती है कि वह मकानों का सुधार करवा ही नहीं पाती।

(vi) प्रजाति, धर्म, जाति, और वर्ग-विभेद ने अल्पसंख्यक समूह को सामान्य स्तर का आवास प्राप्त करने के अयोग्य बना दिया है।

(vii) घटिया किस्म के मकानों ने अनेक आवासीय शहरों को गन्दी-बस्तियों के रूप में परिणित कर दिया है अथवा जो नए मकान बनते हैं, वे भी घटिया होने के कारण शीघ्र ही गन्दी बस्तियों के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। अधिकांश मकान-मालिकों की नीति ही यही होती है कि भवन-निर्माण में जितना रूपया खर्च हुआ है, वह सब किराए में वसूल लिया जाय।

(viii) आवासीय क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना से सम्पत्ति पर उसका विनाशकारी प्रभाव पड़ा।

विभिन्न देशों में आवास योजना
(Housing Programme in Different Countries)

अधिकांश देशों में आवास-योजना का शुभारम्भ हो गया है। कुछ देशों में तो योजनाएँ काफी विकसित और बड़े पैमाने पर और कुछ में अभी आरंभिक चरण पर हैं।

(क) ब्रिटेन में आवास-योजना (Housing In Britain) :— ब्रिटेन की आवास-योजना में वहाँ की जनता का उत्साह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। प्रथम विश्व-युद्ध के तुरन्त ही बाद, इंग्लैन्ड के आवास और नगर नियोजन अधिनियम (१९१९) ने समस्त नगरपालिकाओं को इस बात के लिए उत्तरदायी ठहरा दिया कि वे निम्न-आय परिवारों के लिए उचित आवास प्रदान करें[1]। इस प्रकार स्थानीय अभिकरणों (Agencies) और केन्द्रीय सरकार के मध्य कार्यात्मक संबंध स्थापित हो जाता है। केन्द्र स्तर (Standard) निर्धारित करता है, योजनाओं को स्वीकृत करता है और वित्तीय मदद देता है जबकि नगरपालिका भूमि प्राप्त करती है, उसकी रूपरेखा तैयार करके मकानों का निर्माण करवाती है और भूमि के मालिक की हैसियत से सब कार्य संपादित करती है। दोनों विश्व-युद्धों के मध्य, जन-आवास अधिकारियों द्वारा लाखों मकान बनवाए गए।

द्वितीय-विश्व युद्ध के कारण उत्पन्न भयंकर आवास समस्या को सुलझाने का कार्य केन्द्रीय सरकार और नगरपालिका के अधिकारियों पर आ पड़ा। युद्ध के ठीक बाद ही कुछ वर्षों में नगरपालिका के अधिकारियों ने ९० प्रतिशत नवीन मकान बनवाए। १९४६ में राष्ट्रीय कानून के द्वारा इस नीति को और भी पुष्ट किया गया और राज्यों को यह अधिकार प्रदान कर दिया गया

---

1. Gordon Stephenson and H. R. Parker : Urban Land Policies : United Kingdom. Housing and Town and Country Planning, Bulletin 7. (1953)

कि आवासीय उद्देश्य के लिए वे समस्त विकासात्मक अधिकारों का प्रयोग करें।

युद्ध के पश्चात इंग्लैंड ने अल्पकालीन और दीर्घकालीन लक्ष्यों को अपनाया। अल्पकालीन लक्ष्य का उद्देश्य युद्ध में बर्बाद परिवारों को शरण देना अथवा एकदम नवीन संगठित परिवारों की मदद करना था जो मकान बनवाने में असमर्थ थे। दीर्घकालीन आवासीय योजना का लक्ष्य समस्त परिवार को उपयुक्त आवास प्रदान करना था जो अपने सामर्थ्य के अनुसार किराया देते थे। इस योजना का मूल उद्देश्य यह था कि जिस प्रकार सरकार का कार्य शिक्षा देना या पुलिस की व्यवस्था करना है उसी प्रकार जनता को उपयुक्त मकान प्रदान करने का उत्तरदायित्व भी उसी पर है। यह योजना कुछ निश्चित प्रदत्त दशाओं के अन्तर्गत, निजी भवन निर्माण को भी स्वीकृति देती है।

युद्ध के पश्चात् एक बार आवास की अत्यन्त भयंकर समस्या उठ खड़ी हुई। उस समय बहुत ही बड़े पैमाने पर एक योजना बनाई गई जिसका उद्देश्य नगरीय पुनर्वासन (Urban Rehabilitation) था। इस योजना में, गन्दी बस्तियों का उन्मूलन कर बहुत लोगों के रहने लायक मकानों का निर्माण तथा आवासीय योजना का विकास करना भी सम्मिलित था। लन्दन काउन्टी काउन्सिल (London County Council) लन्दन में लगभग २ लाख मकानों का निर्माण करने की योजना बनाकर उसे कार्यान्वित कर रही है।

(ख) उत्तर-दक्षिण यूरोप में आवास योजना (Housing in North-West Europe) :—उत्तर-दक्षिण यूरोप के छोटे-छोटे देश, गन्दी बस्तियों को हटाने तथा हर स्तर के लोगों को उपयुक्त आवास गृह प्रदान करने में काफी आगे हैं। बहुद दिन हुए, इन देशों की सरकारों को यह ज्ञात हुआ कि निरन्तर बढ़ती हुई नगरीय जनसंख्या से आवासीय समस्या उत्पन्न हो सकती है। अतः हालैन्ड, स्वीडेन, डेनमार्क में अधिकांश नगरों ने नगरपालिका के क्षेत्राधिकार (Jurisdiction) के बाहरी इलाकों की खाली जमीनों को हस्तगत किया। स्टाकहोम (Stockholm) की नगरपालिका ने २ लाख एकड़ भूमि प्राप्त किया और वहाँ श्रमिक परिवारों के लिए मकान बनवाए। इन सब नगरों में नगरपालिका के अधिकारियों ने गन्दी बस्तियों को दूर किया, कम दाम के मकानों का निर्माण कराया और निजी निर्माण के लिए धन का प्रबन्ध किया। प्रत्येक देश ने आवास निर्माण योजना को निजी अथवा सार्वजनिक पैमाने पर कार्यान्वित किया है।

उत्तर-दक्षिण यूरोप तथा इस द्वीप के अनेक अन्य हिस्सों का एक महत्त्वपूर्ण विकास सहकारी आवास योजना (Cooperative Housing) है। अनेक देशों में सहकारी आवास समितियाँ संगठित की गई हैं जिनका उद्देश्य कोई लाभ उठाना नहीं है। इन समितियों ने मध्यम और निम्न आय वाले परिवारों के लिए बहुत बिस्तृन योजना (आवास-हेतु) कार्यान्वित की है। इन समितियों की सरकार भी कभी-कभी आर्थिक सहायता करती है। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद, हालैण्ड में लगभग ¾ मकान सहकारी आवास संगठनों द्वारा निर्मित किये गये थे।[1] इसी प्रकार १९४९ और १९५२ के मध्य, डेनमार्क में भी करीब आधे मकानों का निर्माण सहकारी और अलाभकर आवास संघों द्वारा किया गया था। इनमें से अधिकांश का निर्माण सरकारी ऋण लेकर हुआ था।[2]

(ग) भारतवर्ष में आवास योजना (Housing in India) :—बढ़ते हुए औद्योगीकरण के फलस्वरूप तथा पाकिस्तान से भारतीय नगरों में शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्या के कारण भारत के औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्रों में आवास की समस्या उत्पन्न हो गई है। इस वृद्धि का क्रम निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है जिससे लोगों के रहन-सहन का ढंग निम्न और लज्जास्पद होता जा रहा है। कितने मकान तो ऐसे हैं जो बहुत ही खतरनाक हालत में और अस्वास्थकर हैं। सर्वेक्षण के आधार पर ज्ञात हुआ है कि ४२ प्रतिशत नगर के मकानों में शौचालय नहीं है। ४९ प्रतिशत मकानों में पानी मिलने का कोई साधन नहीं है। ८० प्रतिशत मकान ऐसी सामग्रियों से बने हैं कि वे शीघ्र ही गिर जायेंगे। ४९ प्रतिशत के पास तो २० वर्ग मीटर जमीन है। इस समस्या ने हमारी सरकार को सोचने के लिए बाध्य कर दिया है।

इसीलिए प्रवासियों और लाखों उजड़े तथा बेघरबार लोगों को बसाने के लिए सरकार द्वारा एक अल्पकालीन योजना का शुभारम्भ किया गया है जिसके अन्तर्गत अनगिनत शरणालयों का निर्माण दिल्ली, बम्बई तथा अन्य मुख्य नगरों में हुआ है। सिर्फ दिल्ली में ही ३ लाख प्रवासी व्यक्तियों को बसाने के लिए २० योजनाएँ बनाई गई हैं।

---

1. George H. Gray : Housing and Citizenship (1946) p. 90,

2. U. R. Nielsen : Urban Land Policies : Denmark. Housing & Town and Country Pianning, Bulletin 7 (1953) p. 64.

मुख्य केन्द्रों में दीर्घकालीन आवास-कार्यक्रम भी चलाए गए हैं। नगर की सीमा अथवा अविकसित क्षेत्रों में ही मकानों का निर्माण किया जा रहा है। निम्न आय समूहों के लिए भी आवास योजनाएँ आरम्भ की गयी हैं। इसी तरह, देश की प्रमुख औद्योगिक और घने नगरों की दयनीय दशा देख कर अनेक योजनाएँ बनाई गईं जिनमें अल्प-आय वर्ग आवास कार्यक्रम (Low–Income Group Housing Scheme) और मध्यम आय वर्ग आवास कार्यक्रम (Middle Income Group Housing Scheme) के नाम उल्लेखनीय हैं। इन दोनों कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य अल्प आय और मध्यम श्रेणी के लोगों को आवास प्रदान करना है। जो आदमी इस योजनान्तर्गत मकान बनवाना चाहता है उसे आर्थिक सहायता दी जाती है। अल्प आय वर्ग आवास कार्यक्रम का शुभारम्भ तो कई नगरों में हो गया है जिनमें कानपुर, वाराणसी आदि प्रमुख हैं। कानपुर और वाराणसी में तो कितने लोग इस योजना के अन्तर्गत मकान बनवा कर रह भी रहे हैं। वाराणसी में मध्यम श्रेणी आवास कार्यक्रम भी चालू किया गया है। इस योजना के अन्तर्गत जो ऋण लिये जाते हैं उन्हें ३० किश्तों में देना होता है। इस तरह हम देखते हैं कि इस प्रकार के मकानों के बन जाने से नगरों में आवास-समस्या में कुछ कमी अवश्य आयेगी जिससे श्रमिकों को भी लाभ होगा।

पंचवर्षीय योजनाएँ और गृह समस्या (Five Years Plans and Housing Problem) :—

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से भारतवर्ष में तीन पंचवर्षीय योजनाएँ पूर्ण रूप से बन कर लागू हो चुकी हैं और चतुर्थ योजना की रूपरेखा भी लगभग प्रकाशित हो चुकी है। इन सभी योजनाओं में उचित आवास व्यवस्था की गई है और देश में मकानों की कमी को पूर्ण करने का प्रयत्न किया गया है। इन योजनाओं में करीब-करीब सभी क्षेत्रों में सभी वर्गों के लिए मकान बनवाने की व्यवस्था है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में आवास-निर्माण हेतु विशेष ध्यान दिया गया था। बम्बई में २१,७०९, उत्तर-प्रदेश में ५६२९, हैदराबाद में ५१८१ और मध्यप्रदेश में ३४४४ आवास गृह निर्माण की योजना बनाई गई और योजना के अन्त तक लगभग १५ लाख मकानों का निर्माण हो चुका था; अर्थात् इस योजना काल में औद्योगिक आवास, कम आय वाले लोगों के लिए आवास, पुनर्वास आवास तथा केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा आवासों की कुल संख्या ७ लाख ४० हजार सार्व-जनिक क्षेत्र में तथा ७ लाख ५० हजार निजी क्षेत्र में थी।

इतने मकान बन जाने से लोगों को थोड़ी राहत अवश्य मिली लेकिन आवास-समस्या का यह कोई सर्वोत्तम या पूर्ण हल नहीं था। भारत की आबादी दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है जिससे आवास की समस्या मुँह बाए खड़ी है और ऐसा अनुमान है कि कुछ ही दिनों में जनसंख्या दुगुनी हो जायेगी। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए ही दूसरी योजना बनाई गई जिसमें सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में मकानों की संख्या में वृद्धि करने का निश्चय किया गया। इस योजना में १२० करोड़ रुपए खर्च करने और १९ लाख मकान बनाने की व्यवस्था की गई। इंससे यह साफ स्पष्ट होता है कि द्वितीय योजना में सरकार की तरफ से आवास-समस्या के समाधान की समुचित व्यवस्था की गई थी लेकिन योजना की परिसमाप्ति तक समस्या का पूर्ण समाधान न हो सका।

तीसरी योजना में आवास और शहरी विकास कार्यक्रमों के लिए १४२ करोड़ रुपये रखे गए हैं। इसके अतिरिक्त, यह भी आशा है कि जीवन बीमा निगम भी आवास-कार्य के लिए लगभग ६० करोड़ रुपये देगा।

तीसरी योजना में सम्मिलित किए गए आवास-कार्यक्रमों के अतिरिक्त कोयले और अभ्रक की खानों में काम करने वालों, अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के लिए मकान बनाने के कार्यक्रम भी शुरू किए जायेंगे और अनेक केन्द्रीय मन्त्रालय भी अपने-अपने आवास-कार्यक्रम आरम्भ करेंगे। मोटे तौर पर यह अनुमान है कि तीसरी योजना के दौरान मन्त्रालयों के आवास-कार्यक्रमों के अन्तर्गत ९ लाख मकान बनाए जायेंगे जब कि दूसरी योजना में कुल ५ लाख मकान बनने थे। आवास और अन्य निर्माण कार्यों पर तृतीय योजना में लगभग ११२५ करोड़ रु० की निजी पूँजी लगने का अनुमान है।

तृतीय योजना में औद्योगिक कर्मचारियों के लिए भी मकान की व्यवस्था की गई है। औद्योगिक श्रमिकों के लिए मकान बनाने के हेतु सहायता देने की योजना १९५२ से चल रही है। इस योजना के अन्तर्गत दूसरी योजना के अन्त तक लगभग १ लाख मकान बनाए जा चुके थे और ४० हजार मकान निर्माणाधीन थे।

श्रमिकों का उद्योगों की उन्नति, उसकी कार्यकुशलता आदि पर काफी प्रभाव पड़ता है। अतः उनके आवास-स्थिति में सुधार न किया जाय तो औद्योगिक कुशलता और उत्पादकता पर असर पड़ेगा। इसलिए नए और पुराने उद्योगों के लिए ऐसा प्रबन्ध करना होगा कि श्रमिकों के लिए मकान बनाना उन्हें वित्तीय और अन्य दृष्टियों से साध्य जान पड़े और वे आवास-समस्या हल करने में प्रभावशाली योगदान कर सकें। यह सुझाव है कि एक

नियत परिदत्त पूँजी (उदाहरणार्थ २० लाख रु० या अधिक) वाले प्रतिष्ठानों के लिए यह जरूरी कर दिया जाय कि वे अपने श्रमिकों के लिए आवश्यक कुल मकानों में से आधे स्वयं १० वर्ष की अवधि में बना लें। जहाँ मालिक सीधे मकान नहीं बनवा सकते, वहाँ सरकार या आवास-मण्डल मकान बनाने का काम हाथ में ले। ऐसे मामलों में मालिकों को मकान बनाने की लागत का एक भाग चुकाना होगा।

इसी प्रकार, हम देखते हैं कि तृतीय योजना में कम आय वालों के लिए भी मकान की व्यवस्था पर विशेष कदम उठाने का प्रस्ताव है। कम आय वालों के मकान बनाने की योजना १९५४ में प्रारम्भ की गई थी। तब से ८५ हजार ऋण मंजूर किया जा चुका है और दूसरी योजना के अन्त तक लगभग ५३ हजार मकान बनाए जा चुके थे। तीसरी योजना में यह व्यवस्था है कि समाज के निर्धन वर्ग, जिनकी वार्षिक आय १८०० रु० या इससे कम है, इस योजना से लाभ उठा सकें। यह प्रस्ताव है कि स्थानीय निकायों (Local Bodies) को रियायती दर पर लम्बी अवधि के लिए ऋण दिए जाँय और ये निकाय निर्धन वर्ग के लिए किराए के मकान बनवाएँ। निर्धन वर्गों की आवास-सहकारी समितियों को भी इसी प्रकार की सहायता दी जा सकती है। यह विचार है कि जब कम आय वाले वर्गों को विभिन्न संस्थानों से मकान बनाने के लिए धन मिलने लगेगा तब सरकार द्वारा दिए जाने वाले धन का उपयोग अधिकतर निर्धन वर्ग के लिए होगा।

(घ) विएना में आवास (Housing in Vienna) :—विएना के आवास-कार्यक्रम ने समस्त विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। प्रथम विश्व युद्ध के समय आस्ट्रिया में कोई नियोजन नहीं था। मुख्य नेताओं के निरन्तर प्रयास के बावजूद कोई सार्वजनिक आवास-गृहों का निर्माण नहीं हो पाया था। किसी भी पाश्चात्य नगर की तुलना में विएना का आवास-स्तर निम्न था। १९३४ तक जब कि देश ने अपने कार्य-क्रम में काफी सफलता प्राप्त कर ली थी, जनसंख्या का दो तिहाई भाग एक या दो कमरे में रहता था। इसका विस्तृत विवरण इस प्रकार है—६३८६ व्यक्ति रसोईघर में रहते थे; १ लाख १६ हजार लोग या तो एक कमरे में अथवा एक कमरे और एक रसोईघर में रहते थे; ६ लाख ८ हजार चार व्यक्ति एक कमरे और एक रसोईघर में रहते थे। बड़े मकानों में तीन कमरे से (जिसमें रसोईघर भी सम्मिलित है) अधिक कमरा नहीं था। सिर्फ ३६ प्रतिशत लोगों के यहाँ स्नान-गृह और ३३ प्रतिशत लोगों के यहाँ पानी निकलने की नाली थी। भारी संख्या में लोग निचले कमरे में रहते थे जिनकी दीवालें नम रहती थीं और

जहाँ वायु तथा प्रकाश का बहुत कम ही दर्शन होता था। गन्दी बस्तियों से नगर भरा पड़ा था और उनके किराए भी बहुत कम थे।

द्वितीय विश्व-युद्ध के कुछ पूर्व तक बड़े मकान बहुत कम थे। इसलिए जब नये-नये मकान बनने लगे तो लगभग पाँच वर्ष का बिलम्ब हो गया। इस बीच, अनेक पुराने मकान या घटिया किस्म की इमारतें पुरानी पड़ गईं। युद्धोपरांत देश में गरीबी फैल गयी। करेंसी का मूल्य घट कर १४४०० पर पहुँच गया। भवनों का मूल्य भी दुगुना हो गया। फलस्वरूप निजी उद्योगों ने भवन-निर्माण रोक दिया और कमरों की इतनी कमी हो गई कि लोग एक साथ मिल कर रहने लगे।

ऐसी भयंकर परिस्थितियों से गुजरने के पश्चात नगर ने एक महत्वपूर्ण आवास-कार्यक्रम आरम्भ किया। सन् १९२०–३४ के मध्य नगर में ६२ हजार स्वच्छ और हवादार मकानों का निर्माण हुआ। कार्यक्रम का सबसे अधिक विवादास्पद अंग, इसकी आर्थिक नीति थी। सरकारी सहायता के अतिरिक्त जनता के चन्दों से कुछ साधन प्रयुक्त किए गए। शेष को करों (Taxes) द्वारा उन्नत किया गया।

नये मकानों के किराए युद्ध-पूर्व की अपेक्षा अधिक थे। जब बेरोजगारी तीव्रता से बढ़ी तो राज्य सरकार की आय में कमी आ गई जिससे उसने भी अपनी मदद में कटौती की। फलतः भवन-निर्माण कार्य शिथिल पड़ गया। प्रभावशाली व्यवस्था के बावजूद कार्यक्रम रद्द कर दिया गया।

इतिहास में पहली बार निम्न आय समूहों ने जो पहले अति घृणित एवं गन्दे मकानों में रहते थे, अपने को उन मकानों में पाया जो स्वच्छ ही नहीं वरन् कलात्मक रूप से भी आकर्षक और अति सुन्दर थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि अब विएना में बहुत ही मनमोहक और स्वच्छ मकान बनाए गए हैं।

(ङ) बुल्गेरिया में आवास निर्माण (Housing Construction in Bulgaria) :—आवास निर्माण क्षेत्र में बुल्गेरिया अग्रगण्य है। यहाँ प्रत्येक परिवार को रहने के लिए मकान देने तथा प्रत्येक नागरिक को आवश्यकतानुसार क्षेत्र प्रदान करने का उत्तरदायित्व सरकार पर है। एतत्संबंधी सुविधा प्रदान करना यहाँ के सरकार का प्राथमिक कर्त्तव्य है।

द्वितीय महायुद्ध के निकटवर्ती समय में कुछ राजनीतिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के कारण इस देश में मकानों की काफी कमी हो गई थी। आधुनिक अन्वेषणों के पश्चात भी पाया गया है कि उपनगरों (Suburbs) में आवास गृहों की संख्या कम है और जो हैं वे भी संतोषप्रद और रहने योग्य नहीं हैं। सन् १९४६ की जनगणना से पता चलता है कि बुल्गेरिया में नगरों में सिर्फ ५ वर्गमीटर क्षेत्र ही एक नागरिक के लिए आवास-निर्माण हेतु उपलब्ध था।

सरकार द्वारा बनाए गए मकानों के अतिरिक्त प्रत्येक नागरिक जो मकान के मूल्य का १।३ भाग अदा कर सकता है, राज्य सरकार से २।३ भाग ऋण (Loan) के रूप में ले सकता है। इस तरह हम देखते हैं कि भवन-निर्माण का विस्तृत कार्य नित्य हो रहा है जो निरन्तर बढ़ता ही रहेगा और ऐसा अनुमान है कि १९८० तक आठवीं बुल्गेरियन साम्यवादी दल के अधिवेशन के निर्देशन के अनुसार, सामान्य तौर पर हर नागरिक को १६ वर्ग मीटर आवास क्षेत्र उपलब्ध हो जायेगा।

इस तरह विस्तृत रूप में बन रहे मकान जो सिर्फ नगरों में ही नहीं वरन् ग्रामों में भी बन रहे हैं, यह सिद्ध करते हैं कि इस देश का हर तीसरा मकान नया है। जहाँ तक ग्रामीण क्षेत्रों का संबंध हैं, इधर २० वर्षों में लगभग ५ लाख मकानों का निर्माण हो चुका है जो साफ़, स्वच्छ और स्वास्थिकीय (Hygienic) हैं। साथ ही साथ यह भी प्रयत्न किया जा रहा है कि नगरों और ग्रामों में जो थोड़ा-सा अन्तर रह गया है, वह भी शीघ्रातिशीघ्र समाप्त हो जाय।

एक बात ध्यान देने योग्य है कि केवल मकान बनाना ही महत्वपूर्ण कार्य नहीं है। अतः यह भी ध्यान रखा जाता है कि निर्मित मकान सुखदायक भी हों। १९४६ में, नगरों में हमें मकानों के दो स्वरूप परिलक्षित होते हैं। सिर्फ ७० प्रतिशत शहरी मकानों में ही आवश्यक सुविधाएँ थीं जब कि १० वर्ष पश्चात ही इनमें ९४ प्रतिशत तक वृद्धि हो गई।

बुल्गेरिया के नवीन मकानों का विशिष्ट स्वरूप यह है कि उनकी नियोजित योजना पूर्ण विकसित है और अब मकानों में एक स्नानागार या कौआस (Shower) भी सम्मिलित है। पश्चिमी यूरोप के मकानों की दशा का निरीक्षण करना एक बहुत ही रुचिकर विषय होगा। 'न्यू हीमट' (Neue Heimat) नामक एक पत्रिका ने सन् १९६४ में लिखा है कि १९६३ में इटली में केवल ३५ प्रतिशत मकानों में स्नानागार अथवा कौआस थे जबकि बेल्जियम में सिर्फ २५ प्रतिशत थे। स्नानागार और फौव्वारों सहित मकानों की सर्वाधिक संख्या इंग्लैंड में थी जिनकी प्रतिशत संख्या ६४ थी। यह विश्वसनीय तुलना निर्देशों को पूर्ण करने के लिए हमें प्रेरणा प्रदान करती है।

बरामदा सहित बुल्गेरियन मकानों में रहने के लिये यथेष्ठ कमरे होते हैं। अधिकांश मकानों में एक या दो शयन कक्ष, भोजन बनाने के लिए एक बड़ा कमरा होता है। अधिकतर नये मकानों में रहने के पास ही भोजनालय होता है जिससे यह सुविधा हो जाती है कि खाने की मेज को भली-भाँति सुसज्जित कर दिया जाता है।

व्यापक रूप से मकानों के निर्माण ने यह आवश्यक बना दिया है कि नए तरीके की नयी प्ररचना (Design) अपनायी जाय और तदनुरूप ही उसका कार्यान्वियन हो। अच्छे प्ररचनाओं के प्रयोग और शिल्प-विधि के अतिरिक्त भवनों में निर्माण के सुन्दर तत्व प्रक्रिया को तीव्र कर देते हैं। इसीलिए हम देखते हैं कि पूर्वनिर्मित (Prefabricated) तत्वों का उत्पादन काफी मात्रा में हो रहा है। विशेष शोध-संस्थाएँ और प्ररचना संगठन, बुल्गेरिया के आधुनिक भवनों से संबन्धित समस्याओं, निर्माण-योजनाओं और वस्तुओं का अध्ययन कर रहे हैं।

बुल्गेरियन नगरों का गृह निर्माण आन्दोलन इस तथ्य से जाना जाता है कि यह अपने में एक स्वतंत्र वस्तु है लेकिन वह पूर्ण मकानों की जटिलताओं का प्रतिनिधित्व करती है। मूलभूत नगरों में रहने के क्वार्टर प्रायः उद्योगों के अनुचित प्रभावों से दूर और भवन विकास तथा अचल सम्पत्ति के रूप में विभक्त हैं। भवनों के क्षेत्र गलियों और वृक्षों से घिरे हुए हैं और वहाँ यथेष्ट प्रकाश भी मिल जाता है। उसी से सटा हुआ क्लब, स्कूल, शिशु-पाठशालाएँ और दुकानें भी हैं।

मकानों के वाह्य रूप का जहाँ तक संबंध हैं, बुल्गेरिया के शिल्पी मितव्यय, प्रसन्नदायक और आशाप्रद भवन-निर्माण कला प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। उनकी भवन-निर्माण कला बड़ी-बड़ी खिड़कियों, प्रकाश और छाया की उपयुक्त व्यवस्था, विशेष रंग और कलात्मकता द्वारा प्रतिलक्षित की जाती है। वहाँ भवनों के पर्यावरण पर भी ध्यान दिया जाता है ताकि हर मकान को उपयुक्त प्रकाश एवं स्वच्छ वायु मिल सके।

बुल्गेरियन भवन निर्माताओं के रचनात्मक प्रयत्नों की सराहना स्वदेश के साथ ही साथ विदेशों में भी की गयी है। वहाँ की प्ररचना (Design) के आधार पर विश्व के अनेक देशों में भवन निर्माण हो रहे हैं। सीरिया, ईराक, अल्जीरिया, ट्यूनिशिया, मोरक्को, घाना, माली आदि देशों को जो अभी औपनिवेशिक बेड़ियों (Colonial Bondage) से मुक्त हुए हैं, यहाँ के भवन-निर्माण कला से काफी मदद मिल रही हैं। इस प्रकार यह राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री और सुदृढ़ कर रहा है।[1]

---

1. N. Kamenov: Housing Construction in Bulgaria. Article Published in the. 'Leader'. Dated. 6. 9. 1964.

अध्याय १२

नियोजन

(Planning)

नियोजन एक साधन है जिसके माध्यम से किसी भी व्यवस्थित सामुदायिक प्रक्रिया के अन्तिम लक्ष्य में सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक सम्बन्ध का निर्देशन किया जाता है। नियोजन सदैव आशावादी होता है। यह वर्तमान से भविष्य की ओर चलता है लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वह भूत पर विचार ही नहीं करता।

नियोजन के कई प्रकार और स्तर के साथ ही उसकी अनेक विशिष्ट प्रविधियाँ (Techniques) भी होती हैं। कुछ नियोजन तो सरकारी अभिकरणों (Agencies) द्वारा तथा कुछ गैरसरकारी कर्मचारियों द्वारा (नागरिक समूहों) होता है। कुछ नियोजन टुकड़ों में होते हैं जिनका सम्बन्ध सामुदायिक जीवन के सूक्ष्म विकास-क्रम से होता है। इसके विपरीत, कुछ नियोजनों का विस्तार पूर्ण सामुदायिक स्तर पर होता है। कभी नियोजन संशोधित और पुनर्वासित (Rehabilitative) होता है और कभी निरोधक। कभी इसका सम्बन्ध पूर्ण रूप से नवीन सामुदायिक संरचना के निर्माण से होता हैं। इसके अतिरिक्त भूमि-प्रयोग के साथ ही साथ मानवीय और संस्थागत साधनों के प्रयोग के लिए भी नियोजन होता हैं। नियोजन अल्पकालिक अथवा दीर्घकालिक, व्यक्तिगत अथवा सार्वजनिक—दोनों हो सकता है।

प्राथमिक नियोजन दो प्रकार के होते हैं—

भौतिक नियोजन (Physical Planning) और सामाजिक नियोजन (Social Planning)। भौतिक नियोजन स्थानीय प्रतिमानों, भूमि के उपयोगों तथा भवन और संचार के साधनों की व्याख्या करता है एवं सामाजिक नियोजन समस्त समूहों में पारस्परिक संपर्क स्थापित करने का प्रयत्न करता है। भौतिक नियोजन का मूल कार्य निश्चयात्मक रूप से नगरों को

मनुष्यों के रहने लायक बनाना अर्थात् सुनियोजित ढंग से हर सुविधा प्रदान करना है। सुनियोजित नियोजन का विचार कोई नवीन विचार नहीं है बल्कि इसकी झलक अनेक प्राचीन सुनियोजित नगरों में देखी जा सकती है। रोम का सुनियोजन तो सर्वविदित है। रोम के समस्त उपनिवेशों में एक ही प्रकार की रूपरेखा परिलक्षित होती है। रोम अपने उत्तम सड़क-व्यवस्था के कारण ही अधिक प्रसिद्ध है। रोम के नियोजकों ने पानी की नालियाँ, आमोद-प्रमोद के साधन, अखाड़ा, स्नानगृह आदि की सुविधाएँ प्रस्तुत की हैं। नगरों एवं भवनों की आयोजना को उन्होंने इस पूर्णता पर पहुँचा दिया था कि एक 'आदर्श आयोजना' का प्रादुर्भाव हो गया जिसका दूसरे उपनिवेशों में अनुसरण किया गया।

सामाजिक नियोजन भी अत्यन्त प्राचीन है। हाँलाकि प्रथम सामाजिक नियोजन के उद्देश्य में कोई समानता नहीं थी। भिन्न-भिन्न उद्देश्यों को लेकर सामाजिक सुधार किये गये थे। यूनानियों और फोएनिशियन्स ने व्यापार के लिए, रोमवासियों ने सैनिक किलों के लिए और सिकन्दर ने महानता के प्रतीक-स्वरूप अलेक्जेन्ड्रिया का नियोजन किया। कान्सटैन्टाइन (Constantine) ने बाइजेन्टियम (Byzantium) का पुर्निर्माण इसलिए कराया ताकि उसका साम्राज्य प्रशासकीय केन्द्र हो जाय। इसी तरह, निरंकुश राजतन्त्र के समय राजाओं ने अपने महलों के अन्दर ही आवासीय नगरों (Residential Cities) का नियोजन करवाया था। कहने का तात्पर्य यह है कि उस समय के अधिकांश सामाजिक नियोजन की प्रकृति या तो आर्थिक थी या सैनिक।

हर प्रकार के नियोजित नगरों में अमेरिका का प्रारम्भिक इतिहास बहुत ही महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में सामाजिक नियोजन का अद्वितीय उदाहरण फिल्डेलफिया में मिलता है जो अपने संस्थापकों के महान् उद्देश्यों का संकेत करता है। धार्मिक विचार (बेथलहम, पेन्सिलवेनिया), राष्ट्रीय समूह (जर्मनी के शहर, हालैंड, पेन्सिलवेनिया, मिचिगन) और सामाजिक आन्दोलनों (न्यू हारमोनी, इण्डियाना) ने अमेरिकी नगरों की स्थापना में काफी मदद की है। जहाँ तक भौतिक नियोजन का सम्बन्ध है, वर्तमान समय में वाशिंगटन, प्रारम्भिक नियोजित नगरों में से एक का संकेत करता है।

पुनरुत्थान युग में भवन निर्माताओं ने जिनमें अधिकांश इटली-निवासी थे, आदर्श नगरों और काल्पनिक विचारों को विकसित करना प्रारम्भ किया जो सैनिक उपयोगिताओं से अधिक सम्बद्ध और आधुनिक विचारों से बहुत कम समानता रखते थे। ये कल्पनावादी चिन्तक अपने समय के बहुत बड़े आदमी थे।

उदाहरणार्थ पैलेडियो (Palladio), वसारी (Vasari) और दा संगैलो (da 'Sangallo) । पामोनोवा (Palmonova) नगर का नियोजन, वेनिस के महान भवन-निर्माता स्कैमोज्जी (Scamozzi) ने किया था और नियोजन के विचारों को वास्तविक रूप में परिणित करने का यही सर्वप्रथम प्रयास था । यह नगर अभी भी वर्तमान है । इस नगर की मूल रूपरेखा और सड़क बनाने के तरीकों का वर्णन अभी भी सुरक्षित है लेकिन इसे कभी भी महत्ता प्रदान नहीं की गई ।

औद्योगिक क्रान्ति से अस्थिरता आ गयी । दरिद्र श्रमिक वर्गों की उत्पत्ति ने नगर-प्रशासन को पूर्ण रूप से अनियन्त्रित और उन समस्याओं से असम्बद्ध पाया जिसे उन्होंने उपस्थित कर दिया था । नगरों के विस्तार का कोई तारतम्य न रहा और समस्त उपनगरों (Suburbs) की उत्पत्ति अनियन्त्रित और आकस्मिक रूप से हुई । यद्यपि आज प्रत्येक बड़े नगर में नियोजन-परिषद और मास्टरप्लान की योजना है तथापि हम लोग आंशिक नियोजन की प्रक्रिया के मध्य में हैं । अभी तो राष्ट्रव्यापी सङ्गठित नियोजन का समय आना शेष है ।

नगर नियोजन
(City Planning)

नगरों का नियोजन २० वीं शताब्दी की घटना है । इतिहास के पन्नों में अनेक प्रकार के नियोजन और सामुदायिक पुनर्निर्माण के उदाहरण मिलते हैं । इजिप्ट और मेसोपोटामिया के आरम्भिक नगरों की रूपरेखा चतुर्भुजी (Rectangular) थी । १९ वीं शताब्दी में, पेरिस के छायेदार चौड़े मार्गों और पार्कों का विकास नियोजन एवं पुनर्निर्माण का फल था । इसी प्रकार, फिल्डेलफिया के सड़कों का नियोजन १६८२ में हुआ था और १७९१ में एक फ्रांसीसी भवन निर्माता और नियोजक एल० इनफैन्ट (L' Enfant) ने वाशिंगटन की रूपरेखा बनाई थी । अमेरिका के नगरों में यह नियोजन सर्वोत्तम माना जाता है । स्वीडेन में १८७४ में एक विस्तृत नगर नियोजन कानून बनाया गया जो सम्भवतः अपने प्रकार का प्रथम कानून था । नगर नियोजन के सम्बन्ध में अमेरिका में प्रमुख रूप से सर पेट्रिक गीड्स, जार्ज० एस० बकिंघम, कार्ल लोहमन इत्यादि विद्वानों का नाम उल्लेखनीय है । भारतवर्ष में नगर नियोजन करने का श्रेय केवल गीड्स को है । मध्यप्रदेश का गौरवशाली नगर इन्दौर इन्हीं के सुझाव का परिणाम है ।

नगर नियोजन के तत्त्व
(Essentials of City Plans)

क्षेत्रीय नियोजन की ही भाँति नगर नियोजन करते समय सर्वप्रथम यह विचार किया जाता है कि बाजारों और व्यक्तियों की स्थापना कहाँ की जाय ? इसलिए नियोजन में, सड़क, रेल, जल-व्यवस्था, स्थानीय गमनागमन की सुविधा, सामान चढ़ाने और उतारने तथा यात्रियों को एक जगह से ले आने और ले जाने की सुविधाओं का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त, नियोजन का सम्बन्ध खेल के मैदानों, खुले स्थानों, सार्वजनिक केन्द्रों और अन्य सार्वजनिक भवनों, विशिष्ट क्षेत्रों की व्यवस्था, औद्योगिक और व्यापारिक बस्तियों की स्थिति, स्वच्छता, भूमि का उपविभाजन और आवासीय क्षेत्रों के विकास से भी होना चाहिए। नगर नियोजन के लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं :—

(i) सड़क योजना ।

(ii) सार्वजनिक केन्द्र ।

(iii) खेल के मैदानों और पार्कों की व्यवस्था ।

(ix) व्यापार, वाणिज्य, औद्योगिक और आवासीय प्रयोग के लिए भूमि का विभाजन ।

(v) सार्वजनिक भवनों तथा निजी आवासों की रूपरेखा और निर्माण पर नियन्त्रण ।

(vi) मार्गों और रेलवे स्टेशनों की योजना ।

(vii) मोटर कार और बस की योजना ।

(viii) हवाई-यातायात और पानी के जहाजों की योजना ।

(ix) खराब चीजों को हटाने की योजना ।

(x) गैस और विद्युत-विस्तार की योजना ।

(xi) यातायात के नियन्त्रण की योजना ।

(xii) पड़ोस के विकास की योजना ।

(xiii) गन्दी बस्तियों को हटाने की योजना ।

नियोजन की प्रक्रिया और संगठन
(Planning Procedure & Organization)

नगर नियोजन करते समय सर्वप्रथम एक मास्टर प्लान बनाया जाता है। एक नगर नियोजक(City Planner) की नियुक्ति होती है और एक योजना आयोग (Planning Comission) गठित की जाती है। तत्पश्चात् नगर का

नक्शा, उसकी सांख्यिकी, करों का निर्धारण, जनगणना तथा समुदाय की दशाओं आदि की एक विस्तृत सूची बनाई जाती है जिनको जाँच, क्षेत्र (Area) की परीक्षा करके की जाती है। उसके बाद का अगला कदम वांछित और ईप्सित लक्ष्यों को निर्धारित करता है।

पूर्ण नियोजन विश्वसनीय सूचना पर आधारित होता है। इसीलिए प्रभावकारी योजनाओं के विकास के लिए एक गवेषणात्मक कार्यक्रम आरम्भ किया जाता है जो समय-समय पर सूचना देता रहता है। इस कार्यक्रम में उन आवश्यक तथ्यों का विस्तार से पता लगता है जो नियोजन में प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। नियोजन के लिए संगठन भी अत्यावश्यक है क्योंकि संगठित समूह के रूप में व्यक्ति ही नियोजन प्रस्तावों का सूत्रीकरण, नियमीकरण और और कार्यान्वियन करता है। इसीलिए इसे सामुदायिक नियोजन कहते हैं। अधिकांश नगरों में योजना आयोग होते हैं जो नगरीय विकास के लिए समस्त योजनाओं का निर्माण करते हैं। अमेरिका में इस प्रकार के २५०० आयोग हैं। एक योजना आयोग में ५ या ६ व्यक्ति होते हैं जिनकी नियुक्ति महापौर (Mayor) या नगर परिषद (City Council) करती है। अक्सर ये लोग सामान्य बुद्धि के होते हैं और इनका तकनीकी ज्ञान (Technical Knowledge) सीमित होता है। कभी-कभी तो इन आयोगों का चुनाव ही नहीं होता है सिर्फ़ कागजों पर ही इनका नाम होता है।

कुछ नगरपालिकाओं में (Municipalities) ये आयोग सरकारी विभाग के अन्तर्गत होते हैं जिसके कर्मचारी अच्छे विशेषज्ञ होते हैं और उसका आर्थिक बजट भी अच्छा होता है। इन आयोगों का सम्बन्ध नियोजन कार्यक्रमों के विकास से होता है। नगरपालिकाएँ ही अक्सर पेशेवर सलाहकारों की नियुक्ति करती हैं। इसके अतिरिक्त, नगर नियोजन में सामान्य लोगों की भी सलाहें ली जाती हैं। योजना आयोग को योजनाओं के कार्यान्वियन का सामान्यतः कोई अधिकार नही होता है। इसीलिए इनकी सेवाएँ या तो सलाहकार के रूप में या तकनीकी रूप में होती हैं। अमेरिका में एक अन्य प्रकार का नियोजन समूह होता है। वहाँ के नगरों में एक या अधिक सामुदायिक परिषदें स्वैच्छिक संस्थाएँ होती हैं जिनमें विभिन्न स्थानीय संगठनों के प्रतिनिधि रहते हैं। इन परिषदों का कार्य नियोजन और तथ्य एकत्रित करना है। इनमें कोई भी प्रशासकीय अधिकारी नहीं होता। अक्सर इन सामुदायिक परिषदों में धार्मिक, व्यावसायिक अथवा शैक्षिक संगठनों के प्रतिनिधि होते हैं। इन लोगों का कार्य-क्षेत्र स्वास्थ्य, मनोरंजन, आवास, सरकार, शिक्षा अथवा अन्य सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित चीजों तक होता है। द्वितीय विश्व-युद्ध में,

न्यूयार्क में लगभग १०० सामुदायिक परिषदें (Councils) थीं जिनका कार्य भौतिक तथा सामाजिक नियोजन करना था । एक राष्ट्रीय नगरीय संघ (National Urban League) था जिसका सम्बन्ध मुख्य रूप से नीग्रो समस्या से था ।

क्षेत्रीकरण
(Zoning)

यह नियोजन का वह भाग है जिसमें वांछित भागों के निवासी अधिक रूचि रखते हैं । वे अपनी विशेष स्थिति बनाए रख कर अपने भूमि-मूल्यों को सुरक्षित रखना चाहते हैं । भूमि-मूल्यों को सुरक्षित रखना ही वास्तव में क्षेत्रीकरण का उद्देश्य होता है ।

नगरों का क्षेत्रीकरण विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार ही होता है, अर्थात् भारी उत्पादन क्षेत्र, वाणिज्य सम्बन्धी क्षेत्र, आवासीय क्षेत्र सब अलग-अलग होते हैं । आजकल क्षेत्रीकरण की जो प्रवृत्ति है वह मुख्यतया बर्जेस तथा हायट (Burgess & Hoyt) के सिद्धांत पर आधृत है । नगर का मुख्य केन्द्र सार्वजनिक आवास, होटल, थियेटर, दुकान और दफ्तरों के लिए सुरक्षित रहता है । संक्रमणकालीन क्षेत्र (Zone in Transition) उसी तरह छोड़ दिया जाता है जैसा वह रहता है जब तक कि वह गन्दी बस्तियों को दूर करने वाली योजनाओं से प्रभावित नहीं होता । तीसरा क्षेत्र एककक्षीय मकानों में बँटा होता है । चतुर्थ भाग, बहुनिवास के लिए होता है । इसके पश्चात जो भाग शेष बच रहता है वह एक परिवार वाले मकानों के लिए सुरक्षित होता है । क्षेत्रीकरण से सम्बन्वित नियमों का वैधानिक महत्त्व होता है और उसमें यह दर्शाया जाता है कि पूर्ण समुदाय को यह अधिकार है कि वह भूमि के अतिक्रमण (Encroachment) की सुरक्षा करे । क्षेत्रीकरण कानूनों की तीन मुख्य विशेषताएँ हैं[१] :—

(i) पहली विशेषता तो यह है कि इन कानूनों का निर्माण इस उद्देश्य को ध्यान में रख कर किया जाता है कि भूमि किसे दी जाय अर्थात् वह औद्योगिक, व्यापारीय अथवा आवासीय उद्देश्य के लिए हो अथवा अन्य किसी उद्देश्य के लिए । अतः ये कानून भूमि के उपयोग पर नियंत्रण रखते हैं ।

(ii) दूसरे कानून की विशेषता नगर के किसी भाग के भवनों की ऊँचाई तथा भवन-निर्माण कला से संबंधित है ।

---

1. N. P. Gist, & L. A. Halbert: Urban Society. Crowell Company, New York. (1956) p. 484.

(iii) तीसरा कानून भवन द्वारा अविकृत स्थान से संबंधित होता है।

आवासीय क्षेत्रों को कई भागों में विभाजित किया जा सकता है। यह उसके आकार तथा मूल्य पर आधृत होता है। ये आवासीय क्षेत्र या तो संयुक्त हो सकते हैं या एकाकी अथवा बहुनिवासीय। जो क्षेत्र गैर-आवासीय (Non-residential) होते हैं उन्हें भी दफ्तर, दुकान और भण्डार (Stores) के लिए प्रादेशिक क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है। इसी प्रकार औद्योगिक क्षेत्रों को भी हल्के उत्पादन क्षेत्रों (जैसे कपड़े बनाने के केन्द्र) और भारी उत्पादन क्षेत्रों (लौह और आटोमोबाइल उद्योग) के रूप में विभाजित किया जा सकता है। जहाँ तक भवनों की ऊँचाई पर नियंत्रण का प्रश्न है, यह तो क्षेत्रीकरण आयोग (Zoning Commission) का एक महत्वपूर्ण कार्य हो गया है।

जब क्षेत्रीकरण कानूनों का क्षेत्र काफी विस्तृत और व्यापक होता है तो पूँजीपति बड़ी-बड़ी इमारतों का निर्माण नहीं करवा पाते क्योंकि स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से वे हानिकारक होते हैं। इन बड़ी-बड़ी इमारतों के कारण पास-पड़ोस और आमने-सामने के भवनों में प्रकाश, हवा आदि यथेष्ट रूप में नहीं पहुँच पाती। इसके अतिरिक्त इनसे अन्य भवनों के सामने का भाग भी छिप जाता है। बहुत सी बड़ी-बड़ी इमारतें इतनी नजदीक बनी होती हैं कि अनेक घर रहने योग्य नहीं रह जाते क्योंकि वहाँ प्रकाश आदि कभी भी पहुँच ही नहीं सकता। ऐसी इमारतें सामान्यतया नगरों के मुख्य व्यापार केन्द्रों में ही होती हैं जैसे वाराणसी में चौक क्षेत्र। इसी तरह, इलाहाबाद और लखनऊ में भी चौक का हिस्सा इतना घना है, इमारतें इतनी ऊँची-ऊँची हैं कि बड़ी मुश्किल से आस-पास के मकान वालों को यदा-कदा सूर्य देवता का दर्शन होता है। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यह पड़ता है कि लोगों का स्वास्थ्य गिर जाता है। लेकिन ऊँची-ऊँची इमारतों के न बनने से संबंधित कानून बन जाने के कारण इस पर नियंत्रण हो गया है। बड़े-बड़े नगरों में तो इस कानून का पालन बड़ी ही कड़ाई के साथ किया जाता है जिससे आलीशान भवनों के निर्माण पर नियंत्रण लग गया है। इसीलिए आजकल जो नये-नये मकान बन रहे हैं उन्हें सामने और बगल में क्रमशः ७ फीट और ३ फीट जमीन छोड़ना आवश्यक हो गया है ताकि यथेष्ट मात्रा में प्रकाश और हवा आ-जा सके, बगल वाले मकान में अन्धेरा न रहे तथा सबको स्वच्छ वायु प्राप्त हो।

आधुनिक महानगरों (Metropolis) में क्षेत्रीकरण आवश्यक है। एक विकसित और फैलते हुए नगर के लिए पुनः क्षेत्रीकरण (Rezoning) अत्यावश्यक है कि क्योंकि निरन्तर परिवर्तित हो रही दशाओं के कारण काफी

अव्यवस्था फैल जाती है। किसी निश्चित आवासीय क्षेत्र में दुकान खोलने के लिए पुन: क्षेत्रीकरण वांछनीय हो सकता है। नगरीय पुनर्वासन (Rehabilitation) के लिए पुन: क्षेत्रीकरण आवश्यक होगा।

पड़ोसी नियोजन

(Neighbourhood Planning)

सामुदायिक नियोजन में पड़ोस का काफी महत्व है। पास-पड़ोस में काफी संबंध तथा सामुदायिक योजना और पड़ोस में एकता किस प्रकार स्थापित की जाय, इस प्रश्न पर विद्वानों में मतभेद है।

पेरी[1] (Perry) ने पड़ोसी नियोजन के लिए एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव का सूत्रीकरण किया था। उनके नियोजन की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित थीं :—

(i) भौगोलिक रूप से पड़ोस एक आवासीय क्षेत्र होगा जिसमें एक प्राथमिक पाठशाला की आवश्यकता होगी। क्षेत्र का आकार उसकी जनसंख्या पर आधृत होगा।

(ii) जिस प्रकार शरीर की धमनियाँ (Arteries) पूरे शरीर में रक्त संचार करके अपना जाल बिछाये रहती हैं उसी प्रकार पड़ोस भी चारो तरफ से सड़कों द्वारा घिरा रहेगा। कोई भी उस क्षेत्र के अन्दर न जा पायेगा। हर पड़ोस के लिए अलग-अलग स्थानीय सड़के रहेंगी।

(iii) जहाँ बहुत अधिक सड़कें (Arterial Streets) रहेंगी वहाँ एक या अधिक विक्रय केन्द्र की स्थापना होगी।

(iv) जो स्कूल होगा वह समस्त शैक्षिक और सामाजिक क्रियाओं के लिए केन्द्र-बिन्दु की भाँति होगा; अर्थात् इनसे संबंधित समस्त कार्य स्कूल में ही संपादित होंगे। स्कूल से डेढ़ मील से अधिक दूरी पर कोई भी परिवार नहीं रह सकेगा।

(v) प्रत्येक पड़ोस में खेल के मैदान, मनोरंजन-गृह, पार्क आदि की स्थापना की जायेगी।

लेकिन पेरी के इस नियोजन की काफी आलोचना की गई। उस पर यह दोषारोपण किया जाता है कि पड़ोसी इकाई (Neighbourhood Unit) सामाजिक पूर्णता और विभेद पर अधिक ध्यान नहीं देती है। लोगों को एक

---

1. C. Perry : Neighborhood and Community Planning. Regional Survey of New York and Its Environs, Vol, 7 (1929) Quoted by Gist and Halbert; p. 485

साथ रखने की यह एक योजना है, छोटे शहरों की दशाओं को नगरों में विकसित करने का अवास्तविक प्रयास है। इसके अतिरिक्त, यह सामाजिक जीवन में ऐच्छिक संघों की महत्ता पर अधिक ध्यान नहीं देती। लेकिन इन आलोचनाओं के बावजूद पेरी के पड़ोसी इकाई का काफी महत्व एवं प्रभाव है, विशेषतया नवीन समुदायों के नियोजकों में।

इंगलैंड में आवास सम्बन्धी नवीन योजना में पड़ोस की सुविधाओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसमें बच्चों के लिए शिशु-शालाएँ (Nurseries), स्वास्थ्य केन्द्र, बाल-कल्याण क्लिनिक, विभिन्न वयों के बच्चों के लिए खेल के मैदान, पुस्तकालय, रेस्ट्राँ, सामुदायिक केन्द्र, तरण ताल (Swimming Pool) आदि की व्यवस्था है।[1]

पड़ोसी नियोजन का स्मरणीय प्रयोग ब्रिटेन के एक नवविकसित शहर स्टीविनेज (Stevenage) में देखा जा सकता है। इस शहर में छः पड़ोसों का नियोजन हुआ था जिनमें से प्रत्येक में नर्सरी स्कूल, थोड़ी ही दूर के अन्दर हर आवश्यक चीजों की दुकान, मातृ और शिशु चिकित्सालय, मनोरंजन क्लब, विभिन्न वय के बच्चों के लिए खेल के मैदान की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त, वयस्कों के लिए टेनिस खेलने की व्यवस्था और क्रिकेट के मैदान तथा वृद्धों के लिए सार्वजनिक बगीचे की व्यवस्था है जिसमें फूल-पत्तियाँ लगी हुई हैं। नियोजकों का यह विचार था कि इस योजना के फलस्वरूप लोगों में एकता की भावना जाग्रत होगी और लोग एक समुदाय के हो जायेंगे लेकिन यह लक्ष्य कहाँ तक पूर्ण हुआ, यह अभी अस्पष्ट है।

नए नियोजित नगर
(New Planned Cities)

(क) गार्डेन नगर के नियोजन का विचार :—

जब आधुनिक औद्योगिक नगरों की असह्यनीय दशाओं पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो कुछ सुधारवादियों ने पूर्ण सुधारवादी हलों का समर्थन किया जिसने परम्परात्मक अर्थ में समस्त नगरों को समाप्त कर दिया। प्राचीन योजनाओं में से एक योजना में नगरों के पूर्ण पुनर्विकास की योजना बनाई

---

1. "Survey of Community Facilities and Services in the U. K." Housing and Town and Country Planning. Bulletin 5 (1951) pp. 31–41. Quoted by Gist & Halbert, p. 486.

गई। सन् १८४९ में जे० एस० बकिंघम (J. S. Buckingham) ने एक पुस्तक[1] प्रकाशित किया जिसमें नगर निवासियों के पूर्ण सुधारवादी विकेन्द्रीकरण (Decentralisation) का समर्थन किया गया था। बकिंघम एक केन्द्रीय नगर की स्थापना करना चाहते थे और उनका यह मत था कि कम्पनियाँ तथा अन्य गन्दे व्यापारों (जैसे पशु-बाजार आदि) की स्थापना नगर के बाहर हो। केन्द्रीय नगर एक वर्ग मील क्षेत्र तथा दस हजार से भी अधिक जनसंख्या को घेरता था। लेकिन यदि इस योजना को कार्यान्वित किया गया होता तो ग्रेट ब्रिटेन के समस्त नगर लुप्तप्राय हो गए होते और देश हजारों छोटे-छोटे शहरों में विभाजित हो गया होता। अतः कुछ चिन्तकों का ध्यान इस तरफ आकर्षित हुआ जो पूर्ण विकेन्द्रीकरण के पक्ष में थे। फलतः नवीन योजनाओं का विकास हुआ जिनमें अति सघन जनसंख्या वाले नगरों से कुछ जनसंख्या कम करने तथा एक ऐसे नियोजित समुदाय की स्थापना करने को कहा गया जिसमें ग्रामीण एवं नागरिक, दोनों जीवन सम्मिलित हों।

लेकिन इस विचारधारा का प्रबल विरोध करने वाले हॉवर्ड (Ebenezer Howard) थे जो गार्डेन नगर के जन्मदाता हैं। इनके कुछ विचार अत्यन्त सुधारमूलक हैं। उन्होंने सम्प्रदायवादी समाजवाद (Communal-Socialism) का समर्थन किया। उनका कहना था कि गार्डेन नगर के भूमि का स्वामी कोई एक व्यक्ति न होकर समुदाय होगा। भूमि का मूल्य बढ़ने पर उससे जो लाभ होगा, उसे प्राप्त करने वाला भी समुदाय ही होगा। इस विचारधारा का अनुसरण करते हुए महापालिका ने दो नगर—लिचवर्थ (Letchworth) (१९०३) और वेलविन (Welwyn) (१९२०), बनवाए। लन्दन से इन दोनों जगहों पर एक घण्टे के अन्दर ही जाया जा सकता है। उपरोक्त दोनों नगरों में वेलविन नगर नियोजन की काफी महत्ता है। इसी नगर के कारण हॉवर्ड महोदय की विचारधाराओं को साकार रूप दिया गया था। वेलविन नगर की जनसंख्या २१ हजार है। ये लोग ४३९६ मकानों में रहते हैं। ६०० एकड़ भूमि में तो खेल-कूद के लिए मैदान है जहाँ ३६ दुकानें, एक थियेटर, एक वृत्ति-चित्र-गृह (Motion Picture House), १२ गिरजाघर और २८ क्रीड़ा क्लब हैं।

हावर्ड के गार्डेन नगर की योजना के मुख्य पहलुओं में प्रथम यह व्यवस्था है कि केन्द्रीय नगर के निकट ही विस्तृत कृषि-क्षेत्र खरीदा जाय। इसके अतिरिक्त, क्षेत्र के विभिन्न भागों में औद्योगिक, व्यापारीय और आवासीय

1. "National Soil and Practical Remedies".

विकास की भी व्यवस्था है । समुदाय की जनसंख्या लगभग ३० हजार से अधिक न हो । नगर कृषि-क्षेत्र से घिरा रहेगा और वाह्य समुदाय के अतिक्रमण से उसकी सुरक्षा करेगा । नगर के भीतर, मकानों के साथ ही साथ पार्कों, खेल के मैदानों तथा कुछ खुले स्थानों की पर्याप्तता रहेगी ।

हावर्ड के इस क्रांतिकारी विचारधारा से इंगलैंड और विदेशों में देशव्यापी प्रभाव पड़ा । विभिन्न देशों में अनेक नवीन समुदायों की उत्पत्ति हुई और कुछ तो अभी नियोजन के प्रारम्भिक चरण पर हैं । कुछ समुदाय केन्द्रीय नगर के पड़ोस में तथा कुछ मुख्य नगरों में स्वतन्त्र रूप से अवस्थित हैं ।

(ख) ब्रिटेन का 'नया शहर' (Britain's 'New Towns') :—१९४६ के नया शहर अधिनियम ने ब्रिटेन के बड़े नगरों के समीप ही १४ नये शहरों (Towns) को विकसित करने का अधिकार प्रदान कर दिया । इनमें से ८ शहर लन्दन के निकट, २ न्यू कैसेल के निकट और अन्य एक-एक ग्लैसगो (Glasgow), एडिनबर्ग (Edinburgh), कार्डिफ (Cardiff) और लिसेस्टर (Leicester) में विकसित किये गये । जब ये शहर बन कर तैयार हो जायेंगे तो यहाँ २५ हजार से लेकर ६० हजार व्यक्ति रहेंगे ।

यद्यपि अधिकांश नए शहरों की स्थिति, एक बड़े नगर से २० से लेकर ३० मील की दूरी के अन्दर ही है फिर भी उनकी रूपरेखा उपनगर खंडों (Commuter's Suburbs) की भाँति नहीं हैं । उनको आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए, भीड़युक्त केन्द्रीय नगरों से उद्योगों को हटा कर यहाँ बसाने का प्रयत्न किया गया है ताकि इससे (उद्योगों की स्थापना से) स्थानीय निवासियों को नौकरी दी जा सके । इसके लिए औद्योगिक संस्थानों को विशेष रूप से प्रेरित किया गया है ।

नवीन शहरों में क्राली (Crawley) को जो लन्दन से २९ मील दक्षिण में है, उदाहरणस्वरूप देखा जा सकता है । यहाँ का नियोजन उद्योग, दुकान आवास तथा मनोरंजन को ध्यान में रख कर किया गया है । आवास-गृह ऐसे स्थान पर बनाए गए हैं जहाँ से व्यक्ति अपने दफ्तर, गिरजाघर, केन्द्रीय बाजार को पैदल ही या साइकिल से थोड़ी ही देर में पहुंच सकता है । शहर की सड़क-व्यवस्था अर्द्धव्यासवत् (Radial) है जो मुख्य-मुख्य स्थानों को एक दूसरे से संबंधित करती है । नए मकानों और बँगलों की रूपरेखा भिन्न-भिन्न है ।

(ग) अमेरिका में नियोजित नगर (Planned Cities in the United States) :—२० वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही अनेक नियोजित नगरों और शहरों का आविर्भाव हुआ है । सन् १९३८ में हुए एक सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि अमेरिका में १४४ नियोजित समुदाय थे जिनमें आधे से

अधिक औद्योगिक संस्थानों द्वारा, $\frac{1}{4}$ व्यक्तिगत खर्च से, $\frac{1}{6}$ सरकारी एजेन्सियों द्वारा तथा शेष का निर्माण दानी व्यक्तियों तथा अन्य संगठनों के द्वारा हुआ था।[1] इनके अतिरिक्त, अनेक अन्य नवीन समुदायों का निर्माण द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान तथा उसके पश्चात हुआ। हर्शी (Hershey) और पेनसिलवेनिया शहरों का निर्माण औद्योगिक संस्थानों मेरीलैन्ड (Maryland), ओहियो (Ohio) और विसकान्सिन (Wisconsin) का निर्माण सरकारी एजेन्सियों तथा न्यूयार्क के जंगली पहाड़ी बगीचों का निर्माण रसेल सेज फाउन्डेशन (Russel Sage Foundation) द्वारा हुआ है।

अमेरिका में सर्वप्रथम गार्डेन नगर रैडबर्न (Radburn) और न्यू जर्सी (New Jersey) था। सामाजिक रूप से इसका लक्ष्य एक वास्तविक समुदाय की स्थापना और भौतिक रूप से मोटर यातायात कम करना था लेकिन इस संपूर्ण योजना को निरन्तर चालू रखने में एक बहुत बड़ी बाधा सामने आई जिसके कारण समस्त उच्च आशाएँ पूर्ण नहीं हो पाईं। न्यूयार्क के केन्द्रीय क्षेत्र में रैडबर्न हालाँकि बहुत अच्छा और मनोहर उपनगर है फिर भी यहाँ की जनसंख्या २५०० से भी कम है जब कि इसके संस्थापकों ने २५ हजार आवासों की व्यवस्था की थी।

(घ) अन्य देशों में नए नगर (New Cities in Other Countries) इंग्लैन्ड और अमेरिका के अतिरिक्त अन्य देशों में भी नये नगर बसाए गए हैं। स्टाकहोम (Stockholm) के समीप ही एक नए नगर की स्थापना की गई है जहाँ ८५ हजार लोगों के रहने का प्रबंध है। इस समुदाय या नगर का नाम वैलिंगबी (Vallingby) है। इसकी स्थापना भी गार्डेन नगर के रूप में हुई है। जितने भी मकान हैं, वे सब एक लाइन में और बहुत ही कम दूरी पर बने हैं जहाँ पैदल ही आया-जाया जा सकता है। इस शहर का नियोजन और विकास स्टाकहोम की नगरपालिका द्वारा हुआ है।

इसराइल (Israel) में भी बहुत से नियोजित नगर हैं जिनमें सबसे महत्वपूर्ण तेल अवीव (Tel Aviv) है। यह इसराईल की राजधानी भी है। संगठित श्रमिकों द्वारा तेल एवीव और हाइफा (Haifa) के निकट ही श्रमिकों के लिए गार्डेन नगर विकसित किये गये हैं। ये शहर इस प्रकार

---

1. A. C. Comey, & M. S. Wehrly : "Planned Communities". Urban Planning & Land Policies, National Resources Committee, 2 : 110 (1939)

बनाए गए हैं कि यहाँ ५ से लेकर १५ हजार तक लोग रह सकें। एक बात ध्यान रखने योग्य है कि अधिकांश मकान सहकारी समितियों के अधीन हैं।

आस्ट्रेलिया की राजधानी कैनबरा (Canberra) की भी स्थापना, सन् १९१३ में पूर्ण रूप से नए नगर के रूप में की गई। इस नगर की जो रूपरेखा बनाई गई उसमें सार्वजनिक भवन, आवास, उत्पादन, केन्द्र, दुकान और मनोरंजन के क्षेत्रों को स्पष्टतः अलग-अलग अंकित किया गया है।

(ङ) भारतवर्ष में गार्डेन नगरों की संख्या (Number of Garden Cities in each State of India) :—उपरोक्त पाश्चात्य गार्डेन नगरों पर दृष्टिपात करने के पश्चात् भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में विकसित नवीन गार्डेन नगरों का भी अध्ययन अपेक्षित हो जाता है। भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में कितने गार्डेन नगर हैं, इस संबंध में बहुत ही सामान्य दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जायेगा। सामान्य गणना के लिए, उन समस्त शहरों को मानक गार्डेन शहरों (Standard Garden Towns) की योजना के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है जिनकी जनसंख्या ५० हजार से कम है। लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं होता है। ५० हजार या इसके आस-पास की संख्या भी निर्धारित हो जाती है। मानक गार्डेन शहरों की स्थापना आन्ध्र, बिहार, बम्बई, केरल, मध्यप्रदेश, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, उत्तरप्रदेश और पश्चिमी बंगाल के उर्वर समतलों में ही हो सकती है। इसके विपरीत आसाम, बम्बई, जम्मू-कश्मीर, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, हिमालय की तराई, हिमाचल प्रदेश, और मणिपुर जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में मानक गार्डेन शहरों की स्थापना संभव नहीं है। इन स्थानों पर जो शहर होंगे वे छोटे होंगे। इसी तरह राजस्थान के उजाड़-खंडों में भी मानक गार्डेन नगरों की स्थापना संभव नहीं है।

गार्डेन नगर का मूल्यांकन
(Evaluation of Garden City)

प्रारंभ में तो नए नगरों की स्थापना और विकास पर काफी ध्यान दिया गया लेकिन बाद में उत्साह में कमी आ गई। इससे यह स्पष्ट हो गया कि अभी हाल में ही बना गार्डेन नगर, जो पूर्ण नियोजन पर आधारित है, नगरीय समस्याओं का कोई हल नहीं था बल्कि अधिक सुविधाप्राप्त अल्पसंख्यकों से सिर्फ छुटकारा मात्र था।

कुछ लोगों को इस पर आपत्ति है कि कल-कारखानों की स्थापना से शहरों व नगरों को नुकसान पहुँचा लेकिन यह सर्वथा एकांगी दृष्टिकोण है।

कारखानों के बन जाने से अनेक लाभ भी हुए हैं। ये कारखाने कुछ उद्योगों को छिन्न-भिन्न कर देते हैं, श्रमिक बस्तियों से भीड़ को कम करते हैं और निम्न आय समूह को अच्छे क्वार्टर प्रदान करते हैं। जो जहाँ काम करते रहते हैं, वे वहीं रहने लगते हैं और इस प्रकार वे यातायात की समस्याओं तथा आने-जाने के किराए से अपने को मुक्त कर लेते हैं। यद्यपि इन सब सुविधाओं को प्रदान करने का तात्पर्य मदद करना ही है फिर भी यह कोई सामान्य हल नहीं है। उद्योगों का पूर्ण विकेन्द्रीकरण न तो संभव ही है और न वांछनीय ही।

आजकल के जो नगर हैं उन्हें वास्तविक रूप के गार्डेन नगरों से कोइ भी मदद नहीं मिलती। धनिक वर्ग शांत और अच्छे मकानों में रहने के लिए नगरों को छोड़ देते हैं लेकिन वे नगर से ही धनोपार्जन करते रहते हैं और इसका खर्च अन्य जगहों पर होता है। इस प्रकार, नगर में करों की हानि होती है क्योंकि जब लोग नगर के बाहरी क्षेत्र में जाने लगते हैं तो भूमि-मूल्य में कमी आ जाती है जिसका प्राथमिक प्रभाव सर्वोत्तम क्षेत्रों पर पड़ता है। बड़े-बड़े व्यापारी अपना कार्य समाप्त करने के पश्चात नगर छोड़ देते हैं और इस प्रकार सार्वजनिक मामलों में भाग लेने के अधिकार एवं अवसरों से वंचित हो जाते हैं। कुछ लोग जो अपने चरित्र, शिक्षा, और अनुभवों द्वारा सार्वजनिक दफ्तरों (Public Offices) में स्थान पा जाते हैं, वे अन्यत्र रहने के कारण अयोग्य हो जाते हैं।

नियोजन की विशिष्ट समस्याएँ
(Special Planning Problems)

(१) **मनोरंजन के लिए नियोजन** (Planning for Recreation) :— आजकल लोगों को मनोरंजन की सुविधा प्रदान करने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति का उत्तरदायित्व सामुदायिक हो गया है। इसीलिए सामुदायिक नियोजन कार्यक्रम में मनोरंजन प्रदान करने की व्यवस्था सम्मिलित कर ली गयी है। कुछ तो नगर योजना में ही हैं और अन्य की व्यवस्था समुदाय में विभिन्न संघटनों द्वारा होती है। अनेक नगरों में तो सरकारी (Official) मनोरंजन विभाग होते हैं जिसके कर्त्ता-धर्त्ता इस बात के लिए उत्तरदायी होते हैं कि अवकाश के समय लोग क्या करें। अनेक बड़े-बड़े केन्द्रीय नगरों में तो म्यूनिसिपल बोर्ड होते हैं जिनका कार्य खाली समय में लोगों को सुविधाएँ प्रदान करने के लिए मनोरंजन के हेतु नियोजन करना होता है।

सामुदायिक नियोजन का एक महत्वपूर्ण पहलू, सार्वजनिक पार्कों और

खेल के मैदानों का विकास करना हो गया है। पश्चिमी देश के अधिकांश बड़े-बड़े नगरों में पार्क हैं जिनका उपयोग सर्वसाधारण स्वच्छतापूर्वक करते हैं। छोटे-छोटे नगरों में भी पार्क हैं जिनमें अधिकांश बहुत बड़े और पूर्ण रूप से सुसज्जित हैं। पार्कों के विस्तार के संबंध में एक निश्चित मापदण्ड नहीं है। न्यूयार्क में १ लाख ३४ हजार एकड़ लेकिन मुख्य नगर में २२ हजार एकड़ क्षेत्र है। शिकागो के केन्द्रीय नगर-क्षेत्रों में ६३ हजार एकड़ भूमि-क्षेत्र है लेकिन मुख्य नगर में ६६०० एकड़ क्षेत्र हीं है। इसी तरह, लन्दन के पार्क ७ हजार ८०० एकड़ क्षेत्र में हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि टोलिडो (Toledo), नैशविली (Nashvile) में पार्क के लिए संपूर्ण क्षेत्र का २५-३० प्रतिशत एकड़ क्षेत्र है। मीनिएपोलिस (Minneapolis), न्यूयार्क, बोस्टन और ओमाहा (Omaha) में १०-१५ प्रतिशत और शिकागो, फिल्डेल्फिया, बाल्टीमूर और सेन्ट लुइस में ५-१० प्रतिशत एकड़ क्षेत्र है। लन्दन के संपूर्ण क्षेत्र का लगभग १० प्रतिशत भाग पार्क के लिए है।

१८ वीं, १९ वीं, तथा २० वीं शताब्दी में भी बड़े-बड़े पार्कों के निर्माण और उसे प्रभावशाली दर्शनीय स्थान बनाने पर विशेष बल दिया गया। अत्यधिक आधुनिक समय में तो छोटे-छोटे पड़ोसों में भी पार्कों और खेल के मैदानों का विकास किया गया है। यदि किसी भी क्षेत्र को विकसित करना रहता है तो सर्वप्रथम उस क्षेत्र को अनेक छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित किया जाता है और फिर उस क्षेत्र में एक पार्क और एक खेल के मैदान की व्यवस्था की जाती है। प्रत्येक क्षेत्र में पार्क और खेल के मैदान बन जाने से यह सुविधा हो जाती है कि प्रत्येक घर के बच्चे सुबह-शाम वहीं खेलते हैं और इस प्रकार सड़कों पर खेलना बन्द हो जाता है। फलस्वरूप दुर्घटनाएँ भी नहीं हो पातीं। दूसरी सुविधा यह होती है कि क्षेत्र का वातावरण अत्यन्त साफ-सुथरा हो जाता है जिससे खुली हवा और प्रकाश मिलती रहती है।

कुछ नगरों में सामुदायिक मनोरंजनात्मक कार्यक्रम का नियोजन एक विशिष्ट मंडल (Board) अथवा विभाग द्वारा होता है जिसमें प्रशिक्षित कर्मिक (Personnel) होते हैं। ये ही मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों का निर्देशन करते हैं। मनोरंजनात्मक कार्यों में संगीत, ड्रामा, खेल-कूद, लोक-नृत्य, प्रकृति-अध्ययन, दस्तकारी आदि कार्यक्रम सम्मिलित रहते हैं।

(२) परिवहन नियोजन (Planning Transportation) :—

(क) सड़क-व्यवस्था (The Street System) :—परिवहन नियोजन करते समय सर्वप्रथम प्रश्न यह उठता है कि सड़कों का निर्माण उसकी रूपरेखा तथा उसमें परिवर्तन किस प्रकार किया जाय ? सड़कों के

शोर-गुल, गन्दगी और दुर्घटनाओं में किस प्रकार कमी की जाय ? भारी संख्या में ट्रकों और मोटर-गाड़ियों के चलने से यह आवश्यक हो गया है कि दो तरफा तथा स्थानीय सड़कों का निर्माण किया जाय। यही कारण है कि अधिकांश नगरों में दो तरफा सड़कों का (एक तरफ से आने तथा दूसरी तरफ से जाने) निर्माण करके एक तरफे यातायात (One Way Traffic) की व्यवस्था की जा रही है। इससे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि सड़क दुर्घटनाएँ कम हो जायेंगी और सड़कों पर भीड़ न एकत्रित हो पाया करेगी।

(ख) हवाई अड्डा (Airports) :—कुछ वर्षों से हवाई-यातायात के शीघ्रगामी निर्माण ने नियोजन की यह समस्या उत्पन्न कर दी है कि हवाई-अड्डे की रूपरेखा, उसकी स्थिति और प्रबन्ध किस प्रकार हो ?

(ग) मोटर गाड़ी ठहरने का स्थान (Parking Facilities) :— किसी भी नगर में सड़क पर से भीड़ कम करने के लिए आवश्यक है कि सड़क साफ हो, सवारियों के ठहरने का स्थान यथायोग्य एवं निश्चित हो। भारतवर्ष में तो चूंकि मोटरगाड़ियाँ अधिक संख्या में नहीं हैं इसलिए यहाँ उनके ठहरने के लिए कोई खास जगह नहीं निर्धारित है। लेकिन अमेरिका आदि देशों में निर्धारित स्थान अत्यन्त आवश्यक हैं क्योंकि वहाँ मोटर-गाड़ियों की भरमार है। इसलिए वहाँ इसकी सुविधा प्रदान करना अपेक्षित है। गाड़ियों के जगह-जगह रूकने के लिए एक निर्धारित स्थान अवश्य होना चाहिए। जब तक यह सुविधा नहीं प्रदान की जायेगी लोग भीड़युक्त स्थान या केन्द्रीय व्यापार क्षेत्र में जाने से बचना चाहेंगे। अतः इसी को ध्यान में रख कर इस सुविधा की व्यवस्था की जा रही है।

(३) प्रतिरक्षा नियोजन (Planning for Defense) :—१९४५ में जब हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिरा तो अनगिनत नगर नष्ट हो गए, लाखों व्यक्ति मौत के घाट उतर गए। तब उस समय यह प्रश्न उठा कि नगरों की प्रतिरक्षा किस प्रकार की जाय ? कोई भी व्यक्ति इस प्रश्न का संतोषप्रद उत्तर न दे सका। अतः उसी समय प्रतिरक्षा नियोजन की व्यवस्था हुई। अधिकांश नियोजन का तात्पर्य शरण-गृह प्रस्तुत करना तथा आक्रमण के समय किस प्रकार सुरक्षा की जाय, इस संबन्ध में निर्देशन देना था।

लेकिन हाइड्रोजन बम के आविष्कार हो जाने पर यह स्पष्ट हो गया कि आक्रमण के समय रक्षात्मक शरण-गृह बेकार हैं। उनकी इतने शक्तिशाली बम से रक्षा की ही नहीं जा सकती। इसका सिर्फ एक ही उपाय है कि जब बम

गिराया जाय तो लोग नगरों से जान बचा कर भाग जाँय। सुरक्षा संबन्धी जितनी भी योजनाएँ थीं, वे सब बेकार सिद्ध हो गईं।

(४) **नगरीय पुनर्वासन** (Urban Rehabilitation) :—अधिकांश नगर गन्दी बस्तियों से भरे पड़े हैं। अस्वास्थ्यकर क्षेत्रों का विस्तार होता जा रहा है जिससे शरीरिक दुर्बलता आती जा रही है। अतः गन्दी बस्तियों और अवस्वास्थयकर क्षेत्रों को हटाने के लिए ही पुनर्वासन हो रहा है। अमेरिका में तो कुछ नगरों ने बहुत ही बड़े पैमाने पर पुनर्वासन-कार्यक्रम अपनाया है जिनमें से पिट्सबर्ग (Pittsburgh) नगर का कार्यक्रम मुख्य है। इस नगर के केन्द्रीय स्थल में अत्यन्त स्पष्ट जीर्णता थी। एक शताब्दी पूर्व सड़कों की जो योजना बनाई गई थी, वह आधुनिक सवारियों के लिए अनुपयुक्त थी। व्यापार क्षेत्र के चतुर्दिक आवासीय भाग थे जो पूर्ण रूप से गन्दी बस्ती हो गये थे। कहने का तात्पर्य इतना है कि यह नगर अत्यन्त ही जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था।

अतः इस परिस्थिति से छुटकारा पाने के लिए नगर पुनर्विकास अधिकारी (Urban Redevelopment Authority) ने पुनर्वास कार्यक्रम योजना बनायी जिसमें गाड़ियों के खड़ा होने के लिए स्थानों तथा सार्वजनिक पार्कों की व्यवस्था की गई। गन्दी और घनी बस्तियों को गिरा दिया गया ताकि दफ्तरों के लिए नए भवन बन सकें। बाढ़ रोकने के लिए बाँध बनाए गए। सिगरेट कम पीने की योजना कार्यान्वित की गई। १९५० के मध्य तक समस्त मुख्य भागों को नवीन रूप दे दिया गया।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि कस्बों और नगरों के व्यवस्थित विकास के लिए नगर नियोजन अनिवार्य है। इस दिशा में पहला कदम यह उठाना होगा कि भूमि उपयोग के निर्धारण के लिए अन्तरिम सामान्य योजना बनाई जाय और विकास कार्य भूमि-उपयोग के इस प्रतिरूप के अनुरूप ही हो। इसके बाद शहरी और प्रादेशिक विकास के लिए मास्टरप्लान बनाये जायँ। प्रारम्भ में मास्टरप्लान महानगरों, राजधानियों, बन्दरगाह वाले नगरों, नए औद्योगिक केन्द्रों और उन बढ़ते हुए नगरों के लिए बनाये जाने चाहिए जहाँ स्थिति और बिगड़ने की सम्भावना हो।

वर्तमान नगरों के विकास और नए नगरों का निर्माण करते समय प्रादेशिक विकास का दृष्टिकोंण अपनाना बहुत महत्वपूर्ण है। आर्थिक और सामाजिक विकास में उचित सन्तुलन रखने तथा विकासोन्मुख शहरी समाज के जीवन में अधिक सांस्कृतिक एकता और सामाजिक समग्रता के लिए भी यह बहुत आवश्यक है। दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं तथा वातावरण में सुधार

करने से सब नागरिकों के शहरी जीवन में सहचारिता की भावना का उदय होने में बड़ी सहायता मिलेगी।

इस क्षेत्र में नगरपालिकाएँ ही सामाजिक स्तर पर शहरी क्षेत्रों के विकास के लिए आवश्यक सेवाएँ उपलब्ध करने तथा आवास विस्तार और रहन-सहन की स्थिति में सुधार का काम सफलतापूर्वक निभा सकती हैं। लेकिन अधिकांश नगरपालिकाओं में इन कामों को निभाने की क्षमता नहीं है। अतः उन्हें अधिक साधन और कर्मचारी देकर तथा उनके कार्य-क्षेत्र का विस्तार करके अधिक सूक्ष्म बनाना चाहिए। जिन शहरी क्षेत्रों की वर्तमान परिधि इन समस्याओं को हल करने के लिए अपर्याप्त है, वहाँ उसे बढ़ा देना चाहिए। बढ़ते हुए शहरों के मामलों में यह वांछनीय है कि शुरू से ही उन्हें छोटे के बजाय बड़े नागरिक क्षेत्र दिए जायँ जिससे इन शहरों के निकटवर्ती गाँवों का भी उनके साथ ही साथ समन्वित रूप में विकास हो और बाद में विभिन्न कार्य-क्षेत्रों के कारण कठिनाइयाँ पैदा न हों। वर्तमान परिकल्पना के अनुसार जब अधिकांश नगरों की अपनी विकास योजनाएँ होंगी और उन्हें राज्यों की विकास योजनाओं में मिला दिया जायगा तो इनके विकास में और सुविधा हो जायेगी।

अध्याय १३

नगर की सामाजिक अवधारणा

(The Social Concept of the City)

पिछले अध्याय में हमने देखा कि नियोजन दो प्रकार का होता है—भौतिक तथा सामाजिक। किसी भी नगर का नियोजन करते समय साधारणतया उसके भौतिक पक्ष पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है और सामाजिक नियोजन की उपेक्षा कर दी जाती है। इसीलिए लेविस ममफोर्ड (Lewis Mumford) ने वर्तमान नगर नियोजन के प्रति असन्तोष प्रकट किया है। अपनी अमर कृति 'नगरों की संस्कृति (Culture of Cities) में उन्होंने आधुनिक नगर नियोजकों (Town Planners) की कटु आलोचना की है। उनका कथन है कि इन नियोजकों को नगर के सामाजिक कार्यों और उसकी सामाजिक परिभाषा का स्पष्ट ज्ञान नहीं है जिससे पिछले कुछ दिनों से आवास और नियोजन अवरुद्ध सा हो गया है। ये लोग नगर के भौतिक रूप को ही ध्यान में रख कर नगर नियोजन करते हैं। उनकी रूचि, लम्बी-चौड़ी सड़कों, गगनचुम्बी अट्टालिकाओं तथा स्वच्छ आवास निर्माण में रहती है। वे समझते हैं कि यदि इन सब कठिनाइयों को दूर कर दिया जायगा तो जनता को राहत मिलेगी और इस प्रकार उनके द्वारा किए गए नियोजन की काफी प्रशंसा होगी लेकिन उन्हें यह कभी संदेह भी नहीं होता कि वे बड़ी भयंकर भूल कर रहे हैं; उनके नियोजन में भारी कमियाँ हैं, अपव्यय और गलत निर्देशन है। इस प्रकार जितने भी अनुसंधान किए गए सभी में नगर नियोजन का आधार नितान्त भौतिक तथ्य को ही माना गया है। ममफोर्ड इसका खंडन करते हैं। वे कहते हैं कि नगर सिर्फ भौतिक तथ्यों का ही पुंजमात्र नहीं हैं बल्कि वह तो एक सामाजिक संस्था है। अरस्तू, प्लेटो, सर टॉमस मूर से लेकर राबर्ट ओवेन (Robert Owen) आदि स्वप्नदर्शी (Utopian) चिन्तकों ने इस संबंध में महत्वपूर्ण प्रकाश डाले हैं जो काफी संतोषजनक भी है।

एलिजाबेथ युग के एक पर्यवेक्षक (Observer) जॉन स्टो (John Stow) ने नगर की एक उपयुक्त परिभाषा देते हुए कहा है कि मनुष्य उपयोगिता और ईमानदारी के लिए नगरों एवं राष्ट्रमंडल (Commonwealth) में एकत्रित होते हैं। नगर में अनेक दूर की शक्तियाँ और प्रभाव स्थानीय शक्तियों और प्रभावों से परस्पर मिल कर एक नए रूप को जन्म देते हैं। यहाँ अनेक प्रकार के व्यक्ति आकर मिलते हैं। उनमें परस्पर अन्तःक्रिया होती है, सामाजिक संपर्क स्थापित होता है। अतः नगर में परस्पर वार्तालाप और संपर्क स्थापित करने के कारण व्यक्ति पाशविकता से दूर हो जाता है, उसमें आचारण की कोमलता, मानवता तथा न्याय का उदय हो जाता है। इसी कारण वे अपने बराबर वालों तथा छोटों से अपने अधिकारों का आदान-प्रदान सुगमता से कर लेते हैं तथा अपने बड़ों की आज्ञा मानने में समर्थ होते हैं। उनमें अनुशासन भावना आ जाती है। इसलिए नगर निवासी भली-भाँति उपयुक्त व्यवस्था के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं और उन्हें अच्छी बौद्धिक शिक्षा दी जा सकती है। यही कारण है कि आज भी हम लोगों के अच्छे व्यवहार को नगरीय कहा जाता है क्योंकि शिष्टता, सौम्यता और अनुशासन की भावना अन्य जगहों की अपेक्षा नगरों में ही अधिक पाई जाती है। यह भी नगर की ही देन है जहाँ व्यक्ति परस्पर साथ रह कर संगठन और सहकारिता की ओर उन्मुख होते हैं।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि नगर प्राथमिक समूहों और उद्देश्यमूलक संगठनों का एक संग्रह है। ये विभिन्न समूह उन आर्थिक संगठनों पर आधृत होते हैं जो उन्हीं के समान सहयोग या जन-नियंत्रित विशेषताओं से आबद्ध होते हैं तथा जिन्होंने स्थायी रूप से सीमित क्षेत्रों में अपना आवास बना लिया है। नगरों में श्रम का सामाजिक विभाजन प्रमुख सामाजिक साधन है जो सिर्फ आर्थिक जीवन को ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की भी मदद करता है। अतः पूर्ण रूप से नगर एक आर्थिक संगठन, एक संस्थामूलक प्रक्रिया, सामाजिक क्रिया का नाटचशाला और सामूहिक एकता का सौन्दर्यात्मक प्रतीक है। एक तरफ यह भौतिक ढाँचा (Frame) है जिसमें आर्थिक एवं घरेलू क्रियाएँ एक दूसरे से आबद्ध हैं तथा दूसरी ओर यह अधिक विशिष्ट क्रियाओं का एक नाटकीय प्रदर्शन तथा मानवीय संस्कृति की उदात्त (Sub limated) इच्छाओं का एक प्रकाशन है। नगर कला को प्रेरणा देने वाली स्वयं एक कला है। वह नाट्यशाला का सर्जक है और स्वयं एक नाट्यशाला है। नगर में ही मनुष्य की उपयोगी क्रियाएँ, संघर्षात्मक और सहयोगी व्यक्तित्वों, घटनाओं, समूहों के जरिए, विरचित और कार्यान्वित (Formulated

and Worked Out) होती हैं तथा महत्वपूर्ण विकास में परिणित हो जाती हैं। व्यक्ति की मूल-प्रवृत्ति का पता नगर के विभिन्न और बहुपक्षीय जीवन से लग जाता है। सामाजिक विषमताओं और संघर्षों के मध्य नगर अपने नाटक का निर्माण करता है जिसका उपनगरों (Suburbs) में नितान्त अभाव रहता है।

अपने सामाजिक दृष्टिकोण में नगर वह सामाजिक ढाँचा है जो एक समान जीवन और एक विशिष्ट सामाजिक नाटक के निर्माण के लिए उचित अवसर प्रदान करने की ओर निर्देशित होता है। अप्रत्यक्ष संगठनों के रूप में चिह्न, प्रतीकों और विशिष्ट संगठनों की सहायता से यह स्वयं नागरिकों के व्यक्तित्वों का पूरक बन जाता है। इस प्रकार, नगर सहयोगात्मक जीवन का सर्वोच्च एवं विषय भौतिक रूप है।

नगर की अवधारणा के संबंध में एक निष्कर्ष यह भी निकाला गया है कि सामाजिक तथ्य प्रारंभिक होते हैं तथा नगर का भौतिक संगठन, उसके उद्योग, बाजार, संचार तथा यातायात के साधन आदि उसकी सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। गत शताब्दी में नगर के विकास के संबंध में भौतिकता (Physical Plant) का अत्यधिक विकास कर दिया गया और आवश्यक केन्द्र जैसे, सरकारी संस्थान, शिक्षा और सामाजिक सेवाएँ आदि उसके सहायक अंग बन गए। परन्तु आज प्रत्येक नगर नियोजन में ये सामाजिक केन्द्र आवश्यक तत्त्व बन गए हैं। विद्यालयों, पुस्तकालयों, नाट्यशालाओं, सामुदायिक केन्द्रों आदि के परस्पर संबंधों का निरूपण आदि नगरीय पड़ोस का वर्णन करते समय आवश्यक हो जाता है।

ममफोर्ड कहते हैं कि यदि नगर के स्वरूप की यही उचित व्याख्या है तो नगर नियोजन के अन्तर्गत किया गया समस्त कार्य अमान्य और अश्रेयस्कर हो जाना चाहिए। नगर में होने वाले आयोजनों का कोई मूल्य नहीं होना चाहिए बल्कि गाँव की झोंपड़ियों में निवास करने वाले व्यक्तियों के कार्यों का इससे अधिक मूल्य होना चाहिए। उन व्यक्तियों द्वारा जो अपने को नगर नियोजक कहते हैं, नगर नियोजन उसी प्रकार है जिस प्रकार कलाकारों के आधार पर रंगमंच का निर्देशन।

गत शताब्दी में, नगरों के भौतिक संरचना के संबंध में हम लोगों ने जो अवधारणाएँ बनाईं, वे उचित नहीं हैं। लोग सामाजिक निर्माण और नगर की सामाजिक क्रियाओं के संबंध में अपनी व्यक्तिगत धारणाएँ रखते हैं। भौतिक परिवर्तन पर दृष्टि रखने के कारण लोग अधिक भवनों के निर्माण के पक्ष में अपने विचार रखते हैं लेकिन शायद वे लोग यह भूल जाते हैं कि सिर्फ

भवनों से ही नगर का निर्माण नहीं होता बल्कि भवनों का उचित नियोजन केवल सामाजिक योजना का एक आवश्यक अंग है।

नगर की रूपरेखा (Design) के आधार पर समूहों के समाजशास्त्रीय सिद्धांत नियोजन पर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं। राजनैतिक संगठनों के मार्ग में एक प्रमुख कठिनाई यह है कि हमने उसे जीवित रखने के लिए आवश्यक भौतिक साधन प्रस्तुत नहीं किए; न तो उचित स्थिति ही प्रदान कर सके और न आवश्यक भवन, हाल, कमरे और सभा-स्थल ही जिससे नगरों में गन्दे हेडक्वार्टर और सैलून खुल गए हैं। औद्योगिक क्षेत्रों में तो संगठनों को राजनैतिक अवसर अभी भी बहुत कम दिए गए हैं।

इंग्लैन्ड में, राजनीतिक पद्धति के नवीन नगरीय सम्मेलनों में वास्तविकता होती है क्योंकि वहाँ सदस्य तथा नागरिक, विशिष्ट भवनों में प्रत्यक्ष रूप से एक दूसरे से मिलते हैं तथा अपने समक्ष सभी समस्याओं पर विचार करने के साथ ही साथ वे अन्य सदस्यों की बात भी सुनते हैं और उस पर अपना निर्णय देते हैं। परन्तु पाश्चात्य जगत ने एक अमूर्त (Abstract) प्रजातांत्रिक राजनीति का आश्रय लिया है और मतदान-केन्द्रों को छोड़ कर उन्हें अन्य कोई आधिकारिक अंग नहीं प्रदान किया है। हम इनमें न तो आवश्यक सभा-भवन प्रदान कर सकते हैं और न स्थायी दफ्तर ही। तब भी हम लोगों ने पड़ोस और सहकारी संगठनों का निर्माण कर के यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि समुदाय के राजनैतिक क्रिया-कलाप अधिक महत्वपूर्ण हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नही है कि राजनैतिक जीवन ने अपने कर्त्तव्यों और क्रिया-कलापों के मध्य परोपजीवी और वैभिन्न्य को उत्पन्न दिया है और सामाजिक इकाई के रूप में नियोजित नए समुदायों को जन्म दिया है जिनमें सामूहिक क्रियाओं के लिए स्थानीय सभा करने वाले कमरे हैं, बाग-बगीचे और प्रभा-वोत्पादक सामूहिक क्रिया-कलाप हैं। फिर भी हमारा उद्देश्य साधारण होना चाहिए। हमें संपूर्ण सामाजिक इकाई की रूप-रेखा तैयार करनी चाहिए। हमें नगरों का रेखांकन अवश्य करना चाहिए। हमें चाहिए कि हम अपनी आर्थिक स्थिति को साधनस्वरूप (Instrumental) भौतिक आधारों पर आँके। शिक्षा और राजनीति पर हम मुक्त हस्त से धन व्यय करें। इसके लिए भिन्न प्रकार की रूपरेखा और चित्रकार (Designer) की आवश्यकता होगी। इसका तात्पर्य यह हुआ कि रंगमंच से हमारा ध्यान नाटक की ओर होना चाहिए तथा सामाजिक क्रियाएँ और सहसंबंध ऐसा होना चाहिए जो नियोजकों का ध्यान आकर्षित करे। इससे नगर नियोजन में स्थिरता आयेगी और शक्ति तथा आर्थिक सहायता का एक बहुत बड़ा भाग अन्य

कलाओं के लिए बचा रहेगा जिससे सफाई-स्वच्छता के स्थान पर कला, आले-खन, भवन-निर्माण, मूर्तिकला, और नाटक आदि को अधिक प्रश्रय मिलेगा।

अतः नियोजन में केवल आवास अथवा आवास खण्डों का ही हाथ नहीं है। इसका प्रमुख तत्त्व नगर है क्योंकि इसी विषय पर सामाजिक संस्था के माध्यम से ही अन्य क्रियाएँ और भवन महत्वपूर्ण हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त नागरिक और समुदाय के मध्य पारस्परिक संबंधों में भी कठिनाई नहीं होगी और सामुदायिक कलाओं का महत्व भी बढ़ जाता है।

उक्त वातावरण और पृष्ठभूमि के निर्माण तथा ओजनात्मक इकाई के रूप में प्रत्येक व्यक्तिगत शक्ति का बौद्धिक विकास और सूझ, नगर निर्माण-कला का मूलमंत्र है।

अध्याय १४

निष्क्रिय औद्योगिक शहर[1]

(The Insensate Industrial Town)

(i) **जनसंख्या का विस्थापन** (Displacement of Population):—समाज पर जितना अधिक प्रभाव मध्यकालीन वैचारिकी (Ideology) का था उतना स्वैच्छिक प्रवृत्ति (Despotic Impulse) का नहीं था। अभी भी सेना, राज्य, सरकार, पूँजीपति व्यवस्था आदि में इसे देखा जा सकता है। समस्त विश्व में राष्ट्रीय नियोजन का प्रतिबिम्ब इस युग में स्पष्ट नहीं रहा। सामंतवादी लोगों ने कुछ ऐसे भवनों का निर्माण करवाया जो कबूतरखाने की तरह थे जिनका पूर्ण विकास १९ वीं शताब्दी में संभव हुआ। १६ वीं शताब्दी में रोम के अनेक होटलों का भी पूर्ण विकास १६ वीं शताब्दी में ही हुआ। इसी प्रकार पेरिस अथवा विएन (Wien) आदि में संगीत नृत्यशाला (Opera House) का उदाहरण भी लिया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि इन नगरों में आर्थिक-समाजिक क्षेत्रों में परिवर्तन होने के बावजूद इन भवनों की रूपरेखा (Design) में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो सका है। वही प्राचीन परिपाटी और रूपरेखा अभी भी विद्यमान है।

धीरे-धीरे उच्च वर्ग का संगठन टूट रहा था। न्यायालयों की उच्च व्यवस्था हो रही थी। प्रत्येक क्षेत्र में कुलीन शिक्षा और संस्कृति के सिद्धान्तों का स्थानान्तरण आर्थिक मूल्यों द्वारा हो रहा था। नये पूंजीपति और उद्योगति पैसा कमाने में लगे थे और वे जीवन के साधारण मूल्यों से पृथक होते जा रहे थे। अशिक्षित व्यक्ति धनी, सट्टेबाज, नई फैक्टरियों के जन्मदाता, महत्वाकांक्षी—सभी व्यक्ति धनोपार्जन की ताक में थे और अवसर मिलते ही उचित एवं अनुचित साधनों द्वारा आगे बढ़ रहे थे। उनमें किसी भी प्रकार का आत्म-नियंत्रण न था।

---

1. Lewis Mumford : Culture of Cities. New York, (1938)

मध्य युग के पूर्व शक्ति और सुख का लक्ष्य मानवीय था क्योंकि उपयोगितावादियों की दृष्टि में भोगमूलक प्रवृत्तियों का कोई विशेष महत्व न था। इसके अन्तर्गत धर्म के प्रति अत्यधिक लालसा और जीवन की आवश्यकताओं को अलग करना ही अपने में एक महत्वपूर्ण लक्ष्य था। अभी तक यन्त्रों का प्रभाव उतना अधिक नहीं पड़ा था और न उसने अन्य क्षेत्रों में ही अपना जाल फैलाया था। कारखाना व्यवस्था में जो नौकरशाही प्रवृत्ति आ गयी थी वह अन्य प्रकार के नियन्त्रणों के उठ जाने में समा गयी जिससे लोग विभिन्न स्थानों को बिना किसी नियन्त्रण के आने-जाने लगे। दूसरी ओर ऐसा प्रतीत होता था कि फ्रान्स की राज्यक्रांति प्रजातन्त्र की और कम से कम मध्यम श्रेणी की विजय थी। सेना का महत्व और सैन्य शिक्षा की अनिवार्यता भी बढ़ रही थी जिससे तत्कालीन नगरों में अत्यधिक भ्रांति आ गयी। जिन नगरों में नई शक्ति और नवीन समाजिक अनुशासन अधिक थे उनमें ही सर्वोत्तम आदर्शों (Norms) का अभाव हो गया। १८२० से लेकर १९०० तक बड़े-बड़े नगरों में एक ऐसी आन्तरिक युद्ध की कल्पना की जा सकती है जो उनके साधनों और शक्ति के अनुरूप ही स्वरूप का निर्माण कर रही थी। उद्योगपति, यांत्रिक आविष्कारकर्त्ता और बैंकर्स (Bankers) ही वास्तव में अच्छाई और बुराई के लिए उत्तरदायी थे। उन लोगों ने एक नवीन नगर को जन्म दिया जिसे डिकेन्स (C. Dickens) ने कोकटाऊन (Coketown) की संज्ञा दी। पाश्चात्य देशों के प्रत्येक नगर पर कम या अधिक मात्रा में कोकटाऊन का प्रभाव था।

इन नवीन नगरों का राजनैतिक आधार मुख्यतः तीन बातों पर निर्भर है—

(i) श्रेणीगत व्यवस्था (Guilds) की समाप्ति और श्रमिकों के लिए स्थिर असुरक्षात्मक स्थिति की उपत्ति।

(ii) खुले बाजारों की स्थापना जहाँ श्रम पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध था और वस्तुओं का क्रय-विक्रय हो सकता था।

(iii) नवीन उद्योगों के लिए विदेशों पर आश्रित रहना अनिवार्य था क्योंकि वहीं फैक्टरियों द्वारा उत्पादित माल खप सकते थे।

इसके उपरान्त, फैक्टरियों में वाष्प-इञ्जिनों का प्रयोग हुआ। एक प्रकार से तकनीकी विकास नये प्रकार की सुसंगठित संस्थाओं और प्रशासन पर आधृत था। फैक्टरियों के यांत्रिक संघटन ने उत्पादन क्षमता में वृद्धि कर दी और व्यक्ति की संपत्ति तथा उसके अधिकारों की रक्षा एवं उसकी स्वतंत्रता की घोषणा की गयी जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक साहसिक व्यक्ति अपने को निरंकुश समझने लगा। हर क्षेत्र में चाहे वह राजनीतिक हो या कलात्मक,

निरंकुशता व्याप्त हो गयी। माल्थस (Malthus) की अवधारणा में भी प्रत्येक व्यक्ति की महत्वाकांक्षा इसी में थी कि वह कितना अधिक से अधिक धन कमा सकता है। यही उसका अंतिम लक्ष्य था। अन्ततोगत्वा इन सब परिवर्तनों का परिणाम यह हुआ कि संपूर्ण विश्व में जनसंख्या छिन्न-भिन्न होने लगी। इसके अतिरिक्त, जनसंख्या वृद्धि भी इसी युग का परिणाम है। यह अतिरिक्त जनसंख्या नगरों में आई और छोटे-छोटे उपनगर महानगरों में परिवर्तित होने लगे। यहाँ नागरीकरण और औद्योगीकरण का प्रत्यक्ष संबंध देखा जा सकता है। छोटे-छोटे स्थानों में जिन्हें सेना, व्यापारी, धार्मिक संघ, और कृषि से संबंधित लोग हथियाए थे, बाहर से आने वालों की एक ऐसी बाढ़ आई जो राजनैतिक दबाव और आर्थिक विपन्नता से त्रस्त थे। इसका परिणाम दो दिशाओं में हुआ—भूमि की वृद्धि और उद्योगों की वृद्धि; अर्थात् नगरों एवं राज्यों ने दूसरे नगरों एवं राज्यों पर हस्तक्षेप प्रारंभ किया और औद्योगिक विकास ने नये नगरों तथा कस्बों को जन्म दिया। इस युग में अतिरिक्त भूमि में कई प्रकार के अनाज और उद्योगों के लिए माल तैयार किये जाते थे जिसे यूरोप में भेजा जाता था। इससे सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि यूरोपियनों की भूमि के प्रति जो लालसा थी, उसका समाधान हो गया। इस समय भूख से पीड़ित व्यक्ति समाजीकृत और स्थिर जीवन के समस्त लाभों का परित्याग करके कृषि-कार्य चाहते थे क्योंकि इससे उनका पेट भरता। वे इतनी भूमि चाहते थे जिससे पर्याप्त खाद्यान्न उत्पन्न किया जा सके। धीरे-धीरे ये लोग अपने राज्य के बाहर भी फैलने लगे और कभी-कभी ऐसे स्थानों पर भी पहुँचे जहाँ उनके जीवन का ही अंत हो गया। लेकिन इसके बावजूद उनका एक लक्ष्य था। उनका विश्वास था कि भूमि से सुरक्षा, शक्ति, स्वतंत्रता, आर्थिक समृद्धि मिलती है। इसी भावना से प्रेरित होकर लाखों की संख्या में लोग अन्य भौगोलिक क्षेत्रों की खोज में निकल पड़े। कृषि के नये ढंग, कार्य करने की नवीन प्रविधियाँ, जीवन-यापन के नये साधन आदि उनके इसी प्रयास के प्रतिफल हैं। पर्याप्त मात्रा में भूमि मिल जाने से लोग खाद्यान्न भी अधिक मात्रा में पैदा करने लगे। जनसंख्या की अपेक्षा खाद्यान्न उत्पादन अधिक होता था, फलत: अतिरिक्त खाद्यान्न का उपभोग मदिरा बनाने में होने लगा। गेहूँ की बहुत अधिक मात्रा में उपज का परिणाम यह हुआ कि इसका प्रयोग सर्वसाधारण करने लगे। चावल और जई के आंटे का प्रयोग कम होने लगा।

खाद्यान्न की बहुल्यता के साथ जनसंख्या वृद्धि भी आरंभ हुई। लोगों का झुकाव औद्योगिक शहरों की तरफ हुआ। गाँव शहर में और शहर महा-

नगरियों में परिणित हो गये। नगरीय केन्द्रों की संख्या में भी विभाजन हुआ। पाँच सौ जनसंख्या वाले नगरों की सँख्या में भी काफी वृद्धि हुई। भवनों के स्तरों में भी परिवर्तन हुए। बड़े-बड़े भवन रातों-रात खड़े होने लगे। मनुष्य ने इन मकानों का निर्माण बहुत शीघ्रता में कराया। उन्हें अपनी गलतियों को सुधारने का समय नहीं था। नवागन्तुक नये मकानों का इन्तजार न कर सके। उन्हें जो भी मकान मिला, वे उसमें बसने लगे। यह काल नगरीय एकत्रीकरण का था। लोगों का प्रधान लक्ष्य नगरों में बसना था। नागरिक पर्यावरण के प्रति निर्माण की यह प्रक्रिया सामाजिक संस्थाओं के स्वरूपों एवं संगठनों का विनाश कर रही थी।

(ii) **उपयोगितावाद के आधारभूत तत्त्व (The Postulates of Utilitarianism)**:—पुराप्रविधि काल (Paleotechnic Period) में नगरों का विकास उपयोगिता की दृष्टि से हुआ था। उपयोगितावाद का आधारभूत तत्त्व यह है कि आर्थिक क्रियाएँ ईश्वरीय इच्छा पर निर्भर करती हैं और वे उस समय तक चलती रहती हैं, जब तक व्यक्ति उनमें हस्तक्षेप नहीं करता। दूसरे शब्दों में, धर्मशास्त्रियों (Theologians) के अनुसार औद्योगिक व्यवस्था स्वत: आत्म-नियंत्रित व्यवस्था है जो व्यक्ति के आर्थिक लाभों के साथ निर्द्वन्द सामंजस्य (Harmonious Balance) स्थापित करता है जिसका दूसरा नाम अहस्तक्षेप नीति (Laissez-faire) है। अहस्तक्षेप नीति की प्रक्रिया कई प्रकार से सामाजिक संबंधों को प्रभावित करती रही है और साथ ही साथ मध्ययुगीन नगरों की नैतिकता का ह्रास भी करती रही है। इसके अन्तर्गत नये-नये प्रकार के कर (Tax) लगाये जाते रहे हैं। उपयोगितावादियों के अनुसार राज्य के कार्यों एवं अधिकारों में सदैव कमी की जाती रही क्योंकि वे हमेशा आर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्रता के पक्षपाती रहे हैं; अर्थात् किस प्रकार के उद्योग कहाँ स्थापित किये जाँय, श्रमिकों को कितनी मजदूरी दी जाय, वे इन सब बातों में स्वतंत्रता चाहते थे। परिणामस्वरूप आर्थिक व्यवस्था और पूर्व-निर्धारित निर्द्वन्दता में सामंजस्य न रह सका और इस समाज की आर्थिक व्यवस्था एक स्वप्न मात्र ही रही जिससे आर्थिक क्षेत्र में एकाधिपत्य को प्रश्रय मिला। इसी युग में, आर्थिक स्वतंत्रता के साथ ही साथ राजनीतिक स्वतंत्रता का भी नारा लगा परन्तु वे एक दूसरे के विरोधी थे क्योंकि राजनीतिक समानता और वैयक्तिक स्वतंत्रता के लिए आर्थिक सीमाओं का निर्धारण अनिवार्य है। जिन देशों में राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ ही आर्थिक सीमाएँ निर्धारित नहीं की गयीं, वे अपने उद्देश्यों में सफल नहीं हो सके।

अहस्तक्षेप नीति का दूसरा परिणाम प्रतिष्ठित वर्ग को जन्म देना था। उपयोगितावादियों के अनुसार आर्थिक क्षेत्रों में स्वतंत्रता का अभिप्राय असीमित धन कमाना और श्रमिकों को सताना ही था। श्रमिकों की मजदूरी इतनी कम होती थी कि वे केवल अपने को जीवितावस्था में दूसरे दिन भी काम पर लगा देते थे। उस समय का शासक वर्ग श्रमिकों का भूख से मरना पवित्र मूल्य समझता था। पुराप्रविधि युग में प्राकृतिक स्तर पर समाज के प्रति व्यक्तियों की यह प्रत्याशा थी कि प्रत्येक उद्योग व्यक्तिगत होना चाहिए जिसमें किसी भी स्तर पर सरकार का हस्तक्षेप न हो। यहाँ तक कि कारखानों का स्थान, श्रमिकों के आवास और जल-व्यवस्था आदि भी व्यक्तिगत इच्छा द्वारा होना चाहिए। इस प्रकार, अहस्तक्षेप नीति में सहकारिता सिद्धांत का विनाश और समाज के मूल्यों को परिवर्तित कर दिया गया। समाज की प्रगति व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अच्छे मकानों और स्वस्थ जीवन में नहीं थी बल्कि कोई भी व्यक्ति कितना धन कमा सकता था, इसमें निहित हो गयी थी। नगर महापालिकाओं के कार्यों को भी इन लोगों ने अपने हाथ में ले लिया था और नगरों की धारणा केवल आणविक संगठन से की जाती थी।

उद्योगशील व्यक्ति ईश्वरीय शक्ति के वाहक समझे जाते थे जिन्होंने नगरों के प्रति निर्माण की पूर्ण व्यवस्था की। परम्पराओं और प्रथाओं का अपना महत्व समाप्त हो गया और नगरों में जनसंख्या वृद्धि पर भी कोई नियन्त्रण नहीं रहा। नगरों का विकास धनोपार्जन हेतु किया गया। सभी नागरिक क्रियाएँ नई परम्परा के रूप में ऐसी क्रियाओं को प्रोत्साहन देने लगीं जो मानवी शोषण से संबंधित थीं।

(iii) एकत्रीकरण की प्रविधि (Technique of Agglomeration) :—नगरों में जनसंख्या वृद्धि इसलिए भी हुई कि उद्योग की दृष्टि से नगरों का आकर्षण बढ़ता गया। इसके पूर्व उद्योग ऐसे स्थान पर चलाए जाते थे जहाँ जल एवं भूमि की उचित व्यवस्था और पर्याप्तता होती थी। दूसरे शब्दों में, ये स्थान गाँवों में ही होते थे। भाप के अविष्कार होने के साथ ही साथ नगरों की महत्ता बढ़ने लगी और लोग नगरीय आकर्षण से अपने को रोक न सके।

बढ़ती हुई जनसंख्या इन्हीं नगरों में बसने लगी। १८ वीं शताब्दी के अंत में लन्दन, पेरिस एवं बर्लिन में जनसंख्या का दबाव मानवीय सहनशीलता के बाहर चला गया जिससे एक अद्भुत पर्यावरण का जन्म हुआ। ऐसे स्थानों पर मानवीय गुण की तुलना जानवरों से की जा सकती हैं। ये लोग गन्दे घरों में जहाँ प्रकाश की कोई व्यवस्था नहीं होती थी, रहते थे। सामान्य व्यक्ति के

समक्ष दो वैकल्प थे—भूख की पीड़ा और आवास-गृहों का अभाव। इसलिए भूख की ज्वाला शांत करने के लिए लोगों का नगरों में आना स्वाभाविक था।

१९ वीं शताब्दी से कारखानों की स्थापना नगरों में ही की गयी जो जनसंख्याधिक्य का मुख्य कारण बना। पहले जो प्राकृतिक शक्तियाँ प्राकृतिक पर्यावरण में थीं, वे नगरों में वाष्प और विद्युत द्वारा उपलब्ध की गयीं जिनकी कोई सीमा न थी और जिनका प्रत्यक्ष प्रभाव समाजिक व्यवस्था पर पड़ा। पूँजीपति शक्ति की पर्याप्तता के कारण वस्तुओं के दिन-रात उत्पादन और साथ ही साथ आर्थिक क्षेत्रों में संघर्ष बढ़ने के कारण वस्तुओं का उत्पादन मूल्य अधिक करना चाहते थे। इसलिए बच्चों और स्त्रियों को श्रमिकों के रूप में कारखानों में रखा गया जिससे मजदूरी की दर कम हो गयी। इसके उपरान्त रेल की व्यवस्था हो जाने से नगरीय जनसंख्या में वृद्धि हुई और जल्दी-जल्दी ऐसी जगहों पर नगरों का निर्माण होने लगा जहाँ यातायात के साधन सुलभ थे; जैसे नदियों के किनारे के नगर। संपूर्ण जनसंख्या दो स्थानों पर एकत्रित होने लगी। प्रथम वह स्थान जहाँ से खनिज पदार्थ निकल कर कारखानों में भेजे जाते थे और दूसरा, औद्योगिक नगर। परिणामस्वरूप ग्रामों में जनसंख्या का घनत्व कम हो गया। लोग नगरों की तरह उन्मुख हो गये।

(iv) कारखाना और गन्दो बस्ती (Factory and Slums) :— नागरिक विषमता के दो मुख्य तत्त्व थे—कल-कारखाने और गन्दी बस्तियाँ। एक प्रकार से ये दोनों तत्त्व तथा नागरिक ही नगर का गुण दर्शाते थे। यद्यपि इन नगरों में जनसंख्या का घनत्व काफी हो गया था तथापि इनमें नगरीय संस्थाओं का बिम्ब तक न था। उपयोगितावादियों का प्रभाव न केवल धर्म और कला पर ही था बल्कि राजनितिक प्रशासन भी उन्हीं के हाथ में था।

कल-कारखाने की स्थिति नगर के सर्वोत्तम क्षेत्र में होती थी जहाँ जल तथा उत्पादन की अन्य सुविधाएँ उपलब्ध होती थीं। ये क्षेत्र अधिकतर नदियों तथा जल के अन्य स्रोतों के पास होते थे जिसके फलस्वरूप पानी के लिए उपलब्ध सभी स्रोत गन्दगी से भर जाते थे। पुराप्रविधि अर्थ-व्यवस्था की यह सबसे महत्वपूर्ण विशेषता थी कि नदी एवं तालाब गन्दे नालों में परिणित हो गये क्योंकि कारखानों का गन्दा पानी तथा अन्य खराब चीजें इन्हीं में बहाई जाती थीं। इसका प्रभाव व्यक्तियों के स्वास्थ्य पर पड़ा। एक प्रकार से श्रमिकों को पूँजीपतियों और उनकी सुविधाओं के लिए अपनी आवश्यकताओं का बलिदान करना पड़ा। ऐसी अर्थ-व्यवस्था में धनिक वर्ग को भी जीवन की

सामान्य सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं क्योंकि उनके पास जो भूमि थी, उसका प्रयोग वे किराये के मकान बनवाने में करते थे और स्वयं छोटे-छोटे मकानों में रहते थे।

औद्योगिक नगरों में सर्वप्रथम एक परिवार वाले मकानों को बहु-परिवारीय मकानों में बदल दिया गया और धीरे-धीरे एक कमरे में कई परिवार रहने लगे। डुबलिन (Dublin), ग्लैसगो (Glasgow) और बम्बई में ये प्रक्रियाएँ सामान्य रूप से चलीं। तत्पश्चात एक ही कमरे में अलग-अलग कोनों में ७ से ८ व्यक्ति भिन्न-भिन्न उम्रों के सोते थे। यह प्रक्रिया १६ वीं शताब्दी से ही प्रारंभ हो गयी थी। डा. विलन (Dr. Willan) ने अपनी पुस्तक में कुछ बीमारियों का वर्णन करते हुए इस पर प्रकाश डाला है। बीमारियों के फैलने का मुख्य कारण घुटा हुआ वातावरण बतलाया गया क्योंकि इसमें हवा और प्रकाश का कोई प्रबंध नहीं होता था। गन्दगी के कारण अन्य कीटाणुओं का प्रवेश हुआ। प्लेग की बीमारी फैली। टायफायड तथा अन्य भयंकर बीमारियाँ फैलीं। अंधकारमय वातावरण अनेक प्रकार के रोगों को जन्म देता है।

नगरों के उद्विकास में एक-दो शताब्दी तक गन्दी बस्तियाँ पनपती रहीं। इस प्रकार जीवन का स्तर निम्न हो गया। कृषकों के यहाँ ही नहीं बल्कि मध्यम वर्गों के मकानों में भी व्यक्तियों की भीड़ होती रही जिससे गन्दी बस्तियों और अर्द्ध-गन्दी बस्तियों का विकास भी होता रहा। उच्च वर्गों की स्थिति भी दयनीय हो गयी।

(v) हानिप्रद आवास-गृह (Houses of Ill-Fame) :—प्रत्येक देश और प्रत्येक क्षेत्रों के अपने विशिष्ट प्रतिमान होते है; जैसे ग्लैसगो, एडिनबर्ग पेरिस, बर्लिन, हैम्बर्ग में दुमंजिले मकान; लंदन में पाँच या छः कमरे वाले मकान। इसी तरह अन्य देशों में भी अलग-अलग तरह के मकान हैं। परन्तु इनकी सामान्य विशेषता यह थी कि एक खण्ड के बाद दूसरे खण्ड उसी प्रकार बनते जाते थे जिनमें उसी तरह की प्राचीन सँकरी सड़कें, खुले स्थानों का अभाव और पड़ोसियों से असंबद्धता होती थी। इनकी खिड़कियाँ इतनी महीन होती थीं कि प्रकाश तक नहीं आ सकता था। इस युग में मकानों के संबंध में कोई नवीन आविष्कार नहीं हुआ। १९३० के बाद, मध्यम एवं उच्च वर्ग में थोड़ी उन्नति हुई लेकिन इसके बावजूद आवास-गृह स्वच्छ न रहे जिसका संक्रामक प्रभाव आने वाली पीढ़ी पर पड़ा। गरीबी और पर्यावरण ने मिल कर ऐसा प्रभाव डाला कि यह पीढ़ी अनेक बीमारियों का शिकार हो गयी। प्रकाश के अभाव में बच्चों में सूखा रोग, दूषित भोजन के कारण

गंजापन, चर्म-रोग, चेचक, टायफायड एवं अन्य प्रकार के ज्वर फैले। इन बीमारियों का प्रभाव जन्म एवं मृत्यु-दर पर भी पड़ा। कृषि से संबंधित लोगों एवं कल-कारखानों में कार्य करने वालों की मृत्यु-दर में अधिक विषमता हो गयी। साथ ही बच्चों की मृत्यु-दर भी उसी अनुपात में बढ़ी। तत्पश्चात साबुन का आविष्कार होने पर इन बीमारियों पर कुछ नियंत्रण हुआ। परन्तु इसका प्रयोग भी साधारण लोग नहीं कर सकते थे। बाद में धीरे-धीरे पानी की समस्या का समाधान हुआ। इन बीमारियों का प्रभाव उच्च वर्ग पर भी समान रूप से पड़ा क्योंकि ये बीमारियाँ संक्रामक थीं। बीमारियों ने खेलने और खुले स्थानों की महत्ता को बढ़ाया।

(vi) जंगलीपन के प्रति प्रतिरोध (Resistence to Barbarism) :— इस प्रकार के निम्न और दयनीय वातावरण में व्यक्ति का रहना उसकी विजय का प्रतीक था। उसकी विजय का एक प्रमाण यह भी है कि उसने गरीबी की इस स्थिति में अपने परिवार एवं बाल-बच्चों का साथ दिया। पुराप्रविधि के इस युग में नैतिकता का स्तर उच्च रहा क्योंकि इन व्यक्तियों में सहनशीलता अधिक थी।

इसी युग में श्रमिक संघों की स्थापना हुई। श्रमिकों के अन्य संगठन एवं मनोरंजन के केन्द्र स्थापित हुए; अर्थात् एक उद्देश्यमूलक सामाजिकता का प्रादुर्भाव हुआ। इसी समय पूँजीपतियों के विरुद्ध योजनाएँ बनाई गयीं और समयानुसार उचित मजदूरी की माँग और कार्य करने के घंटों में कमी के लिए संगठित प्रयास किये गये। अनेक कारखानों में सहकारी क्रय-विक्रय केन्द्र खोले गये जिसका उद्देश्य किसी लाभ को कम करना था। एक ही शताब्दी में यह आन्दोलन काफी उग्र हो गया और शक्ति तथा आकार में अन्य शक्तियों से मुकाबला करने लगा। इस प्रकार यह विद्रोह परतन्त्रता के विरुद्ध था। इससे कर्मचारियों में एक नया उत्साह जाग्रत हो रहा था।

(vii) जीवन की अल्पता (The Minimum of Life) :—पूँजीपति सैद्धान्तिकों के अनुसार पुराप्रविधि काल में आवास की कोई समस्या नहीं थी क्योंकि न्यूनतम मजदूरी पाने वाले श्रमिकों को भी रहने का स्थान मिल जाता था चाहे उसका स्तर स्वास्थ्य एवं सुरक्षा की दृष्टि से कुछ भी हो। ऐसा इसलिए भी हुआ ताकि आर्थिक शक्तियों की स्वतंत्र व्यवस्था हो सके। यदि इन दशाओं के कारण गन्दी बस्तियों का जन्म हुआ तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उन्होंने लाभ-व्यवस्था के प्रति कोई आवाज नहीं उठाई। परन्तु शीघ्र ही इन मकानों का स्तर अन्य व्यक्तियों द्वारा आँका जाने लगा क्योंकि बीमारियों

को पृथक नहीं किया जा सकता था और इसलिए उच्च वर्ग वालों में ही इस आवास व्यवस्था के प्रति विद्रोह शुरू हुआ। सर्वप्रथम लन्दन के स्वास्थ्य विभाग ने कहा कि दरिद्रता, खराब भोजन और आवास की अच्छी व्यवस्था न होना ही बीमारी एवं अपराध का कारण है। १९ वीं शताब्दी के मध्य में आवास की इस समस्या पर विचार हुआ। साथ ही अनेक मानवीय संघों ने इस कार्य को अपने हाथ में लेकर प्रयोगात्मक स्तर पर कुछ मकानों का निर्माण कराया जिनमें न्यूनतम सफाई, समयानुसार मरम्मत, जल-व्यवस्था, खुली जगहें गन्दगी बहाने के साधन आदि का उचित प्रबंध किया गया। प्रारंभ में यह व्यवस्था व्यक्तिगत थी लेकिन बाद में इसको नियमों द्वारा पालित किया गया और मकान में किरायेदारों और मकान-मालिकों के बीच समझौता हुआ। इसका शैक्षिक मूल्य यही है कि लोगों में यह भावना जाग्रत हुई कि जीवन की कुछ न्यूनतम आवश्यकताएँ भी होती हैं जिनकी पूर्ति आवश्यक है।

(viii) पुराप्रविधि नाटक (Paleotechnique Drama) :—'कोक टाऊन' (Coke Town) के जीवन से अलग व्यवसायों में कुछ इतनी शिथिलता आ गयी थी जिसके कारण मानवीय शक्तियों का प्रयोग मशीनी शक्तियों की भाँति अधिकाधिक धनोपार्जन हेतु किया जाता था। यहाँ तक कि साप्ताहिक अवकाश के पश्चात् जब व्यक्ति काम पर लौटता था तो वह जीवन के प्रति लुटा हुआ होता था। मद्य-सेवन, वैश्यावृत्ति आदि से उन्हें प्रसन्नता नहीं मिलती थी। इसका वर्णन डिकेन्स (Dickens) ने अपनी पुस्तक में भली-भाँति किया है। औद्योगिक नगरों में इन नाटकों के संबंध में पर्याप्त तथ्य उपलब्ध होते थे। पूरा नाटक कारखाने के चतुर्दिक घूमता रहता था और इसके पात्र श्रमिक संघों के नेता होते थे। कभी-कभी श्रमिक स्वयं भी भाग लेते थे। हड़ताल और तालाबन्दी ऐसे शस्त्र थे कि जो इनका प्रयोग करता था उसका हाथ स्वयं ही कट जाता था। श्रमिकों को अपनी इस शूरवीरता का उचित भुगतान करना पड़ता था। अधिकतर हड़ताल काम करने के घंटे में कमी करने या साप्ताहिक मजदूरी में कुछ वेतन बढ़ाने की माँग के कारण होती थी। इसके अतिरिक्त, नौकरी से च्युत किये गये श्रमिक को फिर से नौकरी पर रखने के माँग के लिये भी हड़ताल होती थी। यद्यपि ये झगड़े बहुत छोटे-छोटे थे तथापि श्रमिकों के जीवन में इनका काफी महत्व था। लुइस ममफोर्ड (L. Mumford) ने कहा कि यदि हड़ताल और तालेबन्दी की संभावना न होती तो उत्सुकता, महत्वाकांक्षा एवं नीरसता सहन के बाहर हो जाती।

औद्योगिक नगरों में राष्ट्रीय राजनीति भी एक नाटक, युद्ध और खेल के समान थी। इसके व्याख्याताओं में मुख्य अभिनेता (Actor) थे और मुख्य

नेता महान घूंसेबाज (Prize-fighters) और संसदीय नेतागण थे। समय-समय पर वे स्वयं विद्रोह किया करते थे। इस युग में औद्योगिक नगरों में राजनीति का स्थान वही था जो सिनेमा-घरों, फुटबाल या क्रिकेट के मैचों का आधुनिक युग में है क्योंकि प्रत्येक औद्योगिक नगर में राजनीतिक श्रोतृशाला (Auditorium) नागरिकों का केन्द्र होता था और यहाँ मधुर भाषणों द्वारा उत्तेजना एवं बेहोशी की दवाइयाँ बाँटी जाती थीं; व्यक्तियों को वातावरण के विरुद्ध उकसाया जाता था।

(ix) **अनियोजित नगर** (The Non-Plan of the Non-City) :—१९ वीं शताब्दी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कारखानों एवं गन्दी बस्तियों का स्तरीकरण था। जिन क्षेत्रों में वाष्प-इञ्जिनों एवं रेलों का प्रवेश हुआ वहाँ दरिद्रता का पर्यावरण भी उनके साथ गया। इनके लिए उपयुक्त नागरिक नियोजन अनिवार्य था। भाग्यवश यांत्रिक शहरों का आविभाव होने के पूर्व ही यांत्रिक नगर योजना ढूंढ निकाला गया। यदि शहरों की योजना का संबंध सामाजिक क्रियाओं एवं आवश्यकताओं के साथ नहीं हुआ तो इसका परिणाम चतुर्भुजी आवास खण्डों (Rectangular Blocks) का निर्माण हुआ। इस समय के अभियन्ताओं (Engineers) के सामने कोई समस्या नहीं रह गई। कोई भी व्यक्ति योजना की रूपरेखा बनाने और अभियंता का कार्य कर सकता था। लेकिन बड़े-बड़े नगरों की योजनाएँ अभियंता ही बनाते थे। चतुर्भुजी आवास-खण्ड अमेरिकी सभ्यता की देन हैं।

सट्टेबाजों के अनुसार यह योजना सबसे उपयुक्त थी। इन मकानों के नीचे दुकानों की भी व्यवस्था होती थी परन्तु ये मकान किसी प्रकार के सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते थे तथा इनके पास-पड़ोस की सड़कों में भी भिन्नता नहीं हो सकती थी। मकानों एवं कारखानों के बनते समय हवा की दिशा की ओर ध्यान नहीं दिया जाता था। इसलिए प्रकार्यात्मक रूप से औद्योगिक, वाणिज्यीय,नागरिक तथा अन्य क्षेत्रों में भिन्नता नही हो पाती थी। नक्शे में वे सभी क्षेत्र एक से दिखलाई पड़ते थे। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि कोई भी क्षेत्र विशेष कार्य के लिए नहीं बनाये जाते थे। इसका एक कारण यह भी था कि जब भूमि का वितरण लाभ के आधार पर वैयक्तिक रूप से कर दिया जाता था तो सामाजिकता की दृष्टि से इन क्षेत्रों में पारस्परिक आदान-प्रदान भी नहीं हो सकता था। किसी भी स्तर पर नगर के सामाजिक कार्यों को कोई प्रश्रय नहीं दिया गया यद्यपि नवीन नगरों में कहीं-कहीं नागरिक केन्द्रों की व्यवस्था की गयी। जब स्कूल, विश्वविद्यालय नागरिक प्रशासन,

न्यायालयों को नागरिक केन्द्रों की आवश्यकता पड़ी तो उन्हें भी इसी समस्या का सामना करना पड़ा। नगरों की भूमि निजी व्यक्तियों के हाथ में थी और यदि यह जमीन खरीद भी ली जाती तो बने हुए भवनों को गिराने में अधिक धन लगता था।

पुराप्रविधि काल में नगरों में कुछ ईस प्रकार के विकास कार्य चलते रहे जिससे खुले स्थानों का अभाव हो गया। जैसे-जैसे नगरीय सीमा का विस्तार होता गया, नगरीय केन्द्र से गाँवों की दूरी भी बढ़ती गयी और भूमि का मूल्य भी बढ़ गया। फलस्वरूप खेल के मैदानों और पार्कों की उचित व्यवस्था नहीं हो सकी।

(x) कोकटाऊन का निकट चित्रण (A Close-up of Coke-Town) :—जिस गति से औद्योगीकरण बढ़ रहा था उस अनुपात में अच्छे नगरों की वृद्धि नही हो रही थी और जिन शर्तों के अनुसार यह औद्योगीकरण संभव हो रहा था वही मानवीय सफलता के लिए बाधक था। अतः जब व्यक्तियों में आपस में ही लाभ के लिए स्पर्धा थी तो किस प्रकार अच्छे नगरों की स्थापना हो सकती थी। उनकी इन क्रियाओं पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं लगाया गया। अतः ऐसी अवस्था में सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था जनता द्वारा ही संभव होती है जिसका अस्तित्व उस समय नहीं था और यदि था भी तो वे उन्हीं शक्तियों का प्रयोग करती थीं जिनकी स्वीकृति राज्य द्वारा थी। लेकिन दुर्भाग्य की तो बात यह थी कि राज्य भी वैयक्तिक हितों को ही बढ़ावा दे रहा था। पैट्रिक गीड्स (Patrick Geddes) ने कोयले की खानों के पास तरह-तरह के संगठनों को उपनगरों सहित कोई नगर (Conurbation) कहा है। ऐसे स्थानों में जनसंख्या का घनत्व कई हजार गुना बढ़ गया था और कोई भी संस्था इन सदस्यों को क्रियात्मक सामाजिक जीवन से संगठित करने में असमर्थ थी। पुरानी संस्थाओं का केवल नाम मात्र रह गया था। ये नये नगर कला, विज्ञान एवं संस्कृति को आगे बढ़ाने में असफल रहे।

इसके उपरान्त प्रकाश के लिए गैसों की उत्पत्ति हुई और गैसों के उत्पादन के लिए बड़े-बड़े आकार के भवन बनाये गये। इन गैसों का भी प्रभाव व्यक्तियों के ऊपर अच्छा नहीं पड़ा। एक समाजशास्त्री ने कहा है कि ये गैस हमारी जीवन की आवश्यकताओं पर राजनीतिक हितों का प्रभुत्व दर्शाते हैं। इन दशाओं में व्यक्तियों का प्रसन्न रहना इस बात पर निर्भर रहता था कि कहाँ तक वे अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर सके हैं। इस युग में व्यक्तियों

की रुचि में भी काफी परिवर्तन आया। इसका प्रभाव भोजन आदि पर भी पड़ा। उच्च वर्ग के लोग भी टिनों में बन्द भोजन के अभ्यस्त हो गये और उन्हें ताजे एवं ईंस भोजन में कोई अंतर नहीं मालूम पड़ता था।

अंधकार में बिना रंग के विषैली गैसों ने सामाजिक पर्यावरण में मानवीय कुशलताओं एवं क्षमताओं को कम किया और साथ ही कपड़ों की धुलाई, स्नान एवं सफाई की अधिक आवश्यकताओं को बढ़ावा दिया गया। ऐसे नगरों में श्रमिकों का सबसे अधिक काम कपड़ों की धुलाई पर ही होता था फिर भी उनके शरीर पर गैसें लिपटी हुई होती थीं।

आधुनिक अन्वेषणों से ज्ञात हुआ है कि ध्वनि से नाना प्रकार के शारीरिक परिवर्तन संभव हैं। यहाँ तक कि दूध में ध्वनि द्वारा रोगाणु (Bacteria) कम किये जा सकते हैं। साथ ही साथ ध्वनि अनेक प्रकार की बीमारियों को भी जन्म देती है। पुराप्रविधिकालीन नगरों में कोलाहल के रूप में ध्वनि अपनी चरम सीमा पर थी। कारखानों की सीटी, रेलों की आवाज़, अन्य कारखानों के इञ्जिनों की ध्वनि इस पर्यावरण को और भी निन्दनीय बना देती है।

(xi) अद्भुत दुकानें (The Old Curiosity Shop) :—प्रतिनिर्माण की यह प्रक्रिया और पर्यावरण को दूषित करने वाले अन्य तत्त्व कल-कारखाने, गन्दी बस्तियों एवं नगरों पर छाये हुए थे। प्राचीन संस्थाओं और भवनों के अतिरिक्त शेष भवन गन्दे बाजारों के रूप में परिणित हो गये थे। नये भवनों के निर्माण को केवल शीघ्रगामी व्यवस्था ही कहा जा सकता है। प्रतिनिर्माण की इस प्रक्रिया में प्राचीन प्रतीकों को नये प्रतीकों द्वारा हटाया दिया गया क्योंकि इस नये युग में नई माँगे, नये स्वरूप एवं नवीन कार्यों की आवश्यकता थी। भवन-निर्माण कला (Architecture) में भी विशेष परिवर्तन हुआ। जितने भी भवन थे उनका संबंध तत्कालीन संस्कृति से नहीं था अर्थात् एक ही नगर में बने हुए भवन इन्हीं सज्जा प्रतिमानों की ओर संकेत नहीं करते थे। यही बात मकानों के अन्दर भी थी। इसके अतिरिक्त, सजावट कार्य में भी परिवर्तन आ गया। यह कहा जा सकता है कि इस युग में सौन्दर्यपूर्ण वस्तुओं का स्थान उपयोगितावादी वस्तुओं ने ले लिया था।

(xii) लोहे का प्रभुत्व (The Triumph of Iron) :—भवन-निर्माण कला में परिवर्तन के ही साथ लोगों का ध्यान लोहे के प्रयोग की तरफ गया। उसकी महत्ता और उपयोगिता समझने के पश्चात हर देश में इसके

प्रयोग की चर्चा चल पड़ी। राबर्ट डेल ओवेन (Robert Dale Owen) ने तो यहाँ तक भविष्यवाणी कर दी कि एक समय आयेगा जब लोहे का प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति हर प्रकार के भवन-निर्माण में करेगा। १६ वीं शताब्दी में, फास्टस वेरेन्टियस (Faustus Varantius) ने यह सलाह दी थी कि गिरजा-घरों के ही समान बड़े भवनों की छतों और दीवालों में भी लोहे का प्रयोग होना चाहिए।

अन्त में, ये सब भविष्यवाणियाँ सार्थक हुईं। १८ वीं शताब्दी के अंत में चीन में सर्वप्रथम लोहे का पुल बना और धीरे-धीरे लोहे का प्रयोग अन्य कार्यों में भी होने लगा जिसके परिणामस्वरूप भवनों के निर्माण में लकड़ी के स्थान पर लोहे के प्रयोग का श्रीगणेश हुआ। १९ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में, पेरिस के केन्द्रीय बाजारों की छतों में भी लोहे का प्रयोग किया गया। १८ वीं शताब्दी के अंत में इंगलैंड में लोहे के व्यापक प्रयोग के साथ ही साथ काँच और शीशे के प्रयोग का भी शुभारम्भ हुआ। शीशे के प्रयोग से धुएँ अथवा गन्दे पदार्थों को मकानों में आने से रोका जा सकता था।

इन सब नवीन आविष्कारों ने भवन-निर्माण की कठोरता को सरल बना दिया। लोहे का प्रयोग सर्वत्र होने लगा जिससे समय, श्रम और मूल्यों में बचत हुई। दूसरे शब्दों में, हम इसे हर क्षेत्र में लोहे के प्रभुत्व की संज्ञा दे सकते हैं।

(xiii) उपनगरों को प्राथमिकता (Far From the Madding Crowd) :—कोकटाऊन में अत्यधिक भीड़ होने के कारण लोगों को घुटन सी महसूस होने लगी। फलतः उनमें स्वच्छ और उन्मुक्त वातावरण में रहने की अभिलाषा जाग्रत हुई और इस अभिलाषा की पूर्ति उपनगरों में ही हो सकती थी। फलतः जो लोग पुराप्रविधि सभ्यता को महत्वपूर्ण समझते थे, उन्हें छोड़ कर अन्य लोग गाँवों की तरफ उन्मुख हुए। उपनगरों में स्वच्छ हवा, रोशनी, स्वास्थ्यप्रद वातावरण और शांति मिलती है। वहाँ के ग्रामीण-नागरिक मिश्रित सौंदर्य की एक अलग ही विशेषता होती है। इसके अतिरिक्त, नगरों में अत्यधिक जनसंख्या-वृद्धि से भी उपनगरों में जाना अनिवार्य हो जाता है। जो लोग उपनगरों में नहीं जाना चाहते उन्हें डाक्टरों की सलाह पर वहाँ रहने को बाध्य होना पड़ता है। प्रारंभ में तो उपनगरों में रहने की प्रवृत्ति बहुत मन्द रही क्योंकि वहाँ मोटर गाड़ी या अन्य सवारियों वाले ही रह सकते थे। शहर से उपनगरों की दूरी इतनी अधिक होती है कि नित्य पैदल शहरों में नहीं आया-जाया जा सकता। इसलिए हर कोई उपनगरों में रहने के प्रति उन्मुख नहीं हुआ। लेकिन बाद में इस प्रवृत्ति में वृद्धि हुई।

लोग घने शहरों की अपेक्षा शांत वातावरण में ही रहना पसन्द करने लगे। परिणामस्वरूप भूमि-मूल्य में वृद्धि और भवन-निर्माण कला में परिवर्तन हुआ। उपनगरों की आकृति ही एकदम बदल गयी।

औद्योगिक शहरों में सिर्फ मजदूर और अन्य छोटे वर्ग के लोग रहते थे क्योंकि उनके पास इतना धन नहीं होता था कि वे रोजाना उपनगरों से किसी सवारी से अपने कार्य-स्थलों को आ-जा सकें। निम्न वर्गों के रहने के कारण गन्दी बस्तियों का आविभाव हुआ। उनका जीवन नारकीय हो गया।

संक्षेप में, हम इस प्रकार कह सकते हैं कि उपनगरों की प्राथमिकता निजी और शांत जीवन व्यतीत करने का सामूहिक प्रयास था। औद्योगिक शहरों में जीवन का खतरा सदैव बना रहता था; वहाँ कोई शांति नहीं मिलती थी। इसीलिए लोगों ने उपनगरों में रहने की इच्छा व्यक्त की।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

Abroms, Charles. "Forbidden Neighbors" Harper & Brothers, New York. 1955.

Anderson, N. & Edward C. Lindeman. "Urban Sociology", New York, 1928 & 1935.

Bartholomew, H. "Urban Land Uses, "Cambridge, 1932.

Bauer, C. "Modern Housing" New York, Houghton Miffin Company, 1934.

Bergel, E E. "Urban Sociology". Mc Graw Hill Series, 1955

Blumenfeld, Hans. "On the Concentric Circle Theory of Urban Growth" LE, 25 (May 1949) 209–212.

Bogardus, E. S. : "Sociology" Macmillan Company. New York.

Bridenbaugh, Carl. "Cities in the Wilderness : The First Century of Urban Life in America, 1625–1742 New York : The Ronald Press 1938.

Breese , Gerald & Whiteman, D. E. (eds) "An Approach to Urban Planning" . Princeton University Press, Princeton, 1953.

Burgess, E. W. "The Growth of the City" in R. E. Park, W, Burgess & R, D. Mckenzie (eds) "The City". Chicago, 1925.

Burgess, E. W. (eds) "The Urban Community." Chicago, University of Chicago Press, 1926.

Caplow, Theodore (ed) "City Planning" (readings) Minneapolis, 1950.

Carpenter, N. "The Sociology of City Life" New York 1939.

Childe, V. Gordon, "Man Makes Himself" London : Watt's & Co. 1937.

Clerget, Pierre, "Urbanism : A Historic, Geographic & Economic Study". Annual Report of the Board of Regents of the Smithsonian Institution, Washington USGPO. 1913.

Cole, W. E. "Dynamic Urban Sociology" Harrisburg, 1954.

Cooley, C. H. "The Theory of Transportation in Sociological Theory and Social Research". New York 1930.

Crane, R. J. "Urbanism in India" AJS. 60 (March 1955) 463–70.

Dahir, James "The Neighborhood Unit Plan : Its Spread & Acceptance." Russell Sage Foundation, New York, 1947

Davie, M. R. "The Pattern of Urban Growth", in G. P. Murdock (ed), Studies in the Science of Society. Yale University Press, New Haven, 1937.

Davis, K., "Human Society" P. 331.

Desai, A. R. "Rural Sociology in India". The Indian Society of Agricultural Economics, 1961.

Dubey, R. "Economic Development of England", Kitab Mahal, Allahabad. 1947.

Erickson, E. Gordon, "Urban Behaviour" Chs. 5–13. The Macmillan Co.. New York, 1954.

Firey, W. "Land Use in Central Boston." Harvard University Press, Cambridge, 1947.

Ford. J. "Slums and Housing" Harvard University Press, Cambridge, 1936. 2 Vols.

Gadgil, D. R. "The Industrial Evolution of India," Oxford University Press, London, 1924.

Gedes, P. "Cities in Evolution," Wllliam and Norgate' London. 1915.

Gist N. P. and Halbert L. A., "Urban Society". Thomas Y. Crowell Company, New York, 1956 (Fourth Editioh).

Gray, George H. "Housing and Citizenship" Reinhold Publishing Corporation, New York. 1946.

Greer, G. & Alvin H. Hansen, "Urban Redevelopment and Housing". Washington, 1941.

Greer, G. (ed) "The Problems of Cities and Towns." Reprint of the Conference on Urbanism. Cambridge: Harvard Universiry Press, 1942.

Hatt, P. K. "The Concept of Natural Area," American Sociological Review, II: 423–27 (August, 1946).

Hatt, P. K. & A. J, Reiss (Jr.), "Cities and Society" The Free Press of Glencoe, Inc. Fourth Printing, 1963.

Hatt, P.K. & A.J. Reiss (Jr.), "Reader in Urban Sociology." The Free Press of Glencoe, Inc. 1951.

Hillman, A. "Community Organisation and Planning." Macmillan Company, New York, 1950.

"Housing and Town and Country Planning-" United Nations, New York.

Hoyt, H. "The Structure and Growth of Residential Neighbourhoods in American Cities." Federal Housing Administrations, Washington, 1932.

Hoyt, H. "One Hundred Years of Land Value in Chicago," Chicago, 1933.

Jones, Clifton R. "Invasion and Racial Attitudes." Social Forces, 27 : 286–92 (March 1949).

Jones, J. "A Critique of Firey's Land use in Central Boston.' AJS 1944.

Kerr, C & J. T. Dunlop, F. H. Harbison, C. A. Myers : "Industrialism and Industrial Man." Heinnmano Educational Book, London. 1962.

Lee, R. H., "The City : Urbanism & Urbanisation in Major World Regions." J. B, Lippincott Co., Philadelphia, 1955.

Lewis, H. M. "Planning the Modern City." John Wiley & Sons, New York, 1949.

Lynd, Robert S. & Helen, M; Middletown, New York, 1929

Mac Iver R.M, & Page C.H. : "Society." New York : Macmillan, New York.

Martin, W. T. "The Rural–Urban Fringe : A Study of the Adjustment to Urban Location." University of Oregon Press, Eugena, 1955.

Mitchel, R. (ed). "Building the Future City." The Annals, 242 (November 1945).

Mumford, L. "Culture of Cities." Harcourt Brace and Company, New York, 1938.

Mumford, L. "City Development." New York, 1945.

Murray, M. A. "The Splendour that was Egypt." 1949.

Nazmulkarim, A. K. "Changing Society in India and Pakistan." Oxford University Press, Ducca, 1956.

Newmeyer. M. H. "Social Problems and the Changing Society." Nostrand & Co. Inc. New York.

Newmeyer, M. H. "Our Cities : Their Role in the National Economy." National Resources Committee, Govt. Printing Office, Washington, 1937,

Park, R. E., Burgess, E. W. & Mckenzie, R. D. "The City." University of Chicago Press, 1925.

Park, R. E. "Succession : An Ecological Concept." ASR. 1936.

Pierenne, H. "Medieval Cities : Their Origin & the Revival of Trade." Princeton : Princeton University Press 1945.

Queen. S. A. & D. B, Carpenter, "The American City." McGraw Hill Book Co. Inc. 1553.

Queen, S. A. & L. Thomas. "The City." New York 1939.

Quinn, J. A. "Human Ecology," Prentice-Hall, Inc. Ne[w] York, 1950.

Riemer, Svend. "The Modrrn City." New York, 1952.

Rosen, G. "Industrial Change in India." Asia Publishing House, Bombay, 1961.

Sanders, S. E. & A. J. Rabuck, "New City Patterns : The Analysis of a Technique for Urban Reintegration." New York, 1946.

Schmid, C. "Generalisations Concerning the Ecology of the American City." ASR. 50.

Schlesinger, A. M. "The Rise of the City." New York, 1938.

Sims, N. L. "Elements of Rural Sociology." 1947. P. 651.

Smith, T. Lynn, & C. A. McMahan. "The Sociology of Urban Life." New York, 1951.

Smailes, A.E. "The Geography of Towns, "New York. 1953.

Sorokin, P. A. & Zimmermann, "Principle of Rural–Urban Sociology." PP. 56. 57.

Taylor, G. "Urban Geography," New York, 1949.

Thompson, W. "Urbanisation." Ess.

Thompson, John G. "Urbanisation : Its Effects on Government and Society." New York. 1929.

Thrasher, F. M. "The Gang," University of Chicago Press, 1936.

Tisdale, H. "The Process of Urbanisation," Social Forces, 1942.

Turner, R."India's Urban Future." Oxford University Press. Bombay, 1962.

Turner, R. "The Great Cultural Tradition." Vol. I Ch. III & IV.

Ullman, E. "Theory of Location for Cities." AJS. 46 (1941) 853–64.

Walker, M.L. "Urban Blight and Slums." Cambridge Mass, 1938.

Walker, R. A. "Urban Planning." Chicago, 1941.

Wirth, L. "Urbanism as a Way of Life," AJS. 1938.

Wirth, L. "Community Planning for Peacetime Living," Standard, Calif, 1946.

Woods, E. E. "Slums and Blighted Areas in the U. S." U. S. Housing Authority, Washington, 1938.

Woodbury, Coleman, "The Future of Cities and Urban Redevelopment," Chicago, 1953.

(क) पारिभाषिक शब्दावली

A

Abstract—अमूर्त्त
Accessories—सहायक चीजें
Actor—अभिनेता
Agency—अभिकरण
Airport—हवाई अड्डा
Anonymity—गुमनामता
Architecture—भवन निर्माण कला
Area—क्षेत्र
Arteries—धमनियाँ
Atomic Age—पारमाणविक युग
Attitude—दृष्टिकोण, अभिवृत्ति
Auditorium—श्रोतृशाला

B

Biological—जैविक
Blighted Area—जीर्ण-शीर्ण क्षेत्र
Burgher—नागरिक
Business Centre—व्यापार केन्द्र

C

Capital—राजधानी
Centrifugal—अपकेन्द्रीय
Centripetal—अभिकेन्द्रीय
Chart—नक्शा
Cheapness—सस्तापन
Circle—वर्तुल
Circular—वर्तुलाकार
City—नगर
—Council—नगर परिषद्
—Planner—नगर नियोजक
—States—नगर राज्य
Class Structure—वर्ग संरचना
Colonial Bondage—औपनिवेशिक बन्धन
Communication—संवाद-प्रेषण
Commissioner—आयुक्त
Commuters Zone—संकेन्द्रिय मंडल
Commonwealth—राष्ट्रमण्डल
Competition—प्रतिस्पर्धा
Complimentarity—परिपूर्णता
Concentric Circle—संकेन्द्रिय वृत्त
—Zone—संकेन्द्रिय मण्डल
Conceptual Objection—अवधारणात्मक आपत्ति
Condensing Chamber—संघनन कक्ष
Conservatism—रूढ़िवादिता
Control—नियंत्रण
Co-operative Housing—सहकारी आवास
Correlation—सहसम्बन्ध
Criteria—मापदण्ड
Cylinder—सिलेंडर

D

Data—आँकड़ा, सामग्री
Demographic—जनसंख्यात्मक
Density—घनत्व
Design—रूपरेखा, प्ररचना
Designer—चित्रकार
Despotic Impulse—स्वैच्छिक प्रवृत्ति
Determinant—निर्धारक
Developing—विकासोन्मुख
Difference—वैभिन्न्य
Disorganization—विघटन
Displacement—विस्थापन
Divorce—विवाह-विच्छेद, तलाक

E

Ecological Pattern—परिस्थितिक प्रतिमान
Elite—आभिजात्य वर्ग

Empirical Research—वैज्ञानिक गवेषणा
Encroachment—अतिक्रमण
Engineer—अभियंता
Engineering—अभियंत्रीकरण
Ethnic—जातीय
Evaluation—मूल्यांकन
Exodus—बहिर्गमन
Extrovert—बहिर्मुख

F

Feudal Age—सामन्त युग
Flying Shuttle—द्रुतगामी ढरकी
Formal—औपचारिक
Formulated—विरचित
Frame—ढाँचा
Frustration—भग्नाशा
Function—प्रकार्य
Functional—प्रकार्यात्मक

G-H

Greek—यूनानी
Handicraft—दस्तकारी
Heavy Engineering Corporation—भारी अभियंत्रण निगम
Heterogeneity—विजातीयता
Heterogeneous—विजातीय
Hiatus—दरार
Homogeneity—सजातीयता
Homogeneous—सजातीय
Housing—आवास
Hygienic—स्वास्थिकीय
Hypothesis—उपकल्पना

I

Ideal Type—आदर्श प्रकार
Ideology—वैचारिकी
Immigrant—आप्रवासी
Impersonal—अवैयक्तिक
Indices—देशनांक
Individualism—व्यक्तिवाद
Industrialisation—औद्योगीकरण
Inferiority Complex—हीनता-ग्रन्थि
Infiltration—अन्तःसंचरण
Influx—अन्तःप्रवेश
Informality—अनौपचारिकता
In-group—अन्तःसमूह
Insensate—निष्क्रिय
Institutional—संस्थागत
Instrumental—साधनस्वरूप
Interaction—अन्तःक्रिया
Interdependence—अन्योन्याश्रितत
Interrelated—अन्तःसंबंधित
Interstitials—अन्तरालीय
Invasion—आक्रमण
Involuntary—अनैच्छिक

J

Jangling—कोलाहलमय
Jurisdiction—क्षेत्राधिकार

L

Laissez faire—अहस्तक्षेप नीति
Loan—ऋण
Local Body—स्थानीय निकाय
Location—स्थिति
Loop—केन्द्र-बिन्दु

M

Mass Concentration—सामूहिक संकेन्द्रीयता
Mayor—महापौर
Mechanized Workshop—यांत्रिक कारखाना
Metal Age—धातु-युग
Metropolis—महानगर
Migrant—प्रवासी
Migration—विस्थापन
Mine—खान
Mobility—गतिशीलता
Modernization—आधुनिकीकरण
Motion Picture House—वृत-चित्र गृह

Multi-functional—बहु-क्रियात्मक

N

National Urban League—राष्ट्रीय नगरीय संघ
Neighbourhood Unit—पड़ोसी इकाई
Neolithic Revolution—पाषाण-युगीन क्रांति
Nervous Tension—स्नायुविक तनाव
Non-residential—गैर-आवासीय
Norms—आदर्श
Novgorod—नया शहर
Nuclear Family—एकाकी परिवार
Nucleus—न्यष्टि
Nurseries—शिशु-शालाएँ

O

Occupation—व्यवसाय
Open Class Society—मुक्त वर्ग समाज
Organisation—संघटन
Oriental World—प्राचीन विश्व
Out group—वाह्य-समूह
Over Simplification—अति सरलीकरण

P

Paleotechnic—पुराप्रविधि
—Period—पुराप्रविधि काल
—Drama—पुराप्रविधि नाटक
Patriarchal Family—पितृसत्ताक परिवार
Pattern—प्रतिमान
Personnel—कर्मिक
Physical Planning—भौतिक नियोजन
Piston—पिस्टन
Planning—नियोजन
—Commission—योजना आयोग
Polar—ध्रुवीय
Population—जनसंख्या
Potential—संभाव्य
Power Loom—करघा मशीन
Prefabricated—पूर्वनिर्मित
Preference—वरीयता
Prejudice—पूर्वाग्रह
Prizefighter—घूँसेबाज
Public Office—सार्वजनिक दफ्तर

R

Racial—प्रजातीय
Radial—गोलार्द्ध ; अर्द्धव्यासवत्
Recreation Centre—मनोरंजन केन्द्र
Rectangular—चतुर्भुजी
—Block—चतुर्भुजी आवास
Regional—क्षेत्रीय
Rehabilitation—पुनर्वासन
Replacement—पुनर्स्थापन
Residential City—आवासीय नगर
—Zone—आवासीय क्षेत्र

S

Satellite City—सीमान्त बस्ती
Secondary Relation—द्वैतीयक संबंध
Sector Theory—वृत्तखण्ड सिद्धांत
Segregation—पृथकत्व
Self-expression—आत्माभिव्यक्ति
Shower—कौआस ; फौव्वारा
Showy—दिखावटी
Silk Industry—रेशम उद्योग
Social Ecology—सामाजिक परिस्थितिशास्त्र
—Planning—सामाजिक नियोजन
Spatial—भूमिगत
—Order—भूमिगत क्रम
—Pattern—भूमिगत प्रतिमान
Specialisation—विशेषीकरण
Spinning—कताई कार्य
Standard—मानक ; स्तर

—Garden Town—मानक गार्डेन शहर
Standardised—मानकित
Standardised Influence—मानकीकृत प्रभाव
Static—स्थिर
Status—प्रस्थिति
State of Anomie—आदर्शशून्य स्थिति
Status Value—स्तर मूल्य
Statistical—सांख्यिकीय
Strata—संस्तरण
Stringlike—पंक्तिबद्ध
Structure—संरचना
Suburb—उपनगर
Sub-Division—उपखण्ड ; प्राखण्ड
Subjective—प्रातीतिक ; आत्मगत
—Motivation—आत्मगत प्रेरणा
Sublimated—उदात्त
Succesion—उत्तराधिकार
Superficiality—अल्पज्ञता
Successor—उत्तराधिकारी
Swimming Pool—तरण ताल
Synthesis—संश्लेषण

T

Technological Revolution—प्रौद्योगिक क्रांति
Tense—उत्तेजनायुक्त
Textile Industry—वस्त्रोद्योग
Theologian—धर्मशास्त्री
Town—शहर
—Planner—नगर नियोजक
Traditionalism—परम्परावाद
Transiency—अस्थायित्व
Transportation—आवागमन ; परिवहन
Triangular—त्रिकोणात्मक
Turnover—श्रमिकावर्त्त

U

Undeveloped—अविकसित
Uneconomic—अनार्थिक
Unit—इकाई
Universal—विश्वजनीन
—Pattern—विश्वजनीन प्रतिमान
Urban—नगरीय
—Rehabilitation—नगरीय पुनर्वासन
Urbanism—नागरीवाद
Urbanised—नागरीकृत
Urbanisation—नागरीकरण

V

Variation—भिन्नता
Voluntary—ऐच्छिक

W & Z

Weaver—जुलाहा
Working People—कार्यकारी जनसंख्या
Zone in Transition—संक्रमणकालीन क्षेत्र
Zoning—क्षेत्रीकरण

(ख) पारिभाषिक शब्दावली

अ

अति सरलीकरण—Over Simplification
अपकेन्द्रीय—Centrifugal
अभिकेन्द्रीय—Centripetal
अभियंता—Engineer
अभिवृत्ति—Attitude
अभिकरण—Agency
अमूर्त्त—Abstract
अनुक्रमण—Succession
अनैच्छिक—Involuntary
अनौपचारिक—Informal
अनार्थिक—Uneconomic
अन्तःसमूह—In group
अन्तःसंचरण—Infiltration
अन्तःसंबंधित—Interrelated
अन्तःक्रिया—Interaction
अन्तःप्रवेश—Influx
अन्तरालीय—Interstitial
अन्तर्देशीय—Inland
अन्योन्याश्रितता—Interdependence
अर्द्धव्यासवत—Radial
अल्पज्ञता—Superficiality
अवैयक्तिक—Impersonal
अविकसित—Undeveloped
अवधारणात्मक—Conceptual

आ

आँकड़े—Datas
आदर्श—Norms
आदर्श प्रकार—Ideal Type
आदर्श शून्यता—Anomie
आत्मगत प्रेरणा—Subjective Motivation
आत्माभिव्यक्ति—Self-expression
आभिजात्य वर्ग—Elite
आधुनिकीकरण—Modernization
आयुक्त—Commissiner
आवासीय क्षेत्र—Residential Area
आवागमन—Transportation
आवास—Housing
आप्रवासी—Immigrant
आक्रमण—Invasion
औद्योगीकरण—Industrialisation
औपचारिक—Formal

इ

इकाई—Unit
इस्पात—Steel

उ

उत्तराधिकारी—Successor
उत्तेजनायुक्त—Tense
उदात्त—Sublimated
उपकल्पना—Hypothesis
उपखण्ड—Sub-Division
उपनगर—Suburb

ए

एकाकी परिवार—Nuclear Family
ऐच्छिक—Voluntary

क

कताई कार्य—Spinning
कर्मिक—Personnel
करघा मशीन—Power Loom
कार्यकारी जनसंख्या—Working People
केन्द्र-बिन्दु—Loop
कोलाहलमय—Jangling

ग

गतिशीलता—Mobility
गन्दी बस्तियाँ—Slums

गुमनामता—Anonymity
गोलार्द्ध—Radial
गृह-नीति—Domestic Policy

घ-च

घनत्व—Density
चित्रकार—Designer

ज

जनसंख्या—Population
जनसंख्यात्मक—Demographic
जातीय—Ethnic
जीर्ण-शीर्ण क्षेत्र—Blighted Area
जुलाहा—Weaver
जैविक—Biological

त

तरल—Fluid
तरण ताल—Swimming Pool

द

दरार—Hiatus
दस्तकारी—Handicraft
दिखावटी—Showy
द्रुतगामी ढरकी—Flying Shuttle
द्वैतीयक संबंध—Secondary Relation
देशनांक—Indices

ध

धर्मशास्त्रीय—Theologian
धातु-युग—Metal Age
ध्रुवीय—Polar

न

नक्शा—Chart
नगर—City
—राज्य—City State
—नियोजक—Town Planner
—नियोजन—City Planning
नगरीय—Urban
—पुनर्वासन—Urban Rehabilitation
नया शहर—Novgorod
न्यष्टि—Nucleus
नागरिक—Burgher
नागरीकरण—Urbanisation
नागरीकृत—Urbanised
निर्द्वन्द सामंजस्य—Harmonious Balance
निर्धारक तत्त्व—Determinant
नियंत्रण—Control
निष्क्रिय—Insensate

प

परिपूर्णता—Complementarity
परिस्थितिक प्रतिमान—Ecological Pattern
पंक्तिबद्ध—Stringlike
पर्यावरण—Environment
परम्परावाद—Traditionalism
प्रकार्य—Function
प्रतिमान—Pattern
प्रतिस्पर्धा—Competition
प्रविधि—Technique
प्रवासी—Migrant
प्रजातीय—Racial
प्रस्थिति—Status
पृथक्करण—Segregation
प्रातीतिक—Subjective
पारमाणविक युग—Atomic Age
पाषाणयुगीन क्रांति—Neolithic Revolution
पिस्टन—Piston
पितृसत्ताक परिवार—Patriarchal Family
पुनर्वासन—Rehabilitation
पुनर्स्थापन—Replacement
पुराप्रविधि काल—Paleotechnic Period
पूर्वाग्रह—Prejudice
प्रौद्योगिक क्रांति—Technological Revolution

ब

बहिर्गमन—Exodus
बहिर्मुख—Extrovert
बहुक्रियात्मक—Multi-functional
बहुन्यष्टि—Multinucleation

भ

भग्नाशा—Frustration
भिन्नता—Variety ; Heterogeneity
भूमिगत—Spatial
—क्रम—Spatial Order
—प्रतिमान—Spatial Pattern

म

मनोरंजन केन्द्र—Recreation Centre
मानक—Standard
—गार्डेन शहर—Standard Garden Town
मानकित—Standardised
मानकीकृत प्रभाव—Standardised Influence
मापदण्ड—Criteria
मुक्त-वर्ग समाज—Open Class Society
मूल्यांकन—Evaluation

य-र

यांत्रिक कारखाना—Mechanical Workshop
राजधानी—Capital
राष्ट्रमंडल—Commonwealth
रेशम-उद्योग—Silk Industry

व

वर्ग संरचना—Class Structure
वर्जना—Taboo
वर्तुल—Circle
वरीयता—Preference
वस्त्रोद्योग—Textile Industry
वृत्तखण्ड सिद्धांत—Sector Theory
वृत्त-चित्र गृह—Motion Picture House
वृहत स्तरीय उद्योग—Large Scale Industry
वृहत अभियंत्रण निगम—Heavy Engineering Corporation
व्यक्तिवाद—Individualism
व्यापार केन्द्र—Business Centre
व्यवसाय—Occupation
वाह्य समूह—Out Group
विकासोन्मुख—Developing
विघटन—Disorganisation
विजातीय—Heterogeneous
विरचित—Formulated
विशेषीकरण—Specialisation
विस्थापन—Migration ; Displacement
विवाह-विच्छेद—Divorce
वैचारिकी—Ideology
वैभिन्न्य—Difference
वैज्ञानिक गवेषणा—Empirical Research

स

सजातीयता—Homogeneity
सजातीय प्रस्थिति—Homogeneous Status
सस्तापन—Cheapness
सहसंबंध—Correlation
सहायक चीजें—Accessories
संभाव्य—Potential
संघनन कक्ष—Condensing Chamber
संकेन्द्रिय मंडल—Concentric Zone
संक्रमणकालीन क्षेत्र—Zone in Transition
संकेन्द्रिय वृत्त—Concentric Cricle
संगठन—Organisation
संवाद प्रेषण—Communication

संश्लेषण—Synthesis
संस्थागत—Institutional
संस्तरण—Stratification
संरचना—Structure
सांख्यिकीय—Statistical
सामग्री—Data
सामन्त युग—Feudal Age
सामाजिक परिस्थितिकशास्त्र—Social Ecology
साधनस्वरूप—Instrumental
सार्वजनिक दफ्तर—Public Office
सामूहिक संकेन्द्रियता—Mass-concentration
सीमान्त बस्ती—Satellite City
स्तर मूल्य—Status Value
स्थानीय निकाय—Local Body
स्थिर—Static
स्थिति—Location
स्नायुविक तनाव—Nervous Tension
स्वैच्छिक प्रकृति—Despotic Impulse
श्रमिकावर्त्त—Turnover

ह-क्ष-त्र

हीनता-ग्रन्थि—Inferiority Complex
क्षेत्रीय—Regional
क्षेत्रीय नियम—Zoning Law
क्षेत्रीकरण—Zoning
त्रिकोणात्मक—Triangular

—ooo—

नामानुक्रमणिका

—००:००—

विषयानुक्रमणिका